MAED-505 (Semester-II)

शिक्षा के दार्शनिक एव समाजशास्त्रीय आधार

Philosophical and Sociological Bases of Education

performed in terms of
a knowledge base
knowledge

शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

अध्ययन बोर्ड			
प्रोफेसर जे0के0 जोशी निदेशक शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	प्रोफेसर के०बी०बुधोरी (सदस्य) शिक्षा संकाय एच०एन०बी०विश्वविद्यालय श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड	प्रोफेसर बी०आर० कुकरेती (सदस्य) शिक्षा संकाय एम० जे० पी० रोहिलखंड, विश्वविद्यालय बरेली, उत्तरप्रदेश	प्रोफेसर रम्भा जोशी शिक्षा संकाय कुमाऊँ विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा
डॉ0 दिनेश कुमार सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 प्रवीण कुमार तिवारी सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	सुश्री ममता कुमारी सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 कल्पना पाटनी लखेड़ा सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
श्रीमती मनीषा पंत परमर्शदाता उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्री सिद्धार्थ पोखरियाल संविदा शिक्षक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड		
पाठ्यक्रम संयोजक एवं संपादक			
डा० दिनेश कुमार शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड			
इकाई लेखन	**इकाई संख्या:**	**इकाई लेखन**	**इकाई संख्या:**
डा० दिनेश कुमार **सहायक आचार्य** शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	14, 16, 18,21,22,23,24,25.	सुश्री ममता कुमारी सहायक प्राध्यापक शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	15,17,19
डा० रजनी रंजन सिंह सहायक प्राध्यापक शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	20	श्री सिद्धार्थ कुमार पोखरियाल अकादमिक परामर्शदाता शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखंड	26

ISBN-13 -978-93-84632-44-1

समस्त लेखों/पाठों से सम्बंधित किसी भी विवाद के लिए सम्बंधित लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कापीराइट: उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय प्रकाशन वर्ष: जुलाई 2012, पुनः मुद्रण 2020
संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशक: निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139, (नैनीताल)

शिक्षा के दार्शनिक एव समाजशास्त्रीय आधार

Philosophical and Sociological Bases of Education

MAED 505 (Semester II)

इकाई सं०	इकाई का नाम	पृष्ठ सं०
14.	रवीन्द्रनाथ टैगोर (Rabindranath Tagore)	1-18
15.	श्री अरविन्द (Sri Aurobindo)	19-33
16.	स्वामी विवेकानन्द (Swami Vivekananda.	34-52
17.	रूसो (Rousseau)	53-70
18.	प्लेटो (Plato)	71-88
19.	जॉन डीवी (John Dewey)	89-106
20.	ज्याँ पाल सार्त्र (Jean Paul Sartre)	107-120
21.	समाजशास्त्र का अर्थ, शिक्षा और समाज मे आपसी सम्बन्ध, शैक्षिक समाजशास्त्रर का अर्थ, प्रकृति और क्षेत्र (Sociology – Its Meaning, Relationship between Education and Society, Educational Sociology - Meaning nature and Scope)	121-135
22.	शिक्षा और समाज, शिक्षा एक सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक उन्नति और सुधार (Education and Society, Education as a Social System ,Role of social progress and modification)	136-154
23.	सामाजिक परिवर्तन के मुख्य प्रभावकारी कारक (Major Factor affecting the Process of Social Change)	155-172
24.	शैक्षिक समानता के अवसर व शिक्षा में उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे, गुणात्मक, परिमाणात्मक व समता सम्बन्धी शैक्षिक पहलू (Issues of Equality of Educational Opportunity and Excellence in Education, Quality, Quantity and Equity related aspects of Education)	173-191
25.	शिक्षा और लोकतंत्र, शिक्षा के संवैधानिक प्रावधान, राष्ट्रीयता और शिक्षा, उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीकरण, व सूचना और संचार तकनीक के युग में शिक्षा (Education and Democracy, Constitutional Provisions for	192-204

	Education, Nationalism and Education, Education in the Era of Liberalization, Privatization and Globalization (LPG) & Information and Communication Technology)	
26.	राष्ट्रीय ज्ञान आयोग एवं उच्च और मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा हेतु सुझाव (National Knowledge Commission and Suggestions for Higher & Open and Distance Education)	205-217

इकाई 14 : रवीन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन (Education Philosophy of Rabindranath Tagore)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)
14.2 उद्देश्य (Objectives)
भाग-एक Part I
14.3 टैगोर का शिक्षा दर्शन (Education Philosophy of Tagore)
14.3.1 टैगोर का जीवन परिचय एवं शिक्षा (Tagore's Life and Education)
14.3.2 टैगोर का का व्यावहारिक जीवन एवं गतिविधियां (Practical Life and Activities of Tagore)
14.3.3 आत्मशिक्षा के सिद्धान्त (Principles of Self Education)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-दो Part II
14.4 रवीन्द्रनाथ टैगोर का विश्वबोध दर्शन (The Philosophy of International Understanding of Ravindernath Tagore)
14.4.1 टैगोर के जीवन दर्शन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का संश्लेषण (Synthesis of Various Philosophical View in the Philosophy of Life of Tagore)
14.4.2 शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education)
14.4.3 पाठ्यक्रम (Curriculum)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-तीन Part III
14.5 शिक्षण पद्धति (Method of Teaching)
14.5.1 अनुशासन (Discipline)
14.5.2 टैगोर के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन व योगदान (Estimation of Contribution of Tagore's Philosophy of Education)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

14.6 सारांश (Summary)
14.7 शब्दावली/कठिन शब्द (Difficult Words)
14.8 अभ्यास प्रश्नो के उत्तर (Answer of Practice Questions)
14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)
14.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Books)
14.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय शिक्षा शास्त्रियों में रवीन्द्रनाथ टैगोर का अपना द्वितीय स्थान है। डॉ. एस. सिन्हा के अनुसार- रवीन्द्रनाथ टैगोर का जीवन आधुनिक भारत के पूरे युग में फैला हुआ है। उनके व्यक्तिव विकास मे नव जागरण की मुख्य बाते पायी जाती है। उनके सामाजिक दर्शन का सही ज्ञान भारतीय लोगों में नूतन इतिहास का पर्याप्त ज्ञान का समावेश करता है। बड़े भारतीय जन-समूह की निरक्षरता पश्चिम के लोगों के साथ बहुत ही विशेष प्रकट करती है। शिक्षा के द्वारा निरक्षरता का निवारण उनके जीवन की एक प्रबल इच्छा बनी।

इस प्रकार के अद्वितीय व्यक्तित्व के कारण टैगोर अपने को एक महान कवि, साहित्यकार, समाज सुधारक और दार्शनिक के रूप में सीमित न रख सके बल्कि अपने महान विचारों के कारण भारत की जनता को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने के लिए एक महान शिक्षा शास्त्री, शिक्षा विशेषज्ञ और शिक्षक के रूप में हमारे लिए वरदान सिद्ध हुए।

14.2 उद्देश्य (Objectives)

1. रवीन्द्रनाथ टैगोर की शिक्षा दर्शन का अध्ययन।
2. टैगोर के आत्मशिक्षा के सिद्धान्त का अध्ययन।
3. रवीन्द्रनाथ टैगोर के विश्वबोध दर्शन का अध्ययन
4. टैगोर के जीवन दर्शन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का संश्लेषण का ज्ञान।
5. रवीन्द्रनाथ टैगोर की शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण पद्धति, अनुशासन का ज्ञान।
6. टैगोर का शिक्षा दर्शन में योगदान।

भाग-एक Part I

14.3 टैगोर का शिक्षा दर्शन (Tagore's Philosophy of Education)

टैगोर के शिक्षा दर्शन का विकास (Tagore's Development of Philosophy Education)

टैगोर ने अपने जीवन दर्शन के विकास के साथ-साथ शिक्षा दर्शन का भी विकास किया। अतः उनके जीवन दर्शन के विकास में जिन तत्वों का प्रभाव पड़ा उन्हीं तत्वों का प्रभाव उनके शिक्षा दर्शन के विकास में भी पड़ा। टैगोर के शिक्षा दर्शन के निर्माण पर उनके परिवार का विशेष प्रभाव पड़ा जो कि सभी प्रकार के प्रगतिशील विचारों एवं कार्यो और विभिन्न राजनैतिक, सामाजिक, तथा सांस्कृतिक, धार्मिक आन्दोलनों का केन्द्र था।

श्री एस.सी. सरकार ने इस तथ्य की खोज करते हुए लिखा है- उन्होंने स्वयं ही शिक्षा के उन सभी सिद्धान्तों की खोज की, जिनका आगे चलकर उन्हें अपने लिए प्रतिपादन करना था। इसके अतिरिक्त टैगोर ने अपनी तीव्र बुद्धि द्वारा प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञानों का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया था, जिनका कि उनके शिक्षा दर्शन के निर्माण में पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इस प्रकार टैगोर के विकास में अनेक महत्वपूर्ण बातों का प्रभाव पड़ा।

14.3.1 टैगोर का जीवन-परिचय एवं शिक्षा (Tagore's Life and Education)

टैगोर का जन्म एवं शिक्षा

जीवन वर्णन (Birth Sketch)

रवीन्द्रनाथ टैगोर का जन्म बंगाल के ख्यातिप्राप्त, सुसभ्य, सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत परिवार में सन् 1861 में कलकत्ता में हुआ था। उनके पिता का नाम महर्षि देवेन्द्र नाथ टैगोर था। उस समय उनका परिवार अपनी समृद्ध, कला एवं संगीत के लिए सारे बंगाल में प्रसिद्ध था। टैगोर को अपने माता-पिता से विद्वता, देशभक्ति, धर्मप्रियता, साधुता आदि गुण उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुए हैं। इनके पिता इन्हें एक साथ गायक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, डॉक्टर, साहित्यिक सभी कुछ बना देना चाहते थे। इनका जीवन नौकरों के संरक्षण में व्यतीत हुआ, जो इन्हें घर की चार-दीवारी में रखते थे, जिसके कारण उनमें प्रकृति के प्रति प्रेम जागृत हो गया।

शिक्षा (Education)

प्रारम्भ से ही स्कूलों में गलत शिक्षा पद्धति व अध्यापक के तानाशाही व्यवहार के कारण ये स्कूल में न पढ़ सके। घर पर ही बड़े भाई देवेन्द्रनाथ टैगोर व अन्य शिक्षकों की देख-रेख में उन्होंने अंग्रेजी, संगीत, साहित्य, कुश्ती-व्यायाम, इतिहास, भूगोल, गणित आदि की शिक्षा प्राप्त की।

इसके अतिरिक्त टैगोर का परिवार स्वयं समाज के सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक एवं राष्ट्रीय कार्य का एक केन्द्र था, जिसका बालक टैगोर के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा और उसमें राष्ट्रीय भावना का बीज बो दिया गया। इस प्रकार सोलह वर्ष तक अस्त-व्यस्त ढंग से शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त सन् 1869 में टैगोर उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु इंग्लैण्ड गये। वहां से विचार परिवर्तन करने के कारण लंदन चले गये किन्तु वहां किसी विद्यालय में प्रवेश नहीं लिया और घर वापस आ गये। लेकिन कुशाग्र बुद्धि तथा भावुक हृदय होने के कारण टैगोर ने अपनी जन्मजात प्रतिभा को और अधिक विकसित कर लिया।

14.3.2 टैगोर का व्यावहारिक जीवन एवं गतिविधियां

(Practical Life and Activities of Tagore)

सन् 1881 में जब वे इंगलैण्ड से स्वदेश लौटे तो उनका व्यावहारिक जीवन और भी अधिक व्यावहारिक हो गया। उन्होंने सर्वप्रथम भारत लौटकर सामाजिक, जातीय एवं राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर लेखक के रूप में अपना व्यावहारिक जीवन प्रारम्भ किया। शुरू में वे सन् 1881 तक मासिक पत्रिका 'भारती' में तथा इसके बाद सन् 1891 से 1894 ई. तक 'साधना' नामक पत्रिका में अपने लेख देते रहे। 'गीतांजली' उनके सबसे प्रमुख रचना थी, जिस पर उन्हें नोबल पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। अपने विचारों का प्रसार करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य 'शान्ति निकेतन' की स्थापना सन् 1901 में की, जिसे आज हम 'विश्व भारती विश्वविद्यालय' के नाम से संबोधित करते हैं।

शान्ति निकेतन में उन्होंने घरेलू उद्योग, ग्राम स्वायत्त शासन, सहकारिता, प्रारंभिक एवं प्रौढ़ शिक्षा का विकास, ग्रामोद्धार, कृषि विश्वविद्यालय, प्रयोगशाला, पुस्तकालय आदि के लिए आध्यात्मिक अनुभूति की ओर कदम बढ़ाये। सन् 1912 से 1916 तक उन्होंने विश्व भ्रमण किया और सर्वत्र विश्व शान्ति एकता एवं मातृत्व का संदेश दिया। सन् 1915 में ब्रिटिश सरकार ने 1916 में उन्हें नाइटहुड की उपाधि प्रदान की। सन् 1941 में इनकी मृत्यु हो गयी।

14.3.3 आत्म-शिक्षा के सिद्धान्त

आत्म-शिक्षा आत्म-साक्षात्कार पर आधारित है। आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया शिक्षा की प्रक्रिया के समान आजीवन चलती रहती है। इसमें सबसे अधिक आवश्यक यह है कि शिक्षार्थी को स्वयं अपने में विश्वास हो और अपनी बाह्य आत्मा के मूल में अधिक व्यापक वास्तविक आत्मा के अस्तित्व में विश्वास हो। शिक्षा की प्रक्रिया में वे सब क्रियायें सहायक हो सकती हैं जिनमें आनन्द की स्वाभाविक अनुभूति मिलती है। यह आनन्द आत्मा की प्रतिक्रिया है और इसलिए सुख अथवा संतोष मात्र से भिन्न है। रवीन्द्र की आत्म-शिक्षा-व्यवस्था में शिक्षार्थी को निम्नलिखित तीन कार्यात्मक सिद्धान्तों को सीखकर उनका प्रयोग करना होता है।

1. स्वतंत्रता - रवीन्द्र ने अपनी शिक्षा प्रणाली में शिक्षार्थियों को सब प्रकार की स्वतंत्रता दी है। उन्होंने बुद्धि, हृदय, और संकल्प अथवा ज्ञान, भक्ति और कर्म की स्वतंत्रता पर विशेष जोर दिया है। इस स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिए शिक्षार्थी को निष्कामभाव, समानता, समन्वय और संतुलन का अभ्यास करना आवश्यक है। इससे वह सत्य और असत्य, स्वाभाविक और कृत्रिम, प्रासंगिक और अप्रासंगिक, स्थायी और अस्थायी, सार्वभौम और व्यक्तिगत तथा विशाल और संकुचित में अंतर कर सकता है तथा सत्य और स्वाभाविक, प्रासंगिक, शाश्वत, समन्वित और विश्वगत तत्वों को ग्रहण कर सकता है। एक बार यह सामर्थय उत्पन्न होने के बाद शिक्षार्थी स्वयं अपना निर्देशन कर सकता है। वह स्वयं यह जान सकता है कि कौन-कौन से अनुभव और क्रियायें उसके मार्ग में बाधक हैं और कौन से साधक हैं। रवीन्द्र के अनुसार स्वतंत्रता का अर्थ स्वाभाविकता है। दूसरे शब्दों में, जब बुद्धि, भावना और संकल्प स्वाभाविक रूप से विस्तृत हों तो उसे स्वतंत्रता की स्थिति कहा जा सकता है। इस प्रकार स्वतंत्रता अनियंत्रण से भिन्न है। वह आत्म-नियंत्रण है। वह 'स्व' के अनुसार आचरण करना है। इस प्रकार की स्वतंत्रता एक बार प्राप्त हो जाने पर फिर मार्ग-भ्रष्ट होने का खतरा नहीं रहता, क्योंकि उसकी इंद्रियां, बुद्धि, संवेग, अनुभूतियां और सभी शक्तियां उसके अपने 'स्व' के आदेश पर चलती हैं।

2. पूर्णता - आत्म-शिक्षा का दूसरा कार्यात्मक सिद्धान्त पूर्णता है। इसके अनुसार प्रत्येक शिक्षार्थी को अपने व्यक्तित्व के सभी पहलुओं और अपनी सभी शक्तियों का पूर्ण विकास करना चाहिए। इस दृष्टि से शिक्षा का लक्ष्य व्यावसायिक निपुणता प्राप्त करना, परीक्षा में सफल होना अथवा डिग्रियां लेकर सामाजिक सम्मान प्राप्त करना नहीं है। शिक्षा का एक मात्र लक्ष्य बालक के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है। यह पूर्ण विकास तभी संभव हो सकता है, जबकि व्यक्तित्व के सभी पहलुओं पर समुचित जोर दिया जाए, न किसी पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाए।

3. सार्वभौमिकता - व्यक्ति का विकास तब तक पूर्ण नहीं हो सकता, जब तक कि वह अपने अंदर उपस्थित विश्वात्मा को प्राप्त न कर ले। इसके लिए व्यक्तिगत आत्मा का विश्वात्मा से तादाम्य करना पड़ता है। इस विश्वात्मा के अस्तित्व में आस्था शिक्षा की पहली शर्त है। शिक्षा का उद्देश्य कोरा विकास मात्र न होकर एक नया जन्म है, जिससे व्यक्ति अपने सीमित व्यक्तित्व से ऊपर उठकर विश्वात्मा से एक हो जाता है। इस विश्वात्मा को न केवल व्यक्तिगत जीवन में, बल्कि अपने चारों ओर के प्राकृतिक जीवन में भी खोजा जाता है। यह खोज ज्ञान, भक्ति और कर्म तीनों के ही माध्यम से होती है। एक बार इस विश्वात्मा का साक्षात्कार हो जाने पर फिर इसके निर्देशन में आगे बढ़ना सरल हो जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रवीन्द्र नाथ टैगोर की शिक्षा-प्रणाली में शिक्षा का लक्ष्य स्वतंत्रता, पूर्णता और व्यापकता प्राप्त करना है। शिक्षा की प्रक्रिया के द्वारा शिक्षा एक ऐसे परिवेश का निर्माण

करती है, जिसमें बालक के व्यक्तित्व का उन्मुक्त, पूर्ण और अत्यधिक व्यापक विकास संभव होता है।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र. 1 रवीन्द्रनाथ टैगोर का जन्म किस वर्ष में हुआ था?

प्र. 2 नोबेल पुरस्कार उन्हें किस रचना पर प्राप्त हुआ था?

प्र. 3 शान्ति निकेतन (विश्व भारती) की स्थापना किस वर्ष हुई?

(अ) 1901 (ब) 1902 (स) 1903 (द) 1904

प्र. 4 गुरूदेव के कार्यक्रम किस क्षेत्र पर आधारित है?

भाग-दो Part II

14.4 रवीन्द्रनाथ टैगोर का विश्वबोध–दर्शन : –

रवीन्द्रनाथ टैगोर ने परमात्मा को विश्व की सर्वोच्च शक्ति के रूप में मानकर संसार के समस्त प्राणियों में अद्वैत-भावना का संचार किया। समस्त विश्व को उन्होंने एक दृष्टि से देखा। इन्होंने अपने बचपन में ही वेद और उपनिषद पढ़ डाले थे। उपनिषदों के तत्व ज्ञान का इन पर गहरा प्रभाव पड़ा। मूलतः वे उपनिषदों के पृष्ठपोषक थे, परन्तु इन्होंने उपनिषदीय चिन्तन को मानवीय दृष्टि से देखा-समझा और उसी के अनुरूप उसकी व्याख्या की। इनका विश्वास था कि संसार के समस्त प्राणियों में परमात्मा व्याप्त है। इनके विचार से अपने और संसार के अन्य समस्त प्राणियों में उस परमात्मा की व्याप्ति का अनुभव करने से विश्व के अन्य समस्त प्राणियों में उस परमात्मा की व्याप्ति का अनुभव करने से विश्व के समस्त प्राणियों में एकात्मभाव उत्पन्न हो सकता है और यही आत्मानुभूति का सर्वोत्तम मार्ग है। इनकी इस विचारधारा को विद्वानों ने विश्वबोध दर्शन की संज्ञा दी है।

विश्वबोध दर्शन की तत्व मीमांसा :-

गुरूदेव संसार को ईश्वर के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मानते थे। इसलिए उनके अनुसार ईश्वर द्वारा निर्मित यह जगत उतना ही सत्य है जितना ईश्वर अपने आप में सत्य है। ईश्वर को इन्होंने निराकार और साकार, दोनों ही रूपों में स्वीकार किया है। इनके अनुसार बीज रूप में वह निराकार है और सृष्टि (प्रकृति) के रूप में साकार है। गुरूदेव को प्रकृति के कण-कण में ईश्वर की अनुभूति होती थी। आत्मा को गुरूदेव ने उपनिषदों के आधार पर तीन रूपों में स्वीकार किया है। अपने प्रथम रूप में यह मनुष्यों को आत्मरक्षा में प्रवृत्त करती है, दूसरे रूप में ज्ञान-विज्ञान की खोज और अनन्त ज्ञान की प्राप्ति की ओर प्रवृत्त करती है, और तीसरे रूप में अपने अनन्त रूप को समझने की ओर प्रवृत्त करती है।

गुरूदेव के अनुसार ये तीनों कार्य आत्मा के स्वाभाविक गुण हैं। इसमें आत्मानुभूति को गुरूदेव मनुष्य जीवन का अन्तिम उद्देश्य मानते थे।

विश्वबोध दर्शन की ज्ञान मीमांसा :-

ज्ञान प्राप्ति के साधनों के समंबन्ध में गुरूदेव ने स्पष्ट किया कि आध्यात्मिक तत्वों का ज्ञान सूक्ष्म माध्यमों द्वारा तथा भौतिक वस्तुओं एवं क्रियाओं का ज्ञान भौतिक माध्यमों द्वारा प्राप्त होता है। सूक्ष्म माध्यमों में इन्होंने प्रेम योग के महत्व को स्वीकार किया है। इन्होंने स्पष्ट किया कि आध्यात्मिक तत्व के ज्ञान के लिए सबसे सरल मार्ग प्रेम मार्ग है, प्रेम ही हमें मानव मात्र के प्रति संवेदनशील बनाता है, यही हमें एकात्म भाव की अनुभूति कराता है और यही हमें आत्मानुभूति अथवा ईश्वर की प्राप्ति कराता है। टैगोर अन्य भारतीय दर्शनों की तरह भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों पक्षों को महत्व देते हैं, इस मत का समर्थन करते हुए वे कहते हैं कि जो लोग केवल अविद्या अर्थात् संसार की ही उपासना करते हैं वे तमस् में प्रवेश करते हैं और उससे अधिक अंधकार में वे प्रवेश करते हैं जो केवल ब्रह्म विद्या में ही निरत हैं। अतः टैगोर भौतिक जगत के ज्ञान को उपयोगी ज्ञान और आध्यात्मिक जगत के ज्ञान को विशुद्ध ज्ञान कहते थे। इनकी दृष्टि से संसार की समस्त जड़ वस्तुओं और जीवों में एकात्म भाव ही अंतिम सत्य है और इसकी अनुभूति ही मनुष्य जीवन का अंतिम लक्ष्य है।

विश्वबोध दर्शन की आचार मीमांसा :-

गुरूदेव मानवतावादी व्यक्ति थे। ये मनुष्य को पहले अच्छा मनुष्य बनाने पर बल देते थे, ऐसा मनुष्य जो शरीर से स्वस्थ हो, मन से निर्मल और संवेदनशील हो, समस्त मानव जाति के प्रति उसके हृदय में प्रेम हो और जो प्रकृति के कण-कण से प्रेम करता हो। ये प्रेम को मनुष्य के आचार-विचार का आधार बनाना चाहते थे। इनका तर्क था कि प्रेम ही वह भावना है जो मनुष्य को मनुष्य के प्रति संवेदनशील बनाती है और मनुष्य को मनुष्य की सेवा की ओर प्रवृत्त करती है। इनका विश्वास था कि प्रेम से भौतिक जीवन भी सुखमय बनाया जा सकता है और आध्यात्मिक पूर्णता भी प्राप्त की जा सकती है। यही कारण है कि गुरूदेव के सभी कार्यक्रम-ग्राम सेवा, समाज सेवा, राष्ट्र सेवा और अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध, प्रेम पर ही आधारित रहते थे। इनका तर्क था कि प्रेम के अभाव में मानव सेवा की बात तो दूर मानव सेवा का भाव भी जागृत नहीं हो सकता। मानव सेवा को गुरूदेव ईश्वर सेवा मानते थे।

14.4.1 टैगोर के जीवन दर्शन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का संश्लेषण

(Synthesis of Various Philosophical View in the Philosophy of Life of Tagore)

दार्शनिक सिद्धान्त (Philosophical Principles)

टैगोर के जीवन में विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं के दर्शन हमे होते हैं। जैसे- 1. आदर्शवाद (Idealism), 2. प्रकृतिवाद (Naturalism), 3. यथार्थवाद (Realism), 4. प्रयोजनवाद (Pragmatism)] 5. लोकतंत्रवाद (Democratic)] 6. मानवतावाद (Humanism), 7. विश्ववाद (Universalism)। टैगोर के जीवन दर्शन में पाई जाने वाली इन सभी विचारधाराओं पर संक्षेप में प्रकाश डाल रहे हैं:-

1. आदर्शवाद (Idealism) **:-** अपनी आदर्शवादी भावना से प्रेरित होकर टैगोर ने भौतिकवादी प्रगति के संबंध में खेद प्रकट करते हुए कहा है कि मनुष्य भौतिक वस्तुओं को पाने के लिए व्याकुल है। जिससे कि वह अमर सत्य को पाने में असमर्थ हो गया है। इनका विचार है कि ईश्वर की विश्व में रहकर प्राप्ति की जाती है।

एक दूसरे स्थान पर टैगोर ने कहा है कि प्रत्येक समय के साथ हमें सदैव इस बात का अनुभव होना चाहिए कि हमारी शक्ति में ईश्वर का वास है। हमारे देश पर पश्चिमी सभ्यता का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि वह ईश्वर का त्यागा हुआ देश बन गया। टैगोर का विश्वास है कि हम पुनः आध्यात्मिक संस्कृति एवं जीवन का सृजन कर देते हैं। इसके लिए उन्होंने आत्मा की पूर्ण स्वतंत्रता और उसकी अभिव्यक्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियों पर बल दिया।

2. प्रकृतिवाद (Naturalism):- टैगोर प्रारंभ से ही प्रकृति एवं प्राकृतिक सौन्दर्य के उपासक रहे हैं। वे जब अप्राकृतिक वातावरण से युक्त विद्यालय में गये तो उन्हें उसकी अस्वाभविकता अनुभव हुई और वे उसके विरूद्ध प्रतिक्रियाशील हो उठे और रूसो की भांति पुकार उठे-'प्रकृति की ओर चलो।' अपने प्रकृतिवादी दर्शन में प्रकृति को महान शिक्षक (Great Teacher) माना है। उन्होंने मानव प्रकृति को समझने एवं अपने आपको सामाजीकृत करके आगे बढ़ाने के लिए संदेश दिया है। टैगोर ने प्रकृति को एक ऐसा केन्द्रबिन्दु बताया है जहां पर सभी मनुष्यों की इच्छाएं, आकांक्षाएं एवं अभिलाषाएं एक होती हैं।

इस प्रकार टैगोर ने प्रकृति संबंधी विचारों के आधार पर मानव एकता की ओर संकेत किया है। टैगोर का विचार है कि प्रकृति में आरंभ से परिपूर्ण सादा जीवन होता है, जहां पर अत्यधिक स्थान शुद्ध वायु एवं गम्भीर शान्ति होती है। प्रकृति में मनुष्य आगामी शाश्वत जीवन के लिए पूर्ण विश्वास से रहता है।

3. यथार्थवाद (Realism):- टैगोर ने अपने जीवन में भारतीय यथार्थवाद एवं पाश्चात्य यथार्थवाद के बीच अद्वितीय समन्वय स्थापित किया है। इस समन्वय के आधार पर उन्होंने भारत के लिए एक

ऐसी संस्कृति के विकास के लिए बल दिया है, जिसमें एक ओर नैतिक, चारित्रिक एवं शाश्वत मूल्य एवं सत्यों का समावेश हो। टैगोर ने इस यथार्थवाद को सामने रखते हुए कि भारत एक ग्रामीण देश है और किसी देश की जनता तभी प्रगति कर सकती है जबकि उसे देश में जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए वस्तुओं एवं साधनों का अत्यधिक उत्पादन किया जाये। प्रत्येक ग्राम में ऐसे शिक्षा संस्थान स्थापित किये जायें, जहां पर सामान्य शिक्षा के अतिरिक्त कृषि एवं ग्रामीण उद्योगों का विकास करने के लिए विज्ञान की सहायता ली जाये।

4. प्रयोजनवाद (Pragmatism):- टैगोर एक आदर्शवादी दार्शनिक होते हुए भी उनका प्रयोजनवादी दृष्टिकोण था। उनका यह विचार कि भौतिकवादी आदर्शो का अंधानुकरण न करके उन्हें तभी स्वीकृत किया जाय जबकि उनकी परख कर ली जाए, उनके प्रयोजनवादी दृष्टिकोण की पुष्टि करता है। सुप्रसिद्ध प्रयोजनवादी दार्शनिक श्री डी.वी. की भांति टैगोर भी शिक्षा को जीवन से संबंधित करने के पक्ष में थे। वे शिक्षा एवं शिक्षालयों को समाज व समुदाय से संबंधित रखना चाहते थे। उनका विचार है, ‘शिक्षा का लक्ष्य केवल एक अच्छा क्लर्क या एक तकनीशियन बनाना नहीं है, बल्कि यह तो एक पूर्ण मनुष्यत्व के अनुभव को पूर्णता द्वारा विकसित करना है।’

5. लोकतंत्रवाद (Democratic) :- टैगोर के दार्शनिक विचारों में लोकतंत्रवाद की भी एक झलक मिलती है। वे जमींदार होते हुए भी जनता के प्रति भ्रातृत्व भाव भी रखते थे, और उनकी स्वतंत्रता पर बल देते थे। टैगोर ने बताया कि एक देश की सुख-सम्पन्नता जन-साधारण की शिक्षा पर निर्भर करती है। टैगोर इस बात को अच्छी तरह समझते थे कि जब तक जन-साधारण के लिए शिक्षा की व्यवस्था नहीं की जाती तब तक भारत में जनतंत्र की कल्पना करना निरर्थक है। अतः टैगोर ने सार्वाभौमिक शिक्षा एवं जन-साधारण की शिक्षा के लिए मांग की। इसके लिए स्वयं प्रयास भी किये। टैगोर ने लोकतंत्रीय समाज की स्थापना करने के लिए ग्रामोद्धार की योजना पर सबसे पहले विचार प्रस्तुत किये। इसलिए यह कहा जाता है कि आधुनिक भारत में सामुदायिक विकास आन्दोलन एवं सर्वोदय आन्दोलन की प्रेरणा टैगोर से प्राप्त हुई। टैगोर भारत में केवल राजनैतिक दृष्टि से ही लोकतंत्र की स्थापना नहीं करना चाहते थे, बल्कि वे आर्थिक, शैक्षिक एवं सामाजिकता से भी सच्चे लोकतंत्र की स्थापना पर बल देते थे। अतः टैगोर का जीवन-दर्शन मानवतावाद का पुष्ट पोषक है।

6. मानवतावाद (Humanism):- टैगोर के जीवन-दर्शन में मानवतावाद की अत्यधिक झलक मिलती है। उनके लेख मानवतावादी विचारों से ओत-प्रोत हैं। टैगोर के मानवतावाद की एक अन्य उल्लेखनीय प्रवृत्ति सामान्य एवं सरल मानव जीवन के आनन्द की खोज है। अपनी इस धारणा के परिणामस्वरूप टैगोर ने अपनी कविता ‘कवि कलम’ में लिखा हैः-‘मैं तो मानवतावाद के हृदय में वास करने का अत्यंत इच्छुक हूँ।’ अपनी इस इच्छा की पूर्ति करने के लिए टैगोर ने लोक-शिक्षा की योजना तैयार की और इसके लिए विभिन्न केन्द्र स्थापित किये, ताकि बहुत से स्त्री-पुरूष मानवीकृत किये जा सकें। टैगोर ने कहा मानवता के सार्वभौमिक हृदय एवं अन्तर में ईश्वर का वास है।

7. विश्ववाद (Universalism) :- टैगोर भारतीय दर्शन, विशेषकर औपनिषदीप दर्शन से प्रभावित होकर विश्ववाद की तरफ भी उन्मुख हुए। उन्होंने सृष्टि की समस्त वस्तुओं को विश्ववाद एवं मानवतावादी दृष्टिकोण से देखना शुरू किया। टैगोर ने अपने विश्ववाद को सभ्यताओं के एकीकरण के रूप में व्यक्त किया है। अपनी विश्ववाद की इस धारणा के आधार पर टैगोर ने विश्व भारती की स्थापना की।

14.4.2 शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education)

1. शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास कर उसके व्यक्तित्व का चर्तुमुखी तथा सर्वांगीण विकास करना होना चाहिए।

2. शिक्षा का कार्य केवल बालकों को अच्छा क्लर्क, निपुण किसान, शिल्पी या वैज्ञानिक बना देना नहीं है। बल्कि उन्हें अनुभव की पूर्णता द्वारा पूर्ण मनुष्य के रूप में विकसित करना भी है।

3. बालकों के प्रकृति के घनिष्ट संपर्क में रहकर शिक्षा देने की व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि प्रकृति के साथ घनिष्ट संपर्क स्थापित करने में आनन्द का अनुभव होता है।

4. विद्यार्थियों को नगरों की अनैतिकता, भीड़ और गन्दगी से दूर प्रकृति के शान्त तथा सायेदार एकान्त स्थान में रखना चाहिए।

5. शिक्षा राष्ट्रीय होनी चाहिए एवं उसमें भारत के भूत एवं भविषय का ध्यान रखना चाहिए।

6. भारतीय शिक्षा एवं भारतीय विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में भारतीय दर्शन के प्रमुख विचारों को स्थान दिया जाना चाहिए।

7. सभी विद्यार्थियों को भारतीय विचारधारा एवं भारतीय समाज की पृष्ठभूमि का स्पष्ट रूप से ज्ञान करना चाहिए।

8. प्रत्येक बालक एवं बालिका में संगीत, चित्रकला और अभिनय की योग्यताओं का विधिपूर्वक विकास करना चाहिए।

9. मातृभाषा शिक्षा का माध्यम होना चाहिए, क्योंकि उनके द्वारा ही संपूर्ण राष्ट्र को अच्छे प्रकार से शिक्षित किया जा सकता है।

10. सच्ची शिक्षा बालकों को स्वतंत्र प्रयासों से ही प्राप्त की जानी चाहिए।

11. अनन्त मूल्यों की प्राप्ति विदेशी भाषा से संभव नहीं है। अतः मातृभाषा का प्रयोग करना चाहिए।

12. विद्यार्थियों को पुस्तकों के बजाय प्रत्यक्ष स्रोतों से ज्ञान प्राप्त करने का अवसर देना चाहिए।

13. बालकों को उत्तम भोजन, जिससे मानसिक विकास हो, भोजन प्रदान करना चाहिए।

14. शिक्षण पद्धति का आधार जीवन की वास्तविक बातें तथा प्राकृतिक होनी चाहिए।

15. विद्यार्थियों के सामाजिक आदर्शों, परम्पराओं, प्रथाओं और रीति-रिवाजो को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाना चाहिए।

16. बालकों को इस प्रकार की शिक्षा दी जाय, जो उन्हें आध्यात्मवाद की ओर अग्रसर होने का अवसर प्रदान करे।

17. बालक का जन्म प्रकृति एवं मनुष्य दोनों के संसार में होता है। अतः दोनों संसार के लिए उनका आकर्षण बनाये रखना चाहिए।

18. शिक्षा द्वारा बालकों में उच्चकोटि की धार्मिक भावना जागृत करनी चाहिए, जिससे उनमें मानवता का कल्याण करने की क्षमता का विकास हो।

14.4.3 पाठ्यक्रम (Curriculum)

टैगोर के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य पूर्ण जीवन की प्राप्ति करने के लिए मनुष्य का पूर्ण विकास करना है। शिक्षा के इस व्यापक उद्देश्य की पूर्ति के लिए टैगोर ने व्यापक तथा विस्तृत पाठ्यक्रम संबंधी विचार प्रस्तुत किये हैं। उनके अनुसार-शिक्षा तभी अपने मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति कर सकती है, जबकि पाठ्यक्रम से मानव जीवन के विभिन्न पक्षों यथा-शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास को स्थान दिया जाय।

टैगोर ने अपने शान्ति निकेतन और बाद में विश्व भारती में विषयों के साथ-साथ विभिन्न क्रियाओं को भी पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। ये विषय, क्रियाएं तथा पाठान्तर क्रियाएं निम्नलिखित हैं:-

अ. विषय (Subject) - इतिहास, भूगोल, विज्ञान, प्रकृति विज्ञान, साहित्य आदि।

ब. क्रियाएं **(Activities) -** बागवानी, भ्रमण, अभिनय, ड्राइंग, क्षेत्रीय अध्ययन, प्रयोगशाला कार्य, अजायब घर के लिए वस्तुओं का संग्रह आदि।

स. पाठान्तर क्रियाएं **(Extra Curricular Activities)** - समाज सेवा, छात्र स्वशासन, खेलकूद आदि।

टैगोर का पाठ्यक्रम विषय प्रधान न होकर क्रिया प्रधान रहा है। डॉ. एल.वी. मुखर्जी ने कहा है कि 'इस दृष्टि से टैगोर की शिक्षा संस्थाओं में लागू किया जाने वाला पाठ्यक्रम क्रिया प्रधान पाठ्यक्रम रहा है।'

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र. 1 ‘प्रकृति की ओर चलो, प्रकृति एक महान शिक्षक है।’ यह कथन है-

(अ) विवेकानन्द (ब) अरविन्दो (स) रवीन्द्रनाथ टैगोर (द) महात्मा गांधी

प्र. 2 रवीन्द्रनाथ टैगोर की ‘कवि कलम’ क्या है?

(अ) कहानी (ब) कविता (स) लेख (द) उपन्यास

प्र. 3 ‘मानवतावाद में मानवता के सार्वभौमिक ह्रदय एवं अंतह में ईश्वर का वास है।’ यह कथन है-

(अ) रूसो (ब) महात्मा गांधी (स) डॉ. भीमराव अंबेडकर (द) रवीन्द्रनाथ टैगोर

प्र. 4 ‘शिक्षा राष्ट्रीय होनी चाहिए एवं उसमें भारत के भूत एवं भविषय का ध्यान रखना चाहिए।’ यह कथन है-

(अ) डॉ. भीमराव अंबेडकर (ब) विवेकानन्द (स) रवीन्द्रनाथ टैगोर (द) अरविन्दो

प्र. 5 ‘विद्यार्थियों को पुस्तकों की बजाय प्रत्यक्ष स्रोतों से ज्ञान प्राप्त करने का अवसर देना चाहिए।’ यह कथन है-

(अ) डॉ. राधाकृष्णन् (ब) रवीन्द्रनाथ टैगोर (स) डॉ. भीमराव अंबेडकर

(द) स्वामी विवेकानन्द

भाग-तीन (Part-III)

14.5 शिक्षण पद्धति (Method of Teaching)

1. शिक्षण विधि वास्तविकताओं पर आधारित होनी चाहिए।

(Education should be based on realities)

टैगोर का विचार है कि शिक्षण विधि जीवन की वास्तविक परिस्थितियों, समाज के वास्तविक जीवन तथा प्रकृति के वास्तविक तथ्यों पर आधारित होनी चाहिए। प्राकृतिक विज्ञानों का अध्ययन प्रकृति का निरीक्षण करके किया जाए। सामाजिक विज्ञानों का अध्ययन सामाजिक समस्याओं, घटनाओं एवं संस्थाओं के निरीक्षण से किया जाये।

2. शिक्षण विधि जीवन से पूर्ण होनी चाहिए। (Method of teaching should be full of life)

शिक्षण पद्धति जीवन से पूर्ण होनी चाहिए। प्रचलित विद्यालय शिक्षा के केन्द्र न होकर शैक्षणिक फैक्ट्रियां होती हैं, जो बालकों के जीवन की आवश्यकताओं, रूचियों तथा अभिवृत्तियों पर ध्यान दिये बिना एक ही सी सामग्री उत्पन्न करती है। अतः इन विद्यालयों में बालकों के पूर्ण जीवन का विकास नहीं हो पाता है। अतः शिक्षण पद्धति बालकों की स्वाभाविक आवश्यकताओं, रूचियों तथा आवेगों के अनुसार होनी चाहिए।

3. स्व-प्रयास एवं स्वचिन्तन द्वारा सीखना (Learning by self efforts and self thinking)

टैगोर का विचार है कि वही ज्ञान स्थाई रूप से बालकों के मस्तिष्क में रह सकता है जो उनके स्वयं के प्रयत्नों तथा चिन्तन से प्राप्त हुआ है।

4. क्रिया द्वारा सीखना (Learning by doing)

टैगोर का विचार था कि मनुष्य मन-शारीरिक प्राणी है। अतः हम शरीर और मस्तिष्क को एक-दूसरे से अलग नहीं रख सकते हैं। मनुष्य जो शारीरिक क्रिया करता है, उसका प्रभाव शरीर और मस्तिष्क दोनों पर पड़ता है। अतः बालकों को क्रिया द्वारा सीखने का अवसर देना चाहिए। शारीरिक क्रिया पर महत्व देने के कारण टैगोर ने बालकों को नृत्य तथा अभिनय सीखने पर बल दिया है।

5. भ्रमण द्वारा सीखना (Learning by walking)

टैगोर का विचार है कि भ्रमण के समय पढ़ना, शिक्षण की सर्वोत्तम विधि है। इसके उन्होंने दो कारण बताए हैं। प्रथम-भ्रमण के समय हमें अनेक वस्तुओं को प्रत्यक्ष रूप से देखकर उनका अध्ययन करने का अवसर प्राप्त होता है। द्वितीय-भ्रमण द्वारा हमारी मानसिक शक्तियां सतर्क रहती हैं, जिसमें हम प्रत्यक्ष की जाने वाली बातों को सरलता से सीख लेते हैं।

6. वाद-विवाद एवं प्रश्नोत्तर विधि (Discussion and question answer method)

टैगोर का विचार है कि वास्तविक शिक्षा पुस्तकों पर आधारित न होकर जीवन एवं समाज पर आधारित होनी चाहिए। इस शिक्षा के लिए उन्होंने वाद-विवाद तथा प्रश्नोत्तर विधि को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनका विचार है कि प्रश्नों के द्वारा बालकों के समक्ष दैनिक जीवन की समस्याओं को रखा जाये। वे सब उन पर वाद-विवाद करें और उनके हल करने के तरीके बताएं।

14.5.1 अनुशासन (Discipline)

अनुशासन का तात्पर्य स्वाभाविक अनुशासन से है। टैगोर ने अनुशासन को एक मूल्य या आदर्श माना है। अतः यह व्यक्ति के नैतिक विकास के लिए अति आवश्यक है। अनुशासन से टैगोर का

तात्पर्य स्वाभाविक अनुशासन (Natural Discipline) से है, जिसे वे आत्म-अनुशासन (Self Discipline) अथवा आन्तरिक अनुशासन (Inter Discipline) भी कहते हैं। टैगोर के अनुसार अनुशासन न तो अंधी आज्ञाकारिता है और न ही वाह्य व्यवस्था।

14.5.2 टैगोर के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन व योगदान

(Estimation of Contribution of Tagore's Philosophy of Education)

टैगोर और उनके शिक्षा दर्शन का शिक्षा के क्षेत्र में अत्यधिक योगदान है, जिसके कारण न केवल भारतीय शिक्षा के इतिहास में बल्कि विश्व की शिक्षा के इतिहास में उनका नाम अमर हो गया। शिक्षा के क्षेत्र में टैगोर का योगदान निम्नलिखित हैः-

1.शिक्षा का व्यापक एवं पूर्ण अर्थ **(**Wider and complete meaning of education)**:-**
टैगोर ने शिक्षा की अवधारणा को विस्तृत एवं पूर्ण रूप प्रदान किया। प्रायः कहा जाता है कि स्पेन्सर ने अपनी पुस्तक शिक्षा में दार्शनिक जीवन की पूर्णता पर विचार प्रकट किये हैं, किन्तु शिक्षा के संबंध में टैगोर ने जो दृष्टिकोण अपनाया है वह स्पेन्सर से कहीं अधिक व्यापक एवं पूर्ण है। टैगोर ने शिक्षा के लिए जो योजना तथा विधान बनाया है, वह भारतीय एवं पश्चिमी दोनों जीवन को छूता है और जिसमें आध्यात्मिक एवं भौतिक दोनों प्रकार के तत्वों का मेल है।

2. भारतीय संस्कृति का विस्तार (Extension of Indian culture) :-

टैगोर ने भारतीय संस्कृति के अध्यापकों के प्रति देश-विदेश के लोगों को आकृष्ट कर उनका विश्व में प्रचार किया। उन्होंने भारतीय संस्कृति के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा की नींव डाली और व्यापक दृष्टिकोण को लेकर पश्चिम को एक ऐसा संदेश दिया, जिसने पूर्व एवं पश्चिम के आदर्शों में समन्वय स्थापित किया।

3. विश्वव्यापी शिक्षा का प्रतिपादन एवं प्रसार (Propagation and diffusion of universal education):-

मानवतावादी भावना पर आधारित विश्व-बंधुत्व एवं विश्व-शान्ति के विचार को साकार रूप प्रदान करने के लिए टैगोर ने सर्वप्रथम विश्वव्यापी शिक्षा का प्रतिपादन एवं प्रसार किया।

4. शिक्षा में प्रकृति को महत्व देना (Giving importance of nature in education):-

रवीन्द्रनाथ टैगोर एक कवि थे। अतः प्रकृति का एवं प्रकृति की भावना उनके अंग-प्रत्यंग में आचार-विचार से भरी हुई है। उन्होंने अपनी प्रकृतिवादी शिक्षा में प्रकृति को सबसे बड़ा शिक्षक माना है।

टैगोर ने अपनी सूक्ष्म एवं भावना प्रधान बुद्धि के द्वारा प्रकृति के सौन्दर्य एवं आनन्द, शक्ति एवं ओज, स्वतंत्रता तथा आत्म-प्रेरणा को देखा।

5. सौन्दर्य के साक्षात्कार की शिक्षा देना (Giving education for the realization of beauty):-

उन्होंने अपनी शिक्षा योजना में सौन्दर्य के साक्षात्कार की शिक्षा देने का सुझाव दिया है। सौन्दर्य बोध हेतु ललित कलाओं जैसे-संगीत, पेंटिंग, नृत्य, अभिनय, कला आदि को शिक्षा में विशेष स्थान दिया। विश्व भारती में कला भवन इस प्रकार की शिक्षा का एक विश्व प्रसिद्ध प्रभाग है।

6. निजी शिक्षा दर्शन एवं सिद्धान्तों की रचना (Construction of own philosophy of education and principles):-

टैगोर उन महान शिक्षा शास्त्रियों में से हैं, जिन्होंने अपना निजी शिक्षा दर्शन तैयार किया है। साथ ही साथ उसके पृथक-पृथक सिद्धान्तों का निर्माण किया है। उन्होंने शिक्षा के विभिन्न अंगों यथा-उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय आदि का जीवन की वास्तविक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर संगठन किया है।

7. नवीन शिक्षा की भूमिका (Introduction of new education)

टैगोर ने अपने शिक्षा दर्शन संबंधी जिन क्रियाओं को बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में प्रस्तुत किया, उन्हें बाद में भारत की शिक्षा हेतु स्वीकार किया गया। सेडलर कमीशन 1917, बेसिक शिक्षा 1937, मुदालियर कमीशन 1952, एवं समाज शिक्षा 1948 में जो विचार हमें मिलते हैं, उनकी भूमिका हमें टैगोर के विचारों में हमें बहुत पहले मिलती है।

8. विश्व भारती की स्थापना (Establishment of Vishva Bharati)

टैगोर ने अपने जीवन दर्शन तथा शिक्षा दर्शन को साकार रूप प्रदान करने के लिए जिस शिक्षा संस्था की स्थापना की, वह आज विश्व भारती के नाम से एक विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय है।

अपनी उन्नति जानिए (Cheque your Progress)

प्र. 1 ‘अनुशासन न तो अंधी आज्ञाकारिता है और न ही वाह्य व्यवथा।’ यह कथन है-

(अ) भीमराव अंबेडकर (ब) डॉ. राधाकृष्णन् (स) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (द) रवीन्द्रनाथ टैगोर

प्र. 2 टैगोर ने किस संस्था की स्थापना की थी?

प्र. 3 विश्व भारती क्या है?

(अ) एक कॉलेज (ब) एक डीम्ड विश्वविद्यालय

(स) एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय (द) एक राज्य विश्वविद्यालय

प्र. 4 1915 में भारत सरकार ने रवीन्द्रनाथ टैगोर को किस सम्मान से सम्मानित किया ?

14.6 सारांश (Summary)

उपरोक्त शब्दों में हमने क्रमशः टैगोर के जीवन दर्शन एवं शिक्षा दर्शन पर प्रकाश डाला, जिससे पता चलता है कि टैगोर केवल एक महान कवि एवं साहित्यकार ही नहीं थे, बल्कि वे एक महान दार्शनिक, शिक्षा शास्त्री तथा समाज सुधारक भी थे। इसलिए उन्हें शिक्षा के इतिहास में अद्वितीय स्थान दिया जाता है।

सुप्रसिद्ध प्रयोजनवादी शिक्षाशास्त्री प्रो. किलपैट्रिक ने लिखा हैं। अपने व्यक्तिगत अध्ययन एवं चिन्तन में अपने निजी विचार में टैगोर ने यहां वहीं उत्तर विचारों का गहन स्थान शिक्षा विषय के संबंध में लिखा है।

डॉ. सुरेन्द्र नाथ ने लिखा है- टैगोर की प्रतिभा संपन्नता अद्वितीय एवं अतुलनीय थी और अन्यत्र कहीं भी यह प्रतिभा परिश्रय से संबंधित नहीं पायी जाती।

महात्मा गांधी ने लिखा है कि टैगोर ने शान्ति निकेतन के रूप में अपनी विरासत पूरे राष्ट्र को वस्तुतः पूरे विश्व को दी है।

कलकत्ता विश्व विद्यालय के सिंडीकेट में टैगोर की महानता के संबंध में लिखा है- 'रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा भारत ने मानव जाति को अपना संदेश दिया और साहित्य दर्शन और शिक्षा तथा कला के क्षेत्रों में उनकी अद्भबुत उपलब्धियों ने उनके लिए अमर यज्ञ प्राप्त किया तथा भारत का पद विश्व की सृष्टि से ऊंचा उठाया। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद एवं सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने टैगोर की महानता या उनके अद्वितीय स्थान पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

14.7 शब्दावली/कठिन शब्द (Difficult Words)

आत्म शिक्षा:- आत्म शिक्षा आत्म साक्षात्कार पर आधारित है। आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया शिक्षा की प्रक्रिया के समान आजीवन चलती रहती है। शिक्षा की प्रक्रिया में वे सब क्रियाएं सहायक हो सकती हैं, जिनमें आनन्द की स्वाभाविक अनुभूति मिलती है।

पूर्णता:- शिक्षा का एक मात्र लक्ष्य बालक के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है। यह पूर्ण विकास तभी संभव है जबकि व्यक्तित्व के सभी पहलुओं पर समुचित जोर दिया जाए, न कि किसी पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाए।

विश्वबोध दर्शन की तत्व मीमांसा:- ईश्वर द्वारा निर्मित यह जगत उतना ही सत्य है, जितना ईश्वर अपने आप में सत्य है। इनके अनुसार बीज रूप में वह निराकार है और सृष्टि रूप में साकार है।

14.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

भाग-एक (Part-I)

उत्तर- 1 1861

उत्तर- 2 गीतांजली

उत्तर- 3 1901

उत्तर- 4 गुरूदेव के सभी कार्यक्रम ग्राम सेवा, समाज सेवा, राष्ट्र सेवा, प्रेम और अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध पर आधारित थे।

भाग-दो (Part-II)

उत्तर- 1 (स) रवीन्द्रनाथ टैगोर

उत्तर- 2 (ब) कविता

उत्तर- 3 (द) रवीन्द्रनाथ टैगोर

उत्तर- 4 (स) रवीन्द्रनाथ टैगोर

उत्तर- 5 (ब) रवीन्द्रनाथ टैगोर

भाग-तीन (Part-III)

उत्तर- 1 (द) रवीन्द्रनाथ टैगोर

उत्तर- 2 विश्व भारती

उत्तर- 3 (स) केन्द्रीय विश्व विद्यालय

उत्तर- 4 नाईट 2

14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)

गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्री*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

सिंह (डॉ.), वी. प्र. (1999) *प्रतिनिधि, राजनीतिक विचारक*, दिल्ली: नवप्रभात प्रिंटिंग प्रेस.

14.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Books)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) स. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षा के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

14.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

प्रश्न-1 रवीन्द्रनाथ टैगोर के जीवन दर्शन के प्रमुख सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।

प्रश्न-2 रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं ?

प्रश्न-3 टैगोर के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कीजिए।

प्रश्न-4 शिक्षा के क्षेत्र में टैगोर के प्रमुख योगदान की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए।

प्रश्न-5 रवीन्द्रनाथ टैगोर के विश्वबोध दर्शन की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न-6 रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षण पद्धति व पाठ्यक्रम की व्याख्या कीजिए

इकाई - 15 : श्री अरविन्द (Sri Aurobindo)

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 श्री अरविन्द के दार्शनिक विचार
    15.3.1 तत्वमीमांसा
    15.3.2 ज्ञानमीमांसा
    15.3.3 मूल्य मीमांसा
15.4 श्री अरविन्द के शैक्षिक विचार
    15.4.1 शिक्षा का प्रत्यय
    15. 4.2 शिक्षा के उद्देश्य
15.5 शिक्षा का पाठ्यक्रम
    15.5.1 शिक्षण विधियाँ
    15.5.2 अनुशासन, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय
    15.5.3 श्री अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन
15.6 सारांश
15.7 शब्दावली
15.8 स्वमूल्याँकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
15.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
15.10 निबंधात्मक प्रश्न

15.1 प्रस्तावना Introduction

श्री अरविन्द अधुनिक भारत के महान ऋषि कहे जाते सकते है, उन्होंने भारत में 'राष्ट्रवादी आन्दोलन' को प्रेरणा प्रदान की, वे भारत में पुनर्जागरण आन्दोलन के सूत्रधार भी माने जाते हैं। अरविन्द ने पूर्वी और पश्चिमी सभ्यताओं का समुचित समन्वय करके और उनके बीच कोई प्रतिद्वन्दता पैदा किये बिना अपना लक्ष्य पूरा कर दिखाया।

श्री अरविन्द एक दार्शनिक के रूप में अधिक प्रसिद्व हैं। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में इनका योगदान अधिक सराहनीय है। इस इकाई में आप श्री अरविन्द के दार्शनिक एंव शैक्षिक विचारों का

अध्ययन करगें तथा आधुनिक शिक्षा प्रणाली में उसकी उपयोगिता के विषय में जान सकेंगें। श्री अरविन्द ने पूर्वी और पश्चिमी दर्शन, धर्म, साहित्य तथा मनोविज्ञान को अपने लेखन में संश्लेषित किया।

15.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः

1.श्री अरविन्द के दार्शनिक विचारों को स्पष्ट कर पायेगें।

2.श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के संप्रत्यय का वर्णन कर सकेंगे।

3.श्री अरविन्द के शैक्षिक विचारों को अपने शब्दों को व्यक्त कर सकेंगे।

4.श्री अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कर सकेंगे।

5.श्री अरविन्द की एकीकृत शिक्षा की विशेषताएँ लिख सकेंगे।

15.3 श्री अरविन्द के दार्शनिक विचार (Philosophical Thoughts of Sri Aurobindo)

श्री अरविन्द का जन्म 15 अगस्त, 1872 मे कोलकता के एक सम्पन्न परिवार में हुआ। उनके पिता, कृष्णघना घोष एक प्रसिद्व डॉक्टर थे तथा पश्चिमी संस्कृति के प्रशंसक थे। वे स्वभाव से बहुत दयालु थे। श्री अरविन्द ऐसे परिवार में जन्में व पले हुये थें।

श्री अरविन्द श्रीमद् भागवत गीता के बहुत बड़े उपासक थें। उन्होंने गीता के ‘कर्म योग, व ध्यान योग का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया। उनके विचार से मानव व दैवीय शक्ति का संश्लेषण योग है। दूसरे शब्दो में योग वह माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य दैवीय शक्ति का अनुभव करता है।

श्री अरविन्द मनुष्य को अपने भीतर के स्व के तत्व का अनुभव कर ब्रहम में आत्मसात हो ज़ाना नहीं सिखाते बल्कि वे समस्त मानवजाति को अज्ञान, अंधकार व मृत्यु से ज्ञान, प्रकाश व अमरत्व की ओर ले जाना चाहते हैं। अतः उनकी विचारधारा सर्वांग योग दर्शन (Sarvang Yoga Darshan) कहलाती है।

15.3.1 श्री अरविन्द के सर्वांग योग दर्शन की तत्वमीमांसा

Metaphysics of Sri Aurobindo's Sarvang Yoga Darshan

श्री अरविन्द के अनुसार ईश्वर इस ब्रह्माण्ड का निर्माता है। उनके अनुसार ईश्वर ने विकास सिद्धांत(Theory of Evolution) के आधार पर जगत का निर्माण किया है। इनके मतानुसार विकास की दो दिशाएँ हैं- अवरोहण(Descent) और आरोहण (Ascent), ब्रह्म अवरोहण द्वारा वस्तु जगत का रूप धारण करता है। उन्होंने अवरोहण के सात सोपान बताये हैं। सत-चित-आनन्द-अतिमानस-मानस-प्राण-द्रव्य।

श्री अरविन्द के अनुसार इस जगत में मनुष्य अपने द्रव्य रूप से आरोहण द्वारा सत की ओर बढ़ता है। उन्होंने आरोहण के भी सात सोपान बताये हैं। द्रव्य-प्राण-मानस-अतिमानस-आनन्द-चित-सत। ब्रह्मा को ये सत और ईश्वर को सत-चित-आनन्द के रूप में स्वीकार करते हैं। अरविन्द ने आत्मा को गीता के पुरूष के रूप में लिया है। उनके विचार से आत्मा में परमात्मा की दो विशेषतायें होती हैं-आनन्द और चित, और ये विभिन्न योनियों से होती हुई मनुष्य योनि में प्रवेश करती है, तथा इस शरीर के माध्यम से सत की ओर बढ़ती है। अरविन्द के अनुसार मानव जीवन का परम उद्देश्य सत+ चित+आनन्द = ईश्वर की प्राप्ति है।

अरविन्द का मानना है कि पदार्थ, द्रव्य का ज्ञान मनुष्य के शारीरिक विकास के लिये आवश्यक है तथा यह ज्ञान ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य के आध्यात्मिक विकास के लिये स्वयं का ज्ञान आवश्यक है जो कि योगिक क्रियाओ द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इन योगिक क्रियाओं के लिये अरविन्द ने शिक्षा की आवश्यकता को समझा।

15.3.2 श्री अरविन्द के सर्वांग योग दर्शन की ज्ञानमीमांसा

Epistemology of Sri Aurobindo's Sarvang Yoga Darshan

श्री अरविन्द के अनुसार भौतिक एंव आध्यात्मिक दोनो तत्वो में मूल तत्व ब्रह्म है। अतः भौतिक तथा आध्यात्मिक तत्वों के मध्य भेद को जानना ही सच्चा ज्ञान है। उपयोगिता के दृष्टिकोण से अरविन्द ने ज्ञान को दो भागों में बाँटा है-

द्रव्यज्ञान (Material Knowledge/Worldly Knowledge)

आत्मज्ञान/ आत्मिक ज्ञान (spiritual Knowledge)

अरविन्द द्रव्य ज्ञान को (संसारिक ज्ञान) साधारण ज्ञान मानते हैं और आत्मिक ज्ञान को उच्च ज्ञान मानते हैं। उनके दृष्टिकोण से पदार्थ जगत (द्रव्य जगत) का ज्ञान, ज्ञानन्द्रियों द्वारा प्राप्त किया जाता है, और आध्यात्मिक तत्व का ज्ञान भीतरी-स्व (अन्तःकरण) द्वारा प्राप्त होता है। आत्मिक तत्व के ज्ञान

के लिये इन्होंने यौगिक क्रियायों (यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, धारणा,ध्यान एंव समाधि) को आवश्यक माना है।

15.3.3 श्री अरविन्द के सर्वांग योग दर्शन की मूल्य मीमांसा

Axiology and Ethics of Sri Aurobindo's Sarvang Yoga Darshan

अरविन्द के अनुसार मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य सत+ चित + आनन्द की प्राप्ति है। इसके लिये उन्होंने गीता के कर्म योग एंव ध्यान योग को साधन बताया हैं जिसमें योगी संसार (कर्म का क्षेत्र) से दूर नहीं भागता बल्कि सत, चित, आनन्द में चित लगाकर निष्काम भाव से अपने कर्तव्य का पालन करता है। ऐसे कर्मयोगी व ध्यानयोगी के लिये आवश्यक है एक स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मन तथा नियंत्रित जीवन और उसके लिये अरविन्द के यौगिक क्रियाओं को महत्व दिया है।

15.4 श्री अरविन्द के शैक्षिक विचार (Educational Thoughts of Sri Aurobindo)

श्री अरविन्द के दार्शनिक के रूप में अधिक प्रसिद्व हैं। परन्तु उन्होंने एक विशेष प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता को समझा। जिससे कि उनके दार्शनिक सिद्वान्तो को मानव जीवन में उतारा जा सके । दूसरी ओर, प्रचलित शिक्षा राष्ट्र के हित के लिये उपयुक्त नहीं थी। इस लिये उन्होंने शिक्षा की राष्ट्रीय योजना प्रस्तुत की, उन्होंने अपनी शिक्षा सबंधी विचार मुख्यतः अपनी दो पुस्तको में व्यक्त किये।

नेशनल सिस्टम ऑफ एजुकेशन, ऑफ ऐजुकेशन

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.श्री अरविन्द के अनुसार इस ब्रह्माण्ड का सृजनकर्ता कौन है?

2.श्री अरविन्द ब्रह्म को किस रूप में स्वीकार करते हैं?

3.श्री अरविन्द आत्मा को किस रूप में स्वीकार करते हैं?

15. 4.1 शिक्षा का प्रत्यय Concept of Education

श्री अरविन्द का मानना था कि मनुष्य ‘मानस‘ की स्थिति में आने के लिये ‘द्रव्य‘ एंव ‘प्राण‘ दो सोपानो को पार करता है। जन्म के पश्चात उसको ‘अतिमानस‘ के चरण में पहुँचना होता है। फिर वहाँ से ‘आनन्द‘, आनन्द से चित, और चित से सत।

यदि हम उसे इस विकास की ओर ले जाना चाहते है। तो हमें ऐसी शिक्षा देनी होगी जिससे कि वह इन सोपानो को जान सके तथा इन चरणों को प्राप्त करने की विधियाँ जान सके। श्री अरविन्द के अनुसार, यह कार्य केवल शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है, वह शिक्षा जो मनुष्य में शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास ला सके। श्री अरविन्द ने इसे ‘एकीकृत शिक्षा’ (Integral Education) कहा। अरविन्द के अनुसार-

“शिक्षा -मानव के मास्तिष्क और आत्मा की शक्तियो का निर्माण करती है। ज्ञान चरित्र और संस्कृति का उत्कर्ष करती है।”

“Education is the building g of the power of human mind and spirit. It is the evoking of Knowledge, character and culture.”

15.4.2 शिक्षा के उद्देश्य Aims of Education

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के दो प्रमुख कार्य है-

मनुष्य को उसके विकास की प्रक्रिया से परिचित कराना।

मनुष्य में सत के सोपान तक पहुँचने की शक्ति का विकास करना।

श्री अरविन्द ने शैक्षिक उद्देश्यों को विकास की प्रक्रिया के क्रम में प्रस्तुत किया है-

1. **शारीरिक विकास (Physical Development)-** इस ब्रह्मण्ड व मनुष्य के विकास का पहला पद द्रव्य (matter) है, श्री अरविन्द मनुष्य को इस द्रव्य जगत, पदार्थ जगत से परिचित कराना चाहते हैं तथा उसे अपनी शरीर की रक्षा तथा विकास से जुडी क्रियाओं मे प्रशिक्षित करना चाहते हैं इसको उन्होने दूसरे शब्दों में शारीरिक विकास का उद्देश्य कहा है। अरविन्द के अनुसार, सत, चित, आनन्द की प्राप्ति, एक स्वस्थ शरीर द्वारा ही सम्भव है, अतः शिक्षा का सर्वोपरि उद्देश्य मानव का शारीरिक विकास है। उनका विश्वास था- “शरीरम् खलू घर्म साधनम्”, अर्थात शरीर के माध्यम से ही धर्म की साधना होती है, अतः उन्होंने बालक के शारीरिक विकास पर ही बल नहीं दिया अपितु इस के अन्तर्गत शारीरिक

शुद्दि को भी सम्मिलित किया और बताया कि शरीर के उचित विकास के बिना मानव का आध्यात्मिक विकास नहीं हो सकता।

2. **प्राणिक विकास (Pranic Development)** - मनुष्य के विकास का दूसरा चरण, प्राण है प्राण से तात्पर्य उस उर्जा से है जिसके कारण ब्रह्मांड में परिवर्तन होते हैं। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य इस प्राण का विकास करना है। उनके अनुसार, मनुष्य के प्राण को सही दिशा निर्देशित करने के लिए, उसका नैतिक व चारित्रिक विकास आवश्यक है तथा उसके आत्मबल को दृढ़ करना भी आवश्यक है। यह विकास तभी सम्भव है जब कि ज्ञानेन्द्रियों को असत् से सत् की ओर पुनः निर्देशित किया जाए। अतः ज्ञानेन्द्रियों का विकास, शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।

3. **मानसिक विकास (Mental Development)**-मानव विकास का तीसरा चरण,मानस अतःमन है। मानस हमारे अस्तित्व का सबसे सक्रिय भाग है। अतः शिक्षा को मनुष्य के मानसिक विकास को प्रभावित करना चाहिये,उनका मत है कि मानसिक शक्तियो के विकास के क्षेत्र में सर्वप्रथम आवश्यकता ध्यान एकाग्र करने की है। मानसिक विकास से उनका तात्पर्य स्मृति, चिन्तन, तर्क, कल्पना तथा निर्णय शक्ति आदि से है। इस सब के विकास को बढ़ाने के लिये उन्होने योगिक क्रियाओं पर बल दिया।

4. **अन्तः करण का विकास (Development of Inner Self)**- अतिमानस व अन्तःकरण मानव विकास का चौथा चरण है, श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य अन्तःकरण का विकास करना है। उनके अनुसार अन्तःकरण के चार स्तर हैं-चित्त (हृदय), मानस बुद्दि एंव आत्मज्ञान,आध्यात्मिक विकास तभी सम्भव है जबकि व्यक्ति का अन्तःकरण शुद्व हो और उसकी आत्मा का पूर्ण विकास हुआ हो, इसके लिये व्यक्ति के शारीरिक विकास को अत्यन्त महत्व प्रदान किया है क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही पवि़त्र आत्मा का निवास हो सकता है। अन्तःकरण के विकास के लिये, श्री अरविन्द ने योगिक विधि को महत्वपूर्ण माना है।

आध्यात्मिक विकास (Spiritual Development) - श्री अरविन्द आदर्शवादी विचारक थे, उन्होंने शिक्षा में आध्यात्मवाद को विशेष रूप से शामिल किया। उनका मानना था कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य आध्यात्मिक विकास करना है। चूँकि प्रत्येक व्यक्ति में ईश्वरीय अंश होता है। अतःशिक्षा का कार्य है इस ईश्वरीय अंश का विकास करना। इसके लिये श्री अरविन्द ने योगिक क्रियाओ को महत्वपूर्ण माना है। श्री अरविन्द के अनुसार, आघ्यात्मिक विकास ही शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

4.श्री अरविन्द ने अपने शिक्षा सबंधी विचार मुख्यतः किन पुस्तको में व्यक्त किये?

5. श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के दो प्रमुख कार्य क्या हैं?

6. श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य क्या है?

7. श्री अरविन्द के अनुसार मनुष्य 'मानस' की स्थिति में आने के लिये किन दो सोपानो को पार करता है?

15.5 शिक्षा का पाठ्यक्रम Curriculum of Education

श्री अरविन्द ने शिक्षा के पाँच उद्देश्य वर्णित किये हैं-शारीरिक, प्राणिक, मानसिक, अन्तःकरण और आध्यात्मिक विकास। उनके विचार से इस सभी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये समग्र रूप से प्रयास करने होंगें और इसके उन्होंने एक विस्तृत एवं एकीकृत पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया है।

भौतिक विकास के लिये उन्होंने पाश्चात्य विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी को आवश्यक माना है। अतः उन्होंने इसे पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया। लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि सबसे महत्वपूर्ण है, हमारी अपनी संस्कृति, जो कि योग की संस्कृति है। और इसके अभाव में हम, विज्ञान एवं औद्योगिकी का दुरूप्रयोग कर सकते है।

श्री अरविन्द बालक की समस्त शक्तियों को विकसित करने के लिये स्वतन्त्र वातावरण के पक्षधर हैं। उन्होंने पाठ्यक्रम में बालक की रूचियों के अनुसार, उन सभी विषयों को सम्मिलित करने का सुझाव दिया जिनमें शैक्षिक अभिव्यक्ति तथा क्रियाशीलता के गुण हों।

श्री अरविन्द ने बालक के पूर्ण विकास हेतु शिक्षा के विभिन्न स्तरो पर पाठ्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया है-

प्राथमिक स्तर (Primary Level)- मातृ भाषा, अग्रंजी फ्रेंच, सामान्य विज्ञान, गणित, सामाजिक अध्ययन, खेल-कूद, व्यायाम, बागवानी, चित्रकला तथा भक्तिगीत।

माध्यमिक स्तर (Secondary Level)- मातृ भाषा, अग्रेजी, फ्रेंच, गणित, भौतिक विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, रसायन विज्ञान, प्राणी विज्ञान, स्वच्छता, भूविज्ञान, सामाजिक अध्ययन, व्यायाम,बागवानी कृषि, चित्रकला, अन्य हस्तशिल्प, ध्यान तथा योग।

विश्वविद्यालय स्तर/उच्च स्तर (University Level/ Higher Level)- अंग्रजी साहित्य, फ्रेंच साहित्य,गणित, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, प्राणी विज्ञान, विज्ञान का इतिहास, सभ्यता का इतिहास, जीव-विज्ञान, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, भारतीय एंव पाश्चात्य् दर्शन, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध तथा विश्व-एकीकरण तथा कृषि।

व्यवसायिक शिक्षा (Vocational education)- शिल्पकारी,चित्रकारी, फोटोग्राफी, सिलाई, कुटीर उद्योग, टंकन, आशु-लिपि, काष्ठ कला, संगीत, सिविल, मैकेनिकल तथा इलैक्ट्रीकल इंजीनियरिंग, अभिनय तथा नृत्य।

15.5.1 शिक्षण विधियाँ (Teaching Methods)

शिक्षण विधियो के विषय में श्री अरविन्द के विचार पूर्णतः स्पष्ट नही है। यह सत्य है कि वे प्राचीन विधियों में नवीनता लाना चाहते थे। उन्होनें उपदेश, व्याख्यान एंव मौखिक विधियों को स्वीकृत किया, परन्तु इस शर्त पर कि बच्चो को रट कर सीखने के लिये बाध्य नहीं किया जायेगा, बल्कि वे अपने स्वयं के प्रयासों द्वारा आत्मसात करके सीखेंगे। प्राथमिक स्तर पर उन्होंने कहानी-कथन विधि की बात कही। उन्होंने पाठ्यपुस्तक विधि का भी समर्थन किया। परन्तु इस सम्बन्ध में उनका मत था कि बालक को स्वंय ज्ञान की खोज करने के लिये प्रेरित करना चाहिये तथा उसके पश्चात उसे पुस्तकें पढ़ने को कहा जाये। बालक रट कर पुस्तकों से ना सीखें, किन्तु उन्हें सहायक तथा सन्दर्भ पुस्तकों की तरह उपयोग करे। उनके विचार से योग सीखने की अधिक उपयुक्त विधि है। किन्तु उनके विचार से स्व-गतिविधि चिंतन एंव तर्क, ये सभी इसके आधार है। उनके शिक्षण से संबन्धित विचारो के विश्लेषण के पश्चात आप निम्नलिखित तथ्यों को जान पायेंगें।

1. बच्चो को पढ़ाते समय, उनके शारीरिक मानसिक क्षमता एंव रूचियों को ध्यान में रखना चाहिये।
2. रटने द्वारा सीखने के स्थान पर समझ कर सीखने पर बल देना चाहिये।
3. बालकों को क्रिया करने के अधिकतम अवसर प्रदान करने चाहिये और स्वानुभव द्वारा सीखने की अनुमति प्रदान करनी चाहियें।
4. बालकों को अपनी ज्ञानेन्द्रियो को नियंत्रित रखने के लिय प्रशिक्षित करना।
5. बालकों के साथ प्यार एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिये।
6. मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम होना चाहिये।

पाठ्यक्रम रोचक हो।

15.5.2 अनुशासन (Discipline), शिक्षक (Teacher), शिक्षार्थी (Student), विद्यालय (School)

अनुशासन (Discipline)

श्री अरविन्द की दृष्टि से स्वेच्छा से कर्तव्य पालन ही अनुशासन है। उनके अनुसार शिक्षा के क्षेत्र में अनुशासन का बहुत महत्व है। उन्होंने अनुशासन को भावनाओं से सम्बन्धित किया और भावनाओं को नैतिकता से संबन्धित किया। उन्होंने शिक्षा में कठोर और दमनात्मक अनुशासन का घोर विरोध किया। वे प्रभावात्मक अनुशासन के समर्थक रहे। उनके अनुसार यह शिक्षक का कर्तव्य है कि वह बच्चो के मन में ऐसे भावों को उत्पन्न करें जिससे कि वे भलाई की ओर बढ़ें, नैतिकता का पालन करें तथा एकाग्र होकर अध्ययन करें। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षक को बालकों के समक्ष आदर्श आचरण प्रस्तुत करना चाहिये, जिससे कि वे भी सही आचरण सीखें व आदर्श नागरिक बने।

शिक्षक (Teacher)

श्री अरविन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक को बच्चों के लिये एक पथ प्रदर्शक एवं सहायक शिक्षक के रूप में स्वीकार किया है। शिक्षक के स्थान के सम्बन्ध में श्री अरविन्द ने स्वयं ही लिखा है-

‘‘शिक्षक निर्देशक अथवा स्वामी नहीं है अपितु वह केवल सहायक तथा पथ-प्रदर्शक है। उसका कार्य सुझाव देना है न कि ज्ञान को थोपना। अरविन्द के अनुसार शिक्षक बालकों को ज्ञान प्रदान नही करता अपितु उनमें ज्ञान को स्वयं उत्पन्न करने कि क्षमता का विकास करने में सहायता करता है।

शिक्षक को चाहिये कि वे बतायें कि ज्ञान कहाँ है और उसे किन साधनो से प्राप्त करना चाहिये शिक्षक का यह कर्तव्य है कि वह अपने छात्रो को ज्ञानेन्द्रियों के सही प्रयोग करने का मार्ग दर्शन करे।

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षक को मानव की आत्मा को आगे बढ़ाना चाहिये अर्थात उसका विकास करना चाहिये यह कार्य उसी व्यक्ति या शिक्षक द्वारा किया जा सकता जिसको कि आध्यात्मिक विषय का स्पष्ट ज्ञान हो और वह योगिक क्रियाओ में प्रशिक्षित हो, श्री अरविन्द शिक्षक को इस रूप में देखना चाहते हैं।

शिक्षार्थी (Student)

श्री अरविन्द शिक्षार्थी को शिक्षा का केन्द्र मानते हैं। उनके अनुसार प्रत्येक बालक निश्चित सामान्य क्षमताओं कुछ विशिष्ट योग्यताओं और प्रतिभाओं के साथ जन्म लेता है। प्रत्येक बालक में व्यक्तिगत क्षमताये तथा विलक्षणतायें होती है। श्री अरविन्द के अनुसार बालकों की क्षमताओं और योग्यताओ के आधार पर उनको शिक्षा प्रदान करनी चाहिये प्रत्येक बालक की व्यक्तिगत रूचियों, अभिवृत्ति एवं योग्यताओ को ध्यान में रखते हुये शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये जिससे उसके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो सके। श्री अरविन्द के अनुसार ज्ञान आत्मा में अन्तर्निहित है और इस

संम्पूर्ण ज्ञान को वही प्राप्त कर सकता है जो कि ब्रह्चार्य का पालन करे। श्री अरविन्द ,विद्यार्थी से यही अपेक्षा करतें है कि वह ब्रह्चर्य का पालन कर वास्विक ज्ञान की प्राप्ति करे। इस सम्बन्ध में श्री अरविन्द स्वयं लिखतें है-

‘‘बालक को माता-पिता अथवा शिक्षक की इच्छानुकूल ढालना अन्धविश्वास तथा जंगलीपन है‘‘माता-पिता इससे बडी भूल नही कर सकते कि वे पहले से ही इस बात की व्यवस्था करें कि उनके पुत्र में विशिष्ट गुणों , क्षमताओ तथा विचारों का विकास होगा। प्रकृति को स्वयं अपने धर्म का त्याग करने के लिये बाध्य करना उसे स्थायी हानि पहुँचाना है। उसके विकास को व्युत्कृत करना है तथा उसकी पूर्णता को दूषित करना है।”

“The idea of hammering the child into shape desired by the parent or teacher is a barbarous and ignorant superstition. There can be no great error than for the parent to arrange before hand that his son shall develop particular qualities and capacities. To force the nature to abandon its own Dharma is to do it permanent harm, mutilate its growth and deface its perfection.”

श्री अरविन्द व्यक्तिगत भिन्नता के सिद्वान्त को मानते हैं। उनकी कल्पना है कि शिक्षार्थी को विनय, परोपकार, स्वाध्याय, एकाग्रता सेवा आदि गुणों को अपने अन्दर निहित करना चाहिये।

श्री अरविन्द ने बालक पर वातावरण के प्रभाव को भी स्वीकार किया है। उनका मत है कि वातावरण बालक के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, उनका मानना है कि बालको को उच्च वातावरण में रखना चाहिये जिसमें कि उनके अनुभूति के अंगो का विकास एवं प्रशिक्षण हो सके और वे सत्य की खोज की ओर अग्रसर हो सकें।

विद्यालय (School)

श्री अरविन्द के अनुसार विद्यालय को बच्चो के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास में सहायक होना चाहिये उनके अनुसार विद्यालय का वातावरण विश्व-बन्धुत्व की भावना से पूर्ण होना चाहिये। श्री अरविन्द ने बालक के भौतिक विकास के लिये भाषा, साहित्य सभ्यता एवं संस्कृति गणित एवं विज्ञान पर बल दिया और आध्यात्मिक विकास हेतु मानव सेवा कर्तव्य पालन एवं ध्यान आदि को महत्वपूर्ण स्थान दिया। इस प्रकार उन्होंने बालक के सम्पूर्ण विकास के लिये भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनो पक्षों पर समान बल दिया।

श्री अरविन्द के अनुसार विद्यालयों को भौतिक प्रगति एवं योग साधना का केन्द्र होना चाहिये जिससे कि एक बालक का सम्पूर्ण विकास हो सके।

श्री अरविन्द ने मानव और मानव के बीच कोई भेदभाव नहीं रखा उन्होंने जाति, धर्म, आर्थिक स्थिति ,रंग आदि किसी भी आधार पर भेदभाव को स्वीकार नहीं किया वे सभी बालको को समान अवसर प्रदान करने के पक्षधर हैं उन्होंने विद्यालय में विश्व-बन्धुत्व के वातावरण को विकसित करने की बात कही।

श्री अरविन्द “अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र” जिसकी स्थापना श्री अरविन्द द्वारा पाँडेचेरी में की गयी है, वह इसी प्रकार का शिक्षा का केन्द्र है।

15.5.3 श्री अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन (Evaluation of Sri Aurobindo’s Educational Thought)

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनो पक्षों का विकास करती है।

उन्होंने ने शिक्षा को एक बहुउद्देशीय प्रक्रिया माना जिसके द्वारा बालको को शारीरिक, मानसिक, सांस्कृतिक,आध्यात्मिक, नैतिक विकास होता है।

श्री अरविन्द ने स्वयं द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु एक विस्तृत पाठयक्रम प्रस्तुत किया साथ ही साथ उन्होंने शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिये विभिन्न पाठयक्रम भी प्रस्तुत किया।

यदि श्री अरविन्द द्वारा प्रस्तुत पाठयक्रम का विश्लेषण किया जाये तो यह बात तो स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है कि उन्होने एक व्यापक पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया है। परन्तु प्रारम्भ से ही मातृ-भाषा के साथ अन्य विदेशी भाषा पढाने का कोई तर्क समझ नही आता। अन्तराष्ट्रीय महत्व पर अधिक बल दिया गया है। सामान्यतया इसकी आवश्यकता इतनी नही है।

श्री अरविन्द ने शिक्षा को आधुनिक रूप प्रदान करने का हर सम्भव प्रयास किया है। उन्होंने भारतीय एवं पाश्चात्य सभी उपयोगी ज्ञान को पाठ्यक्रम में स्थान दिया।

श्री अरविन्द के शिक्षण विधियों को लेकर विचार स्पष्ट नही है। कभी वे प्राचीन विधियों का समर्थन करते है और कभी आधुनिक विधियों का, उन्होने पूर्ण रूप से रट कर सीखने का विरोध किया। उन्होंने योग को सीखने की उत्तम विधि माना है।

योग को सीखने की उत्तम विधि मानने का उनका मत उत्तम है। परन्तु अभी वर्तमान समय में योग को मन को एकाग्र करने के रूप में लिया जा सकता है ना कि कर्म योग की तरह।

श्री अरविन्द के अनुसार स्वेच्छा से कर्तव्य पालन ही अनुशासन है, उनके अनुसार अनुशासन स्थापित करने के लिये तो शिक्षक को आदर्श व्यवहार प्रस्तुत करना चाहिये और यदि बालक

अनुशासन का पालन न करें तो उन्हें प्यार व स्नेह द्वारा समझाना चाहिये। उन्होंने दण्ड को अमानवीय माना है।

इसमें दो मत नहीं हैं कि अध्यापक द्वारा आदर्श व्यवहार, अनुशासन स्थापित करने के लिये आवश्यक है परन्तु केवल स्नेह द्वारा बालकों को अनुशासित रखना सफल नहीं हो सकता, कभी-कभी दण्ड भी आवश्यक है, परन्तु यह दण्ड सीमित हो।

श्री अरविन्द शिक्षक को ज्ञान प्रदान करने वाले की भूमिका में नहीं देखते वरन एक पथ-प्रदर्शक एवं निर्देशक के रूप में ही मानते हैं जो कि बालक के स्वतन्त्र विकास में सहायता प्रदान करता है।

बालक के स्वतन्त्र विकास की बात का समर्थन करना सही प्रतीत होता है परन्तु औपचारिक शिक्षा इस रूप में प्रदान नहीं की जा सकती। शिक्षक को योगी बना देना व्यवहारिक नहीं है। यह एक शिक्षक के ओर से पर्याप्त नहीं है।

श्री अरविन्द बालक की वैयक्तिकता का सम्मान करतें है। उन्होंने बालको की वैयक्तिक भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुये शिक्षा की व्यवस्था की, उन्होंने बालक के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास पर बल दिया और इन दोनो पक्षों के विकास हेतु उन्होंने ब्रह्मचर्य पालन को महत्व दिया। श्री अरविन्द ने भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिये ब्रह्मचर्य को महत्तवपूर्ण माना है।

जहाँ तक ब्रह्मचर्य पालन का प्रश्न है। यह उचित प्रतीत होता है। परन्तु सत्य की खोज हेतु ध्यान आज के आधुनिक परिदृश्य में व्यवहारिक नहीं है।

श्री अरविन्द का तर्क है कि विद्यालय योग साधना का केन्द्र हो यह सब को स्वीकार्य नहीं हो सकता । परन्तु मनुष्य को वास्तविक खुशी और शान्ति की प्रप्ति हेतु इसका पालन करना चाहिये। विद्यालयों को बालकों के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु प्रयत्न करने चाहिये जिससे कि बालको के व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास हो सके। एक दार्शनिक के रूप में श्री अरविन्द ने भारतीय दर्शन को एक वैज्ञानिक पुट देने का प्रयास किया। वे विश्व बन्धुत्व मे विश्वास करते हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

8 श्री अरविन्द ने पाठ्यक्रम किन विभिन्न स्तरों में बाँटा?

9 श्री अरविन्द के अनुसार सीखने की अधिक उपयुक्त विधि क्या है?

10 श्री अरविन्द ……………… अनुशासन के समर्थक हैं।

11 श्री अरविन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक को किस रूप में स्वीकार किया है

12 श्री अरविन्द .... को शिक्षा का केन्द्र मानते थे।

13 श्री अरविन्द ने अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र की स्थापना में कहाँ की?

15.6 सारांश (Summary)

श्री अरविन्द अधुनिक भारत के महान ऋषि कहे जाते सकते है, उन्होंने भारत में 'राष्ट्रवादी आन्दोलन' को प्रेरणा प्रदान की, वे भरत में पुनर्जागरण आन्दोलन के सूत्रधार भी माने जाते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में इनका योगदान अधिक सराहनीय है। श्री अरविन्द ने अपने पूर्वी और पश्चिमी दर्शन, धर्म, साहित्य तथा मनोविज्ञान को अपने लेखन में संश्लेषित किया।

श्री अरविन्द श्रीमद् भागवत गीता के बहुत बड़े उपासक थें। उन्होने गीता के 'कर्म योग, व ध्यान योग का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया।

श्री अरविन्द मानवजाति को अज्ञान, अंधकार व मृत्यु से ज्ञान, प्रकाश व अमरत्व की ओर ले जाना चाहते हैं। अतः उनकी विचारधारा सर्वांग योग दर्शन कहलाती है। श्री अरविन्द के अनुसार ईश्वर इस ब्रह्माण्ड का निर्माता हैं। इनके मतानुसार विकास की दो दिशाएँ हैं- अवरोहण और आरोहण। श्री अरविन्द के अनुसार भौतिक एंव आध्यात्मिक दोनो तत्वो में मूल तत्व ब्रह्म है। अतः भौतिक तथा आध्यात्मिक तत्वों के मध्य भेद को जानना ही सच्चा ज्ञान है। श्री अरविन्द के अनुसार मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य सत+ चित + आनन्द की प्राप्ति है। श्री अरविन्द ने शिक्षा की राष्ट्रीय योजना प्रस्तुत की। श्री अरविन्द ने शिक्षा के पाँच उद्देश्य वर्णित किये हैं-शारीरिक, प्राणिक, मानसिक, अन्तःकरण और आध्यात्मिक विकास। उनके विचार से इस सभी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये समग्र रूप से प्रयास करने होंगें और इसके उन्होंने एक विस्तृत एंव एकीकृत पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया है। एक दार्शनिक के रूप में श्री अरविन्द ने भारतीय दर्शन को एक वैज्ञानिक पुट देने का प्रयास किया। वे विश्व बन्धुत्व में विश्वास करतें हैं

15.7 शब्दावली (Glossary)

तत्वमीमांसा- वास्तविकता का विज्ञान

ज्ञानमीमांसा- ज्ञान का विज्ञान

मूल्यमीमांसा- मूल्य का विज्ञान

अवरोहण- उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर जाना

आरोहण- निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर जाना

एकीकृत-

स्वमूल्याँकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1.ईश्वर

2.सत

3.चित + आनन्द

4.नेशनल सिस्टम ऑफ एजुकेशन, ऑफ ऐजुकेशन

4.श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के दो प्रमुख कार्य है-

5.मनुष्य को उसके विकास की प्रक्रिया से परिचित कराना।

6.मनुष्य में सत के सोपान तक पहुँचने की शक्ति का विकास करना।

7.श्री अरविन्द के अनुसार, आध्यात्मिक विकास ही शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य है।

8.श्री अरविन्द का मानना था कि मनुष्य 'मानस' की स्थिति में आने के लिये 'द्रव्य' एंव 'प्राण' दो सोपानो को पार करता है।

9.श्री अरविन्द ने पाठयक्रम को इन स्तरों में बाँटा-

10.प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर, विश्वविद्यालय स्तर, व्यवसायिक शिक्षा

11.श्री अरविन्द के अनुसार योग सीखने की अधिक उपयुक्त विधि है।

प्रभावात्मक अनुशासन

श्री अरविन्द ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक को बच्चों के लिये एक पथ प्रदर्शक एवं सहायक शिक्षक के रूप में स्वीकार किया है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची (Reference Books)

1.लाल एण्ड पलोड, *एजुकेशनल थॉट एण्ड प्रैक्टिस*, मेरठ: आर0लाल प्रकाशन ,

2.पाण्डा, अ. कु. (2011). *शिक्षा दर्शन*. कानपुर: साहित्य रत्नालय्,

3.सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप., शिखा, च. (2010). *उदीयमान भारतीय समाज मे शिक्षक,* मेरठ: आर लाल प्रकाशन.

4.एलैक्स, शी. मै. (2008). *शिक्षा दर्शन*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

5.ओड, एल. के. *शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि*. राजस्थान ग्रंथ अकादमी.

15.10 निबंधात्मक प्रश्न (Long Answer Questions)

1.श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का अर्थ क्या है? श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों को वर्णित कीजिए।

2.श्री अरविन्द के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कीजिए?

3.श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा के पाठ्यक्रम को स्पष्ट कीजिए।

4.अनुशासन के बारे में श्री अरविन्द का क्या कहना है? संक्षेप में लिखिए।

इकाई16 : स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन (Educational Philosophy of Swami Vivekananda)

16.1 प्रस्तावना Introduction
16.2 उद्देश्य Objectives
भाग-एक Part - I
16.3 स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन Education Philosophy of Swami Vivekananda
16.3.1 शिक्षा का अर्थ Meaning of Education
16.3.2 स्वामी विवेकानन्द का नव्य वेदान्त
16.3.3 स्वामी विववेकानन्द के जीवन दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्व Fundamental Principles or Essential feature of the Philosophy of life of Swami Vivekananda
अपनी उन्नति जानिए Check your progress
भाग-दो Part - II
16.4 शिक्षा के उद्देश्य Aims of Education
16.4.1 पाठ्यक्रम Curriculum
16.4.2 शिक्षण पद्धति Method of Teaching
16.4.3 शिक्षक एवं शिक्षार्थी, विद्यालय एवं अनुशासन Teacher and Students, School and Discipline
अपनी उन्नति जानिए Check your Progress
भाग-दो Part II
16.5 स्त्री शिक्षा Women Education
16.5.1 स्वामी विवेकानन्द के कार्य Work of Swami Vivekanand
16.5.2 स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन व योगदान Estimate of Contributions of Swami Vivekananda
अपनी उन्नति जानिए Check your Progress
16.6 सारांश Summary
16.7 कठिन शब्द Difficult Words
16.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर Answer of practice Questions
16.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची Reference books
16.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री Useful books
16.11 निबन्धात्मक प्रश्न Essay Type Question

16.1 प्रस्तावना (Introduction)

समकालीन भारत में अंग्रेजों द्वारा चलायी हुई शिक्षा प्रणाली के विरूद्ध विद्रोह करके राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की स्थापना का बीड़ा उठाने वाले दार्शनिकों में स्वामी विवेकानन्द नाम प्रमुख है। गांधी और अरविन्द के समान उन्होंने भारत पर पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली लागू करने का विरोध किया और भारत की संस्कृति के अनुरूप शिक्षा प्रणाली अपनाने का समर्थन किया। विवेकानन्द का जन्म कलकत्ता के एक सम्पन्न परिवार में 12 जनवरी सन् 1863 ई. में हुआ था। उनका असली नाम नरेन्द्र नाथ दत्त था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा सवागी शिक्षा थी। बचपन में ही उन्होंने अपनी माता की निगरानी में हिन्दू शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना आरम्भ किया।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस से 1881 ई. में उनकी भेंट हुई। इस भेंट ने उनके जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया। वैसे शुरू में अपनी संशयवादी दृष्टि के अनुसार उन्होंने परमहंस की बातों को भी संशय की ही दृष्टि से देखा, लेकिन प्रारम्भिक संशय, उलझन एवं प्रतिवाद के बाद उन्होंने स्वामी रामकृष्ण के प्रति पूर्ण समर्पण किया तथा उन्हें ही अपना पूर्ण गुरू एवं मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार किया। रामकृष्ण वेदान्त की परम्परा को मानने वाले संत थे। वेदांत का मूल सिद्धांत है कि एक ही ब्रह्मा सब जगह भिन्न-भिन्न रूपों मे दिखलाई पड़ता है। अस्तु , रामकृष्ण ने अपने उद्देश्यों में सभी धर्मों की एकता पर जोर दिया। उनके इसी उपदेश को विवेकानन्द ने दूर-दूर तक फैलाया। एक ओर जहां विवेकानन्द पर प्राचीन भारतीय वेदान्त दर्शन का प्रभाव था, वहीं दूसरी ओर वे पाश्चात्य वैज्ञानिक प्रगति से भी कम प्रभावित न थे। इसलिए उन्होंने कोरे निवृत्तिवाद का भी खंडन किया है और प्रवृत्ति तथा निवृत्ति का समन्वय करने का प्रयास किया है। मोक्ष को जीवन का लक्ष्य मानते हुए भी वे इस लोक में प्रवृत्ति की अवहेलना नहीं करते। इसके लिए एक स्थान पर उन्होंने यहां तक कह दिया कि ''भारत को वेदान्त भुलाने की आवश्यकता है।'' सबसे पहले युवकों को सबल बनाना चाहिए। धर्म तो बाद की चीज है। गीता के अध्ययन की तुलना में तुम फुटबाल के द्वारा स्वर्ग के अधिक निकट पहुचोगे। जब तुम्हारा शरीर तुम्हारे पैरों पर दृढ़ रूप में खड़ा होगा और तुम अपने को मुनष्य के रूप में अनुभव करोगे तब तुम उपनिषदों और आत्मा की महत्ता को अधिक अच्छी तरह समझोगे। इस प्रकार स्वामी विवेदानन्द ने शिक्षा में समन्वयात्मक दृष्टिकोण उपस्थित किया।

16.2 उद्देश्य Objectives

1. स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन को समझ सकेंगे।
2. स्वामी विवेकानन्द के नव्य वेदान्त के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. स्वामी विवेकानन्द के आधारभूत सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4. स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा के उद्देश्य, पाठयक्रम, शिक्षा पद्धति का अध्ययन कर सकेंगे।
5. शिक्षक एवं शिक्षार्थी के सम्बंध व स्त्री शिक्षा के सम्बंध में विचारों को जान सकेंगे।
6. स्वामी विवेकानन्द के बारे में अपनी जिज्ञासा को शांत कर सकेंगे।

भाग-एक Part I

16.3 स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा दर्शन (Swami Vivekanand's Philosophy of Education)

सन् 1885 में स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने नरेन्द्र नाथ को अपना उत्तराधिकारी सौंप दिया। इसके बाद वे पूर्ण सन्यासी के रूप में तपस्या करने लगे।

सन् 1886 से 1892 ई. तक भारत में सामाजिक, धार्मिक क्रियाओं के सम्पन्न करने का काल- सन् 1886 से 1892 ई. तक वराह नगर के गढ़ को केन्द्र बनाकर स्वामी विवेकानन्द ने अपने गुरू रामकृष्ण परमहंस द्वारा सौंपे हुए कार्यो को अपने ही देश भारत मे आगे बढ़ाया। रामकृष्ण परमहंस के वेदान्ती अनुभवों को पूरे भारत में फैलाया। इसी बीच उन्हें सिद्धि प्राप्ति की अभिष्ट अभिलाषा हुई और वे अपने गुरू पत्नी से आशीर्वाद प्राप्त करने लगे।

श्री शारदा मां ने कहा ‘‘ बेटा मैं हृदय से आशीर्वाद देती हूं कि तुम सिद्ध काम होकर वापस लौटो, तुम्हारे भीतर ही तो रामकृष्ण निवास करते हैं। अत्यधिक कठिन तपस्या के बाद उन्होंने अनुभव किया कि ‘‘ आज मैंने क्षुद्र ब्रह्माण्ड और विराट ब्रह्माण्ड की एकात्मकता को अनुभव किया है। ब्रह्माण्ड में जो कुछ है सभी इस क्षुद्र शरीर के भीतर विद्यमान है। मैंने देखा कि प्रत्येक परमाणु के भीतर विश्व ब्रह्माण्ड विद्यमान है। प्राणीमात्र की सेवा करना ही ईश्वर की वास्तविक सेवा है। दक्षिण भारत में भ्रमण करते समय उन्हें शिकागो में होने वाले विश्व धर्म सम्मेलन की सूचना प्राप्त हुई और वे वहां जाने के लिए प्रयत्नशील होने लगे।

1893 से सन् 1902 तक-

पाश्चात्य देशों में सामाजिक आर्थिक क्रियाओं के सम्पन्न करने का काल- 31 मई 1893 ई. को अमेरिका के लिए प्रस्थान किया और धर्मप्रचार करते रहे। 21 सितम्बर 1893 को वह विश्वधर्म सम्मेलन में भाग लेने के लिए शिकागो पहुंचे, जहां वेदान्त पर उनका भाषण इतना अधिक प्रभावशाली हुआ कि उन्हें उक्त सम्मेलन में सर्वोच्च आसन पर प्रतिष्ठित किया गया। सम्पूर्ण विश्व में उनके भाषणों ने हलचल मचा दी।

सन् 1895 में स्वामी विवेकानन्द अमेरिका से इग्लैंड पहुंचे और फिर यूरोप के इटली, जर्मनी, फ्रांस, स्विट्जरलैण्ड आदि देशों में भ्रमण किया। वहां वेदान्त धर्म का खूब प्रचार किया। 1898 ई. मैसूर स्थान पर रामकृष्ण मठ की स्थापना की।

16.3.1 शिक्षा का अर्थ Meaning of Education

(अ) शिक्षा ज्ञान संग्रह नहीं बल्कि सर्वांगीण विकास के लिए ज्ञानार्जन है। (Education is not the collection of knowledge but acquiring knowledge for harmonious development.)

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का संकुचित अर्थ न लेकर व्यापक एवं व्यावहारिक अर्थ लिया है। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि ‘‘शिक्षा शब्द से मैं यथार्थ कार्यकारी ज्ञानार्जन समझता हूँ। केवल पुस्तक तक की शिक्षा से काम नहीं चलेगा। हमारा प्रयोजन उस शिक्षा से है जिसके द्वारा चरित्र गठन हो, मन का बल बढे, बुद्धि का विकास हो, मनुष्य स्वावलंबी हो सके। अर्थात् शिक्षा ऐसी हो जो व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक, भावात्मक एवं आर्थिक विकास में योगदान करे।’’

(ब) शिक्षा मनुष्य में पहले से उपस्थित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।(Education is the manifestation of the perfection already present in man.)

शिक्षा व्यक्ति में निहित पूर्णता का ज्ञान और अनुभूति है। अर्थात् शिक्षा मनुष्य में पहले से ही उपस्थित पूर्णता की अभिव्यक्ति है। किन्तु अज्ञानतावश मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप के प्रति पूर्णरूपेण सचेत नहीं रहता। वह अपना आध्यात्मिक परिचय अपनी आत्मा जो चित और आनन्द है, से नहीं कर पाता। शिक्षा का तात्पर्य है व्यक्ति को अपनी सत, चित, आनन्द स्वरूप आत्मा को पहचानना।

16.3.2 स्वामी विवेकानन्द का नव्य वेदान्त --

स्वामी विवेकानन्द वेद एवं उपनिषदों के ज्ञाता थे। इन्होंने देवी के अनन्य भक्त श्री रामकृष्ण परमहंस का सत्संग किया था। इसके साथ-साथ इन्होंने राजयोग से सत्य ज्ञान की अनुभूति की थी। ये शंकर के अद्वैत वेदान्त के समर्थक थे, परन्तु इन्होंने इस वेदान्त को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में देखने-समझने और उसे जीवन में उतारने का स्तुत्य प्रयास किया है। यही इनके वेदान्त का नयापन है और इसी आधार पर उसे नव्य वेदानत की संज्ञा दी गई है।

नव्य वेदान्त की तत्व मीमांसा---

नव्य वेदान्त ब्रह्म को मूल में रखकर जगत की कल्पना करता है। यह ब्रह्म निराकार, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है। यह वस्तु जगत ब्रह्म की माया शक्ति के द्वारा निर्मित है परन्तु ये माया और जगत को असत्य नहीं मानते थे। इनकी दृष्टि से माया और जगत भी सत्य है। भला सत्य से असत्य की उत्पत्ति

कैसे हो सकती है। हॉ, यह बात अवश्य है कि ये माया एवं जगत के मूल तत्व ब्रह्म को अंतिम सत्य मानते थे। आत्मा ब्रह्म का अंश होती है इसलिए वह भी अपने में पूर्ण होती है और यही आत्मा मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर जीवात्मा का रूप धारण कर लेती है और यह जीवात्मा ही कर्मो के फल का भोक्ता होती है। लेकिन मानव जीवन का अंतिम उद्देश्य मुक्ति है।

नव्य वेदान्त की ज्ञान मीमांसा---

विवेकानन्द ने जानकारी को दो हिस्सों में विभक्त किया है-आत्मतत्व का ज्ञान और वस्तु जगत का ज्ञान। इनके अपने विचार से ये दोनों प्रकार के ज्ञान सत्य हैं और मनुष्य को इन दोनों प्रकार के ज्ञान को प्राप्त करना चाहिए। वस्तु जगत के ज्ञान के लिए इन्होंने प्रत्यक्ष विधि पर बल दिया है और आत्मतत्व के ज्ञान के लिए अध्ययन एवं सत्संग पर। एकाग्रता को ये इन दोनों प्रकार के ज्ञान प्राप्त करने की सर्वोत्तम विधि मानते थे।

नव्य वेदान्त की आचार मीमांसा---

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार आत्मानुभूति, ईश्वरोप्राप्ति अथवा मोक्ष सभी एक ही हैं। इनकी दृष्टि से इस आत्मतत्व की अनुभूति ज्ञान योग, कर्म योग, भक्ति योग अथवा राज योग, किसी के भी द्वारा की जा सकती है, परन्तु ये इस बात पर बहुत बल देते थे कि मनुष्य को सर्वप्रथम अपने आत्मतत्व की अनुभूति करनी चाहिए, फिर दूसरों के आत्मतत्व की अनुभूति करनी चाहिए और फिर अपने दूसरों में अद्वैत की अनुभूति करनी चाहिए और यह तभी संभव है जब एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को ईश्वर का मंदिर माने, उसकी सेवा करे। स्वामी जी मानव सेवा को सबसे बड़ा धर्म मानते थे। इनकी दृष्टि से मनुष्य को मन, वचन और कर्म से शुद्ध होना चाहिए, अपनी जीविका ईमानदारी से कमानी चाहिए, दीन-हीनों की सेवा करनी चाहिए और इस प्रकार अपने को शुद्ध एवं निर्मल बनाकर योग मार्ग द्वारा आत्मानुभूति करनी चाहिए। योग साधना के लिए इन्होंने सात सोपानों-शम-दम, तितिक्षा, उत्तरति, श्रद्धा, समाधान, मुमुक्षत्व और नित्यानित्य विवेक के मार्ग का समर्थन किया है।

16.3.3 स्वामी विववेकानन्द के जीवन दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्व - Fundamental principals or Essential Feature of the life of Swami Vivekanand -

स्वामी विवेकानन्द का जीवन दर्शन उनके परम गुरू रामकृष्ण परमहंस के विचारों पर आधारित है। जो स्वयं एक महान वेदान्ती दर्शन के समर्थक एवं प्रचारक थे। स्वामी विवेकानन्द पर अपने गुरू रामकृष्ण परमहंस का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि वे वेदान्त दर्शन के महान समर्थक एवं व्याख्यादाता हो गये।

डॉ. मिहिर मुकर्जी- ''विवेकानन्द एक वेतान्ती थे और जीवन में उनका वेदान्त एक जीवन सिद्धान्त था।''

विभिन्न सिद्धान्त एवं तत्वों को निम्न रूप (जीवन दर्शन) के रूप में जान सकते हैं -

1. ईश्वर या ब्रह्मा (God or Brahma) :- स्वामी विवेकानन्द ने ईश्वर को निराकार एवं साकार दोनों रूप में माना है। उनके अनुसार सगुण ईश्वर क्षूद्र मानव मात्र है और निर्गुण ईश्वर मनुष्य, पशु, देवता और अन्य वह सब है, जिसे हम देख नहीं पाते। ''हम सब एक ही केन्द्र अर्थात् उस परमात्मा से आये हैं। ईश्वर से अद्भबुत ऊंचे से ऊंचे और नीचे से नीचे सभी प्राणी अन्त में उस परमपिता के पास लौट जायेंगे, जहां से सब प्रकट हुए हें, जिसमें सब विलिम होंगे वही परमेश्वर है।

2. जगत (World):- ईश्वर एवं जगत दोनों में एकता है। ईश्वर एवं जगत में कार्य कारण संबंध है, इसलिए ईश्वर को जगत नियन्ता भी कहा जाता है। जिस प्रकार शरीर है और उसमें निहित आत्मा है, उसी प्रकार विश्व के भीतर जितनी आत्माएं हैं वे सभी ईश्वर या ब्रह्मा के शरीर हैं और उनके भीतर ब्रह्मा का वास है। स्वामी विवेकानन्द ने जगत के दो रूप बताए हैं:-

(I) बहिर्जगत (External World) : यह जगत अनन्त काल से चला आ रहा है, और यदि इसका नाश होता है तो वह पुनः अपने कारण उसी रूप में लौट आता है। अर्थात् ईश्वर में विलय हो जाता है। समस्त प्रकृति-मानवीय एवं जड़ प्रकृति में संकोचन एवं क्रम विकास की क्रिया अनन्तकाल से चली आ रही है। यहां पर हमें विवेकानन्द का वैज्ञानिक आध्यात्मवाद (Scientific spiritualism) दिखायी देता है।

(II) अन्तर्जगत (Internal Word) : अंतर्जगत का एक क्रम होता है। वह सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप में पाया जाता है। अंतर्जगत अवस्थित आत्म, स्वःप्रकाश, सचिदानन्द, चिन्तनमय एवं मुक्त है। उनका न जन्म होता है और न मृत्यु। अपितु, वह धीरे-धीरे नीची अवस्था से उच्चावस्था को प्रकाशित होती है। मनुष्य को आत्मा का ज्ञान न होने के कारण वह बन्धन अनुभव करता है। इस भ्रम को वेदान्त की भाषा में माया व अज्ञान कहा जाता है। माया या अज्ञान से बन्धन होना उचित नहीं और इसलिए आत्मा का स्वभाव ही है अपने आप को अज्ञान से मुक्त रखना। ताकि उसे शुद्ध ब्रह्म चैतन्य की प्राप्ति हो।

3. मानव (Human Being) :- एक सच्चे वेदान्ती की भांति स्वामी विवेकानन्द ने मानव में विश्वास प्रकट किया है। चूंकि उनके अनुसार सम्पूर्ण जगत ब्रह्मय है। अतः जगत के सभी मानव ब्रह्मय और आत्मावान हैं। प्रत्येक मानव में आत्म विश्वास, शुद्धता, पवित्रता, ज्ञान, विवेक, क्रियाशीलता, प्रेम, स्वाधीनता आदि गुण पाये जाते हैं। प्रत्येक प्राणी एक मंदिर है। किन्तु मनुष्य सबसे श्रेष्ठ मंदिर है। वह मंदिरों में ताजमहल है। यदि ये उसमें पूजा नहीं कर सकता तो अन्य मंदिरों में बैठकर पूजा करने में कोई लाभ नहीं। स्वामी विवेकानन्द मानव जीवन का लक्ष्य आत्मज्ञान, आत्मानुभूति (Self Knowledge and self Realization) मानते हैं, लेकिन इस अवस्था पर पहुंचने के लिए अनेक सीढ़ियों को पार करना पड़ता है।

(i) शम दम: मन पर नियंत्रण रखना

(ii) तितिक्षा: सहनशीलता

(iii) उत्तरति: जो मिला, खा लिया, पहन लिया

(iv) श्रद्धा: धर्म एवं ईश्वर पर अटूट विश्वास

(v) समाधान: ईश्वर में चित को निरन्तर करने का अभ्यास

(vi) मुमुक्षत्वः मोक्ष प्राप्ति की उत्कृष्ण अभिलाषा

(vi) नित्यानित्य विवेक: चार योग बताए हैं- कर्मयोग, भक्ति योग, मानयोग एवं राजयोग

4. अध्यक्षात्मक विश्वेकता (Spiritual Universalism) :- स्वामी विवेकानन्द आध्यात्मिक विश्व एकता पर बल देते हैं और इस संदर्भ में लिखा है कि अगर आप ईश्वर को मनुष्य के चेहरे में नहीं देख सकते तो आप उसको बादलों में कहां देख सकेंगे। आप उसे निर्जीव पत्थर की मूर्ति में कैसे देख सकेंगे। मनुष्य समस्त प्राणियों में ब्रह्मा का दर्शन करता है। इस स्थिति में संपूर्ण विश्व में एकता की भावना आती है। जहां तक छोटी सी आत्मा मनुष्य में है, वहां तक विश्वात्मा समस्त विश्व में व्याप्त है। इस प्रकार विश्व में एकरूपता विद्यमान है। जिसके कारण विश्व बंधुत्व की भावना पाई जाती है।

5. सत्य ज्ञान (Truth Knowledge):- स्वामी विवेकानन्द के अनुसार जो कुछ भी पूर्णता के लिए होता है, वह सत्य है। जैसे-प्रेम सत्य है, प्रेम बांधता है और प्रेम एकता लाता है, प्रेम ही अस्तित्व है, ईश्वर स्वयं है, और यह जो कुछ प्रकट करता है, केवल उसी प्रेम का रूप है, जो कम या अधिक है, अभिव्यक्त होता है। इसी प्रकार सत्य ही प्रेम है, प्रेम ही ईश्वर है। अतः ईश्वर ही सत्य है।

अपनी उन्नति जानिए (Check Your Progress)

प्र. 1 विवेकानन्द का जन्म किस वर्ष में हुआ था?

(अ) 1861 (ब) 1863 (स) 1881 (द) 1883

प्र. 2 स्वामी विवेकानन्द की भेंट स्वामी रामकृष्ण से किस वर्ष में हुई थी ?

(अ) 1881 (ब) 1882 (स) 1863 (द) 1891

प्र. 3 योग साधना के सात सोपानों- शम-दम, तितिक्षा, उत्तरति, श्रद्धा, समाधान, मुमुक्षत्व और नित्यनित्य विवेक के मार्ग का समर्थन किया है:-

(अ) डॉ. राधाकृष्ण (ब) स्वामी रामकृष्ण (स) रामकृष्ण मूर्ति (द) स्वामी विवेकानन्द

प्र. 4 ‘‘प्रेम सत्य है, प्रेम बांधता है और प्रेम एकता लाता है, प्रेम ही अस्तित्व है, ईश्वर स्वयं है और यह जो कुछ प्रकट करता है, केवल उसी प्रेम का रूप है।’’ यह कथन है:-

स्वामी विवेकानन्द (ब) स्वामी दयानन्द (स) स्वामी रामकृष्ण (द) स्वामी रामानन्द

प्र. 5 विवेकानन्द वैज्ञानिक आध्यात्मवाद पर बल देते हैं:-

(अ) सत्य (ब) असत्य

भाग-दो - Part II

16.4 शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education)

‘‘तमसो मा ज्योतिर्गमय, असतो मा सद्गमय, मृत्योर्मामृत गमय।’’

आन्तरिक पूर्णता का बाह्य प्रकाश (External Expression of Internal Perfection) :- स्वामी विवेकानन्द- शिक्षा मनुष्य में पहले से उपस्थित पूर्णता की अभिव्यक्ति है। अर्थात् शिक्षा का प्रथम उद्देश्य व्यक्ति की आन्तरिक पूर्णता को बाह्य जगत में प्रकट करना है, जिससे कि वह अपने आपको अच्छी तरह समझ सके। अपने आपको जानने का तात्पर्य मनुष्य का उस परम आत्मा से है जिनका कि वह अंश है, पूर्ण संबंध स्थापित करना है।

2. व्यक्तित्व में मनुष्यत्व का विकास (Development of Humanism Personality) :- स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का द्वितीय उद्देश्य मानव व्यक्तित्व में मनुष्य तत्व का विकास करना बताया है। मनुष्यत्व का तात्पर्य उन लौकिक एवं आलौकिक सद्गुणों का धारण करना है, जिससे धारणकर्ता अर्थात् मनुष्य पुरूष बनता है। ये सद्गुण हैं: 1. आत्मविश्वास (Self Confidence) 2. आत्मश्रद्धा (Self Faith) 3. आत्मनिष्ठता (Self Control) 4. आत्मनिर्भरता (Self Dependence) 5. आत्म प्रेम (Self Love) । यदि मनुष्य को अपनी आत्मा में विश्वास उत्पन्न हो जाता है तो वह निःसंदेह आगे बढने का प्रयास करता है। ‘‘उठो, जागो, तब तक न रूको, जब तक कि परम लक्ष्य (Supreme Goal) की प्राप्ति न कर लो।’’

3. मानव एवं समाज की सेवा (Service of Humanity and Society) :- शिक्षा का तृतीय उद्देश्य मानव एवं समाज की सेवा करना है। उपयुक्त गुणों की प्राप्ति का वास्तविक लाभ तभी हो पाता है जबकि उनका मानव एवं समाज की सेवा में अभ्यास किया जाये। उनके इस प्रकार अभ्यास से ही उनकी बुद्धि एवं उनका विकास होता है। यथार्थ शिक्षा का लक्ष्य मानव सेवा द्वारा ईश्वर की सेवा करना है।

4. शारीरिक विकास (Physical Development) :- स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का चतुर्थ उद्देश्य शारीरिक विकास बताया है। उन्होंने शारीरिक विकास व स्वास्थ्य के महत्व के संदर्भ में कहा है कि संसार में यदि कोई पाप है तो वह है दुर्बलता। उपनिषद -''आज ऐसे बलिष्ठ मनुष्यों की आवश्यकता है, जिनकी पेशियां लोहे के समान दृढ एवं स्नायु फौलाद के समान कठिन हों। '' अतः व्यायाम, योगाभ्यास आदि उनके नित्य कर्मो में से थे।

5. जीविकोपार्जन का उद्देश्य (Vocational Aims) :- स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का पांचवा उद्देश्य जीविकोपार्जन को माना है। जब तक शिक्षा द्वारा भौतिक सुखों को प्राप्त नहीं किया जाता, तब तक लोगों का आध्यात्मिक विकास भी संभव नहीं है। शिक्षा का कार्य इस प्रकार होगा कि प्रत्येक व्यक्ति को इतनी क्षमता प्रदान करना कि वह अपने कर्तव्यों को समझे और अपनी आवश्यकता को पूरा करने का प्रयास करें।

6. विश्वबंधुत्व व विश्व चेतना का विकास (Development of World Brotherhood, World Consciousness):- स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का अंतिम उद्देश्य विश्वबंधुत्व एवं विश्व चेतना का विकास करना है। वही व्यक्ति शिक्षित है, जिसमें विश्वबंधुत्व की भावना पायी जाती है, जो विश्व के प्रति चेतन है। ये गुण शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त किये जा सकते हैं। ऐसे विश्वबंधुत्व एवं विश्व चेतना के लिए उपयुक्त वातावरण और साधन की आवश्यकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वामी विवेकानन्द ने मानव सेवा के लिए बल दिया है।

16.4.1 पाठ्यक्रम Curriculum

पाठ्यक्रम के बारे में हमारे निम्न विचार हैं:-

पाठ्यक्रम निर्माण का आधार (Bases of the Construction of Curriculum)

उनके पाठ्यक्रम संबंधी विचारों में आध्यात्मिकता की झलक मिलना स्वाभाविक है। फिर भी उन्होंने पाठ्यक्रम के अंतर्गत लौकिक जीवन से संबंधित विषयों की उपेक्षा नहीं की है, क्योंकि स्वामी जी शिक्षा को पूर्ण मानव (Complete Man) बनाना चाहते थे।

(ब) पाठ्यक्रम के अंतर्गत विषयों का निर्धारण (Determination of Subjects in Curriculum)

पाठ्यक्रम को दो भागों में बांटा गया है:-

1. लौकिक पाठ्यक्रम (Worldly Curriculum)

2. आध्यात्मिक पाठ्यक्रम (Spiritual Curriculum)

1. लौकिक पाठ्यक्रम (Worldly Curriculum) : 1. भाषा संस्कृत मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा अंग्रेजी 2. विज्ञान, 3. मनोविज्ञान, 4. गृह विज्ञान, 5. तकनीकी शास्त्र 6. उद्योग कौशल 7. कला 8. व्यवसायों की शिक्षा, 9. गणित 10. खेलकूद तथा राष्ट्र सेवा।

2. आध्यात्मिक पाठ्यक्रम (Spiritual Curriculum) : 1. धर्म एवं दर्शन, विशेषकर हिन्दूधर्म एवं वेदान्त एवं उपनिषदों का ज्ञान, 2. पुराण, 3. उपदेश श्रवण, 4. कीर्तन, 5. धर्म गीत, 6. साधु संगति।

16.4.2 शिक्षण पद्धति (Method of Teaching)

(i) धर्म एवं योग विधि (Dharma or yoga Method)

(ii) केन्द्रियकरण विधि (Method of Centralization Method)

(iii) उपदेश विधि (Method of Preaching)

(iv) अनुकरण विधि (Imitation Method)

(v) व्यक्तिगत निर्देशन एवं परामर्श विधि (Personal Guidance and Counseling Method)

(vi) क्रियात्मक एवं व्यावहारिक विधियां (Active and Practical Methods)

(i) धर्म एवं योग विधि (Dharma or Yoga Method) : इस विधि का लक्ष्य युक्त करना या एकीकरण करना है। योग की अनेक सीढ़ियां या स्वरूप हैं। जैसे-

(a) कर्म योग: अर्थात् क्रिया द्वारा ईश्वर से एकीकृत करना।

(b) भक्ति योग: अर्थात् प्रेम, श्रद्धा आदि भावों की अनुभूति द्वारा एकीकरण करना।

(C) ज्ञान योग: अर्थात् आत्म ज्ञान (Self Knowledge) द्वारा एकीकरण करना।

(D) राज योग: अर्थात् मन की शक्तियों को नियंत्रित करके एकीकरण करना।

इस प्रकार के अभ्यास के अंतर्गत श्रवण, कीर्तन, स्मरण, मनन और निदिध्यासन की क्रियाएं आती हैं।

(ii) केन्द्रियकरण विधि (Method of Concentration): इस विधि में निदिध्यासन के आधार पर व्यक्ति को अपने मन को एकाग्र व केन्द्रित करना पड़ता है। ऐसा करने से एक ओर मन की चंचलता दूर हो जाती है तो दूसरी ओर मनुष्य सही ढंग से चिन्तन-मनन करने लग जाता है।

(iii) उपदेश विधि (Preaching Method) : वास्तव में भारत में गुरू के निवास पर 25 वर्ष की आयु तक शिक्षा ग्रहण करने की पुरानी परिपाटी थी, जिसे स्वामी जी पुनर्जीवित करना चाहते थे। गुरूकुल में छात्र गुरू के चारों ओर बैठते थे तथा विचार-विमर्श, तर्क-वितर्क, शंका एवं समाधान तथा शास्त्रार्थ करते थे।

(iv) अनुकरण विधि (Preaching Method) : स्वामी विवेकानन्द ने अनुकरण विधि पर भी अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। ''छात्र अपनी बाल्यावस्था से ही ऐसे गुरू के साथ रहे जिसका चरित्र जाज्वल्यमान हो और छात्र के सामने उच्च्तम त्याग का उदाहरण हो।'' यदि अध्यापक विभिन्न गुणों से संपन्न होंगे तो निश्चित तौर पर छात्र भी अध्यापक के गुणों, चरित्र एवं ज्ञानोपदेश का अनुकरण करके अपना जीवन भी उसी तरह बनायेंगे।

(v) **व्यक्तिगत निर्देशन एवं परामर्श विधि (Personal Guidance and Counselling Method) :-** स्वामी विवेकानन्द द्वारा प्रयोग किये जाने वाला व्यक्तिगत निर्देशन व परामर्श शिक्षा या पूर्णता की अनुभूति के लिए एक विधि है। गुरू के आध्यात्मिक रूप से परिपक्व व्यक्तित्व का छात्र के अपरिपक्व व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता था।

(vi) क्रियात्मक एवं व्यावहारिक विधियां (Active and Practical Method) : इसके अंतर्गत साधु संगत, भ्रमण, सेवा कार्य, खेलकूद, शारीरिक शिक्षा, उद्योग, शिल्प एवं कौशलों की शिक्षा आदि क्रियात्मक व व्यावहारिक विधियां हैं।

16.4.3 शिक्षक एवं शिक्षार्थी, विद्यालय एवं अनुशासन

(Teacher and Students, School and Decipline)

शिक्षक (Teacher) : स्वामी जी के शिक्षक संबंधी विचारों पर प्राचीन भारतीय आदर्शवाद का गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। शिक्षा योजना में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षक का चरित्र, उसका व्यक्तित्व, उसके गुण, सभी बालकों के निर्माण में पथ-प्रदर्शक व सहायक होते हैं। शिक्षक को महान बनने के लिए उसमें बहुत से गुणों की अपेक्षा की जाती है। जैसेः-

1. शिक्षक में आध्यात्मिक एवं दिव्यता होनी चाहिए ताकि वह छात्रों में आध्यात्मिक एवं दिव्यता देख सके और उसका विकास कर सके।

2. शिक्षक मन, वचन एवं कर्म से धार्मिक होना चाहिए।

3. धार्मिक ज्ञान के अतिरिक्त शिक्षक में लौकिक एवं व्यावहारिक ज्ञान भी हो।

4. वह ब्रह्मचर्यपूर्ण, निष्पाप, पवित्रतापूर्ण, शक्तिवान, सहृदय, धैर्यवान, परोपकारी, क्षमाशील और

बलवान होना चाहिए।

5. शिक्षक को एक सफल मनोवैज्ञानिक (Successful Psychologist) होना चाहिए ताकि वह अपने छात्रों की आत्मा, प्रकृति, रूचि, आवश्यकता एवं सुझाव को समझ कर तदनुकूल शिक्षा प्रदान कर सके।

6. उसे त्याग, साहस, उत्साह, विश्वबंधुत्व, शक्ति, शालीनता आदि गुणों से विद्यार्थियों को समाज में आगे बढाना चाहिए।

शिक्षार्थी (Students)

1. शिक्षक के समान शिक्षार्थी में धर्मपरायण, कर्तव्यनिष्ठ एवं जिज्ञासु बनने के कुछ गुणों की अपेक्षा की है।

2. शरीर और मन से बलवान, ब्रह्मचर्य का पालन।

3. सत्य को जानने की प्रबल जिज्ञासा, चित को एकाग्र करने की क्षमता।

4. विद्यार्थी में विद्या प्रेम, विवेकशीलता, विचारशीलता, स्वप्रत्यत्नशीलता, कर्तव्यनिष्ठता, गुरू के लिए श्रद्धा भक्ति।

विद्यालय (School)

विद्यालय व्यक्ति के शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक एवं आध्यात्मिक विकास के केन्द्र के रूप में है। उन्होंने शिक्षा को गुरू-गृहवास बताया है। विद्यालय निश्चय ही गुरू-गृह होगा। यदि अध्यापक पवित्र, शुद्ध हृदय एवं उच्च विचार वाला, अच्छा आचरण वाला, योग्य विद्वान है तो उसका वास निश्चित रूप से उन गुणों से परिपूर्ण होगा, जिसमें इन गुणों का विकास हो सके। शुद्ध वायु से पूरित शान्ति, सुखद एवं सुरम्य स्थल में तथा आध्यात्मिक विकास में सहायक वातावरण विद्यालय का होना चाहिए।

अनुशासन (Discipline) :

शिक्षक बालकों के आत्ममसद्धि को स्वतंत्र रूप से विकसित होने और उसे समझने का अवसर प्रदान करे। स्वामी जी यह भी चाहते थे कि विद्यार्थी में ब्रह्मचर्य पालन, ज्ञानेन्द्रियों एवं कमैन्द्रियों पर पूर्णनिष्ठता, गुरू आज्ञा पालन, नम्रता से शीश झुकाना आदि गुणों का समावेश होना चाहिए।

अपनी उन्नति जानिए (Check Your Progress)

प्र. 1. ''उठो जागो, तब तक न रूको, जब तक कि परम लक्ष्य (Supreme Goal) की प्राप्ति न कर लो।'' यह कथन है-

(अ) स्वामी दयानन्द (ब) स्वामी विवेकानन् (स) स्वामी बालकृष्ण (द) स्वामी रामकृष्ण

प्र. 2. ''शिक्षा का लक्ष्य मानव सेवा द्वारा ईश्वर की सेवा करना है।'' यह कथन है-

(अ) स्वामी रामकृष्ण (ब) स्वामी दयानन्द (स) अरविन्द (द) स्वामी विवेकानन्द

प्र. 3. ''आज ऐसे बलिष्ठ मनुष्यों की आवश्यकता है, जिनकी पेशियां लोहे के समान दृढ़ एवं स्नानु फौलाद के समान कठिन हों।'' यह कथन है -

(अ) स्वामी दयानन्द (ब) रवीन्द्रनाथ टैगोर (स) स्वामीनित्यानन्द (द) स्वामी विवेकानन्द

प्र. 4. साधु संगत, भ्रमण, सेवा कार्य, खेलकूद, शारीरिक शिक्षा, उद्योग, शिल्प एवं कौशलों की शिक्षा है-

(अ) क्रियात्मक एवं व्यायवहारिक (ब) परामर्श विधियां

(स) केन्द्रीयकरण विधियां (द) उपदेश की विधि

भाग तीन – Part III

16.5 स्त्री शिक्षा (Women Education)

वास्तव में यदि गंभीरता के साथ देखा जाय तो यही ज्ञात होगा कि भारत के पतन और अवनति का एक प्रमुख कारण स्त्रियों की अशिक्षा है। इसका अनिवार्य फल यह हुआ कि जो जाति सभी प्राचीन जातियों में सर्वश्रेष्ठ थी वही आज पृथ्वी की समस्त जातियो में तुच्छ समझी जाने लगी। यथार्थ शक्ति पूजा का आविष्कार तथा विवेचन सर्वप्रथम हमारे देश के ही पूर्वजों ने किया था, आज हम लोग स्त्रियों के अनादर के प्रत्यक्ष दृष्टांत स्वरूप हो गये हैं। प्रत्येक भारतीय को चाहिए कि अपने समस्त ज्ञान को स्त्री और पुरूष में समान रूप से वितरित करे। स्त्री-शिक्षा से ही मानव जाति का महान लाभ संभव है। क्योंकि विस्तार ही जीवन है तथा संकीर्णता ही मृत्यु है। प्रेम ही जीवन है और घृणा ही मृत्यु है। अतः प्रत्येक भारतीय को जीवित रहने के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने सीमित ज्ञान को असीमित लोगों में प्रचार करे। बाल्यावस्था के लड़के-लड़की को यह भी ज्ञान नहीं होता कि वे समाज के भावी निर्माता हैं किसी अबोध बालिका पर मातृत्व का भार डालना ही क्या धर्म है। स्त्री-पुरूष का विवाह ज्ञान, आत्मविश्वास, परिश्रम आदि मानवीय गुणों के विकास के बाद ही अधिक उचित रहता है। लड़कों तथा लड़कियों दोनों को ही पुस्तकीय शिक्षा के अलावा चरित्र की

भी शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, जिससे समाज में सदाचार का वातावरण सदैव बना रहे। इससे उनके मानसिक बल की वृद्धि होकर बौद्धिक विकास होता है तथा उन्हें अपने दावों पर खड़े होने की भी शक्ति प्राप्त होती है।

भारतीय नारी की पवित्रता तथा सतीत्व बहुमूल्य निधि है जो उसे अतीत काल से प्राप्त हुई है। इसीलिए वह उसे स्वभावतः समझती है। सर्वप्रथम हमको इनमें इस आदर्श के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा एवं भक्ति उत्पन्न करनी चाहिए। यदि वे इस आदर्श पर दृढ़ हो गई तो इसके परिणामस्वरूप उनका चरित्र इतना बलवान तथा ़दृढ़ होगा कि वे उसके प्रभाव से अपने प्राणों की आहुति देकर भी अपनी पवित्रता की तथा सतीत्व की रक्षा करना अपना धर्म समझेंगी। जहां तक ब्रह्मचर्य व्रत का प्रश्न है, स्त्री प्रत्यक्ष उदाहरण से एवं राष्ट्रीय आदर्श का पालन करके ब्रह्मचर्य व्रत को भी निभा सकती है। उसके उच्च प्रयत्नों को देखकर लोगों के विचारों एवं आकांक्षाओं में महान क्रान्ति उपस्थित होगी। वास्तव में यदि हम वर्तमान विचारधारा के प्रवाह को बदल सकें, तो जनता में फिर उस पुरातन श्रद्धा के जाग्रत होने की कुछ आशा की जा सकती है। यदि हम सभी नवयुवक और युवतियां विवाह देरी से करने का व्रत पालन करें तो हम जान सकते हैं कि हममें कितना आत्मविश्वास होगा। श्रद्धा, आत्मविश्वास एवं आत्मबल जगाने का उपाय केवल यही है कि प्रत्येक नवयुवक और युवती सुशिक्षित तथा सुसंस्कृत बने। जनता इस प्रकार शिक्षित होने पर स्वयं ही अपना हानि-लाभ समझकर कुरीतियों को निकालकर बाहर करेंगी। वैसे, इस समय तो भारतीय सरकार ने भी बाल-विवाह, बहु-विवाह आदि पर कानूनी रोक लगा दी है।

स्त्री शक्ति की सजीव प्रतिमा है। मनु ने कहा है- ''जहां स्त्रियों का आदर होता है, वहां देवता प्रसन्न रहते हैं और जहां उनका आदर नहीं होता वहां सारे कार्य और प्रयत्न निष्फल हो जाते हैं।'' स्त्रियों की अनेक समस्याओं का समाधान शिक्षा द्वारा ही हो सकता है। स्त्रियों की शिक्षा का केन्द्र कर्म हो। धार्मिक शिक्षा-चरित्र गठन और ब्रह्मचर्य पालन-इन्हीं पर अधिक ध्यान देना चाहिए। भारतीय स्त्री का आदर्श सीता का चरित्र होना चाहिए। उन्हें त्याग की शिक्षा दी जाए।

आधुनिक युग में नारियों को आत्मरक्षा के उपायों को भी सीखना चाहिए। संघमित्रा, लीला, अहिल्याबाई, मीराबाई, झांसी की रानी के आदर्शो को अपनाकर स्त्रियों को पवित्रता, निर्भयता और ईश्वर परायणता के गुणों का अभ्यास करना चाहिए। समय आने पर उन्हें आदर्श माता बनना चाहिए। शिक्षित और धार्मिक माताओं के ही घर में महापुरूष जन्म लेते हैं। स्त्रियों की उन्नति से संस्कृति, ज्ञान, शक्ति और भक्ति का देश में जागरण हो जायेगा।

स्त्रियों को शिक्षा-कार्य भी अपने हाथ में लेना चाहिए। स्वामी जी कहते हैं- ''सुशिक्षिता और सच्चरित्रवती ब्रह्मचारिणियां शिक्षा-कार्य का भार अपने ऊपर लें। ग्रामों और शहरों में केन्द्र खोलकर स्त्री-शिक्षा के प्रचार का प्रयत्न करें। ऐसी सच्चरित्र निष्ठावान उपदेशिकाओं के द्वारा देश में स्त्री-शिक्षा का यथार्थ प्रचार होगा। इतिहास और पुराण, गृह-व्यवस्था और कला कौशल, गृहस्थ जीवन के

कर्तव्य और चरित्र-गठन के सिद्धान्तों की शिक्षा देनी होगी, और दूसरे विषय जैसे- सीना-पिरोना, गृह-कार्य, नियम, शिशु पालन आदि भी सिखाये जायेंगे। जप, पूजा और ध्यान शिक्षा के अनिवार्य अंग होंगे। दूसरे गुणों के साथ उन्हें शूरता और वीरता के भाव भी प्राप्त करने होंगे।

16.5.1 स्वामी विवेकानन्द के कार्य (Work of Swami Vivekanand)

स्वामी विवेकानन्द एक अद्वितीय एवं दिव्य व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे जो वास्तव में धर्म प्रचार एवं मानव कल्याण के लिए इस संसार में अवतरित हुए थे। स्वामी जी के आदर्शो एवं सिद्धान्तों को क्रियान्वित रूप प्रदान करने के लिए रामकृष्ण मिशन देश-विदेश में अनेक कार्य करता है, जिनमें से अग्रलिखित प्रमुख हैं:-

1. चिकित्सालय स्थापना एवं चिकित्सकीय सेवा
2. विद्यालयों की स्थापना एवं शिक्षा प्रचार
3. मातृत्व सुरक्षा एवं कल्याण कार्य
4. पिछड़े वर्गों एवं श्रमिकों के उद्धार एवं उत्थान का कार्य
5. जनसमूह में संपर्क रखना, जैसे-चिकित्सालयों में मरीजों से मिलना, पुस्तकालय एवं वाचनालय चलाना आदि।
6. सहायता सेवा कार्य
7. विदेशों में प्रचार कर सिद्धान्तों को फैलाना तथा आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के साधन-मार्ग को बताना।

प्रमुख रचनाएं:- 1. राजयोग, 2. ज्ञान योग, 3. भक्ति योग, 4. प्रेम योग, 5. कर्म योग, 6. देववाणी, 7. पत्रावली, 8. कर्म विज्ञान, 9. हिन्दू कर्म, 10. आत्मानुभूति तथा उसके कार्य, 11. मेरे गुरूदेव, 12. भारतीय व्याख्यान, 13. शिक्षा, 14. कर्म रहस्य आदि।

16.5.2 स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन व योगदान

(Estimate of Contribution of swami Vivekanand'sPhilosophy Education)

1. वेदान्त के सिद्धान्तों का व्यावहारिक जीवन में प्रयोग
2. शिक्षा के प्रचार पर अत्यधिक बल
3. राष्ट्रीय शिक्षा की योजना प्रस्तुत करना

4. शिक्षा की आध्यात्मिक विधि का प्रतिपादन

5. शिक्षा के आत्मानुभूति या आत्म साक्षात्कार उद्देश्य पर बल

6. भारतीय ज्ञान संस्कृति एवं महानता को विदेशों के समक्ष वास्तविक रूप में रखना।

अपनी उन्नति जानिए(Check your Progress)

प्र. 1. ‘‘प्रत्येक भारतीय को चाहिए कि अपने समस्त ज्ञान को स्त्री और पुरूष में समान रूप से वितरित करे।’’ यह कथन है-

(अ) स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्त्रियों के संबंध में

(ब) स्वामी विवेकानन्द द्वारा गरीब व्यक्तियों के संबंध में

(स) स्वामी विवेकानन्द द्वारा ईसाईयों के संबंध में

(द) स्वामी विवेकानन्द द्वारा शिक्षकों के संबंध में

प्र. 2. ‘‘भारतीय नारी की पवित्रता तथा सतीत्व बहुमूल्य निधि है, जो उसे अतीत काल से प्राप्त हुई है।’’ यह कथन है-

(अ) स्वामी दयानन्द (ब) रवीन्द्रनाथ टैगोर (स) अरविन्दो द) स्वामी विवेकानन्द

प्र. 3. स्वामी जी ने जिस धर्मसभा में भाग लिया था, वहां कहां हुई थी ?

(अ) बंगाल में (ब) दक्षिण भारत में (स) इंलैण्ड में(द) अमेरिका में

प्र. 4. स्वामी जी के अनुसार आध्यात्मिक सत्य पर किसका अधिकार होना चाहिए ?

(अ) धार्मिक व्यक्तियों का (ब) पण्डितों का (स) जनसाधारण का (द) राजनीतिज्ञों का

प्र. 5. राजयोग, ज्ञान योग, भक्ति योग, प्रेम योग, कर्म योग आदि किसकी रचनाएं हैं?

(अ) स्वामी विवेकानन्द (ब) स्वामी दयानन्द (स) श्री अरविन्दो (द) महात्मा गांधी

16.6 सारांश (Summary)

इस प्रकार विवेकानन्द ने स्त्री-पुरूष, धनी-निर्धन सभी में शिक्षा के प्रसार पर जोर दिया है। उनकी शिक्षा-प्रणाली भारत की दार्शनिक और आध्यात्मिक परम्परा के अनुरूप थी। वे स्वदेशी के जबर्दस्त हिमायती थे और पाश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण के विरूद्ध थे। जहां उन्होंने एक ओर भारत को पाश्चात्य विज्ञान और प्रवृत्तिवाद अपनाने के लिए कहा वहां उन्होंने दूसरी ओर ब्रह्मचर्य और आध्यात्म के प्राचीन आदर्शो को शिक्षा में सबसे प्रमुख स्थान दिया। युवक-युवतियों के लिए पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय उन्होंने साहस, आत्म-विश्वास, एकाग्रता, अनाशक्ति तथा उच्च नैतिक चरित्र के गुण निर्माण करने पर विशेष रूप से ध्यान दिया। उन्होंने शिक्षकों को शिक्षा देने के कार्य को व्यवसाय बनाकर एक मिशन के रूप में लेने की सलाह दी। उन्होंने सब कहीं संतुलित और समन्वयवादी दृष्टिकोण रखा। वे अंग्रेजी और पाश्चात्य संस्कृति के विरूद्ध नहीं थे। ऐसा होता तो पश्चिम में उनका इतना जोरदार स्वागत न होता। परन्तु, दूसरी ओर उन्होंने पश्चिम से जो कुछ ग्रहण किया उसको भारतीय संस्कृति का ऐसा जामा पहनाया कि वे कहीं भी स्वदेशी के आदर्श से नहीं हटते। महान् आदर्शवादी होते हुए भी उनके शिक्षा संबंधी विचार अत्यधिक व्यावहारिक और यर्थाथवादी हैं। उन्होंने तत्कालीन भारत की परिस्थितियों के अनुसार शिक्षा-प्रणाली की ऐसी रूपरेखा उपस्थित की जिससे देश स्वतंत्रता प्राप्त करके प्रगति के मार्ग में आगे बढ़े। उनके शिक्षा संबंधी विचार आज भी समकालीन शिक्षा-प्रणाली के सुधार के लिए मार्ग निर्देशक का कार्य कर सकते हैं।

16.7 कठिन शब्द (Difficult Words)

बहिर्जगत (External Words) :- यह जगत अनन्त काल से चला आ रहा है और यदि इसका नाश होता है तो वह पुनः अपने कारण उसी रूप में लौट आता है। अर्थात् ईश्वर में विलय हो जाता है।

अन्तर्जगत (Internal Words) :- अन्तर्जगत का एक क्रम होता है। वह सूक्ष्म से सूक्ष्मतम रूप में पाया जाता है। अन्तर्जगत अवस्थित, आत्म, स्वप्रकाश, सचिदानन्द, चिन्तमय एवं मुक्त है। उनका न जन्म होता है और न मृत्यु। अपितु वह धीरे-धीरे नीची अवस्था से उच्चावस्था को प्रकाशित होती है।

अध्यक्षात्मक विश्वेकता (Spiritual Universalism):- यदि आप ईश्वर को मनुष्य के चेहरे में नहीं देख सकते हैं तो उसको आप बादलों में कहां देख सकोगे। आप उसे निर्जीव पत्थर की मूर्ति में कैसे देख सकेंगे। मनुष्य समस्त प्राणियों में ब्रह्मा का दर्शन करता है। इस स्थिति में संपूर्ण विश्व में एकता की भावना आती है। जिसके कारण समाज में विश्वबंधुत्व की भावना दिखाई देती है।

16.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

भाग-एक

उत्तर-1 (ब) 1863

उत्तर-2 (अ) 1981

उत्तर-3 (द) स्वामी विवेकानन्द

उत्तर-4 (अ) स्वामी विवेकानन्द

उत्तर-5 (अ) सत्य

भाग-दो

उत्तर-1 (ब) स्वामी विवेकानन्द

उत्तर-2 (द) स्वामी विवेकानन्द

उत्तर-3 (द) स्वामी विवेकानन्द

उत्तर-4 (अ) क्रियात्मक व व्यावहारिक विधियां

भाग-तीन

उत्तर-1 (अ) स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्त्रियों के संबंध में

उत्तर-2 (द) स्वामी विवेकानन्द

उत्तर-3 (द) अमेरिका में

उत्तर-4 (स) जन-साधारण का

उत्तर-5 (अ) स्वामी विवेकानन्द

16.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

16.10 सहायक/उपयोगी सहायक ग्रन्थ (Useful Books)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

16.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Types Question)

प्र. 1. स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिए ?

प्र. 2. स्वामी विवेकानन्द के अनुसार पाठ्यक्रम और शिक्षण विधि का वर्णन कीजिए।

प्र. 3. नारी शिक्षा के संबंध में स्वामी जी के विचारों का वर्णन कीजिए।

प्र. 4. शिक्षक व शिष्य के संबंध में स्वामी जी के विचारों का वर्णन कीजिए।

प्र. 5. स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य क्या है और उसे किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है ?

इकाई –17 : रूसो (Rousseau)

17.1 प्रस्तावना

17.2 उद्देश्य

17.3 रूसो का जीवन परिचय

  17.3.1रूसो के दार्शनिक विचार (तत्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा,मूल्यमीमांसा)

  17.3.2 रूसो के शैक्षिक विचार

17.4 शिक्षा का संप्रत्यय

  17.4.1 शिक्षा का उद्देश्य

  17.4.2 शिक्षा का पाठ्यक्रम

17.5 शिक्षण विधियाँ

  17.5.1 अनुशासन , शिक्षक, विद्यार्थी , विद्यालय

  17.5.2 रूसो के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन

17.6 सारांश

17.7 शब्दावली

17.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

17.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

17.10निबंधात्मक प्रश्न

17.1 प्रस्तावना

इससे पहले की इकाइयों में अपने विभिन्न पाश्चात्य दार्शनिकों के दर्शन का अध्ययन किया तथा उनके शैक्षिक दर्शन का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया। इस इकाई में आप प्रकृतिवादी दार्शनिक जीन जैक्स रूसो के विभिन्न दार्शनिक पहलुओं का अध्ययन करेंगे।

जीन जेक्स रूसो को एक महान शिक्षा सुधारक, समाज सुधारक, युग-प्रवर्तक, राजनैतिक आधुनिक प्रजातन्त्रवाद के जनक तथा प्रकृतिवादी के रूप में जाना जाता है। रूसो ने तत्कालीन समाज व राजनीति का चित्र खींचा, उन्होंने समाज में व्याप्त बुराइयों का अपने लेखनी द्वारा विरोध किया तथा प्रकृति को अपने दर्शन का केन्द्र बनाया, रूसो ने आधुनिक युग में सबसे ज्यादा जोरदार शब्दों में अपने प्रभावशाली विचार प्रकट किए। रूसो ने प्रकृतिवाद को शिक्षा का आधार बनाया। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप रूसो के दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारों से अवगत होंगे तथा

शिक्षा के प्रसंग में रूसो के दार्शनिक विचारों को जान पायेंगे। वर्तमान परिदृष्य मे रूसो द्वारा प्रदत्त शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता को समझ सकेंगे।

17.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप:

1.रूसो एक प्रकृतिवादी दार्शनिक के जीवन से परिचित होगें।

2.रूसो के शैक्षिक विचारों का वर्णन कर सकेंगें।

3.रूसो के अनुसार, शिक्षा के पाठ्यक्रम का अध्ययन कर पायेंगे।

4.रूसो के अनुसार विभिन्न शिक्षण विधियों से परिचित हो पायेंगे।

5.रूसो द्वारा प्रतिपादित निषेधात्मक शिक्षा की व्याख्या कर पायेंगे।

6.शिक्षण की विभिन्न विधियों का वर्णन कर पायेंगे।

7.रूसो के अनुसार विद्यायल, अनुशासन, शिक्षक एवं शिक्षार्थी, कैसा हो? इसको स्पष्ट कर पायेगें।

8.रूसो के शिक्षा के क्षेत्र में योगदान को अपने शब्दों में व्यक्त कर पायेंगे।

17.3 रूसो का जीवन परिचय

"रूसो उन अनेक व्यक्तियों का अग्रदूत था, जिन्होंने उन पद चिन्हों पर कार्य किया जो उनके द्वारा दिखाए गये थे। आज वे पद-चिन्ह सामान्य जनता के लिए आम मार्ग बन गए है।" **पॉल मुनरो**

महान युग-नेता व आधुनिक शिक्षा-पद्धति के जनक 'जीन जेक्स रूसो' का जन्म 25 जून, 1712 ई0 को यूरोप के जिनेवा नगर में हुआ था। जन्म के समय ही इनकी माता का देहान्त हो गया और इनका लालन पालन उनकी चाची द्वारा किया गया। इनके पिता घड़ी बनाने वाले कारीगर के रूप में काम किया करते थे।

वह सदैव खुले वातावरण में घूमा करते थे जिसके फलस्वरूप व प्रकृति के उपासक बन गए। मात्र 6 वर्ष की आयु में ही उसने धार्मिक और ऐतिहासिक पुस्तकों के साथ ही उपन्यासों का अध्ययन करना भी प्रारम्भ कर दिया, जिससे उनकी मूल प्रवृत्तियों और आत्माभिव्यक्ति की भावना के विकास को बल मिला। विद्यालय की शिक्षा कठोर एवं कृत्रिम होने के कारण उन्हें इस ओर आकर्षित नहीं कर सकी। बचपन से ही वे प्रकृति-सौदर्य के प्रशंसक थे और उनका यह प्रकृति प्रेम बराबर बढ़ता गया जो कि बाद में उनके शिक्षा-सम्बन्धी सिद्धान्तों में दिखलाई पड़ता है। 21 वर्ष की आयु तक उनका

जीवन इसी प्रकार अनिश्चित रूप से चलता रहा। इसके बाद उन्हें एक झूठे आरोप में कठोर दण्ड भुगतना पड़ा, जिससे उनके हृदय को बड़ी ठेस पहूँची । इन सब बातों से वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जब व्यक्ति को सामाजिक नियमों, बाहा आडम्बरों, उपदेशों और दण्ड के द्वारा प्रकृति से दूर रखा जाता है तभी उसके मन में विचार पैदा होता है और उसकी स्वाभिविकता नष्ट हो जाती है।

25 वर्ष की आयु में रूसो फिर से साहित्य की ओर मुड़े और उन्होंने अध्ययन प्रारम्भ किया। अनेक लेखकों के संपर्क में आने से उन्होंने लिखना शुरू किया अपने विचारों को क्रमबद्ध रूप देने लगे। उस समय फ्रांस में पन्द्रहवें लुई का शासन था। वह अत्यधिक विलासी, निर्दयी और कठोर था। निम्न वर्ग के व्यक्तियों का शोषण हो रहा था। रूसो ने दु:खी और पीड़ित जनता के प्रति सहानुभूति दिखाई। रूसो ने अपनी लेखनी द्वारा पन्द्रहवें लुई के विरूद्ध आवाज उठाई और अपने लेखों द्वारा शोषण का विरोध किया।

रूसो ने समाज में व्याप्त बुराइयों को देखकर अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यकत की “प्रत्येक वस्तु जैसी की वह प्रकृति के सृष्टा के हाथ से आती है, अच्छी होती है, परन्तु मनुष्य के हाथों में आकर प्रत्येक वस्तु पतित हो जाती है।”

रूसो के इस वाक्य से उनका समाज के प्रति विरोध और प्रकृति के प्रति प्रेम स्पष्ट रूप से झलकता है। सन् 1750 ई0 तक रूसो की रचनाएँ विधिवत प्रकाशित होने लगीं। उनकी रचनाओं में मुख्य हैं-

The Discourse of Arts and Science- द डिस्कोर्स ऑफ आर्ट्स एंड साइंस

The Origin of Inequality among Men- द ओरिजन ऑफ इनिक्वेलिटी अमंग मैन

The New Heloise- द न्यू हिल्वाइज़

The Social Contract-द सोशल कॉन्ट्रेक्ट

Emile एमिल

‘Social Contract’ में रूसो ने अपने सामाजिक एवं राजनैतिक विचार प्रकट करते हुए वैयक्तिक दासता का विरोध किया है और तात्कालीन समाज और राजनीति का चित्र खींचा है। इस पुस्तक में रूसो ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि “मनुष्य जन्म से स्वतंत्र है, लेकिन सर्वत्र जंजीरो से जकड़ा हुआ है।”

एमिल (Emile) क्रन्तिकारी शिक्षा सम्बन्धी विचारों से युक्त है। इसमें रूसो ने बालक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं व शिक्षा सम्बन्धी प्रावधानों पर प्रकाश डाला है। वास्तव 'एमिल' शिक्षा सम्बन्धी 'शोध ग्रन्थ' है।

17.3.1 रूसो के दार्शनिक विचार Philosophical Thoughts of Rousseau

प्रत्येक विचारक के अपने विशिष्ट दार्शनिक विचार होते है। रूसो एक ऐसा विचारक है जिसने अपने दार्शनिक विचारों को क्रम बद्ध तरीके से प्रस्तुत नहीं किए। हमें उसके दार्शनिक विचारों का ज्ञान उसके आचरण, कथनों व लेखों से मिलता है। उसके आचरण, कथनों व लेख बड़े विविध है। कुछ स्थानों में वह आदर्शवादी प्रतीत होता है तो कुछ में प्रकृतिवादी। परंतु मानव जीवन को सुखी बनाने रूसो का विचार पुर्ण रूप से प्रकृतिवादी है। वे किसी अंतिम उद्देश्य को नहीं मानते।

रूसो के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का अपना अनूठा व्यक्तित्व होता है, उसकी अपनी विशेष इच्छाएँ रूचि व आवश्यकताएँ होती है, परन्तु समाज उन्हें स्वतंत्रता पूर्वक रहने नहीं देता, रूसो मनुष्य को सामाजिक बन्धनों से मुक्त रखने पर बल देता है।

रूसो के दार्शनिक विचारों की तत्वमीमांस

Metaphysics of Philosophical Thoughts of Rousseau

रूसो से ब्रहमाण्ड के सृजन के बारे में कुछ नहीं लिखा है, ना ही उसे ईश्वर और आत्मा का विश्लेषण किया है। लेकिन वह ईश्वर पर विश्वास करता है, उसने ईश्वर एवं आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार किया है तथा पादरियों का विरोध किया है।

रूसो के दार्शनिक विचारों की ज्ञानमीमांसा

Epistemology and Logic of Philosophical thoughts of Rousseau

रूसो के अनुसार प्रकृति का ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। प्रकृति से तात्पर्य दो प्रकार की प्रकृति से है-

1.एक वह प्रकृति जो मानव के प्रयास के बिना बनी है।

2.दूसरी प्रकृति वह है जो मनुष्य को जन्म से मिली है और जिसमें उसने दखल नहीं दिया है।

रूसो, सभ्यता एवं विकास को सभी कष्टों का कारण मानता है। इसलिए इनके ज्ञान को वह आवश्यक नहीं मानता। रूसो के अनुसार वही ज्ञान सत्य है जो कि स्वयं के अनुभव द्वारा सीखा गया हो।

रूसो के दार्शनिक विचारों की मूल्यमीमांसा(Axiology and Ethics of Philosophical thoughts of Rousseau)

रूसो ने मनुष्य को ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति माना है। वह यह जानता था कि ईश्वर ने मनुष्य को जन्म से अच्छा बनाया है। यही कारण है कि वह मनुष्य को हर प्रकार के सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक नियमों से स्वतंत्र रखना चाहता है।

17.4 रूसो के शैक्षिक विचार (Educational Thoughts of Rousseau)

रूसो से प्रकृतिवाद को शिक्षा का आधार बनाया। तत्कालीन नियमित आडम्बरपूर्ण और कृत्रिम प्रणाली का घोर विरोध किया।

रूसो के शैक्षिक विचार निम्न विचारों पर अधारित है-

1. प्रकृति शुद्ध, सहज, सुन्दर और सुखमय है।
2. मनुष्य की प्रकृति भी स्वतंत्र, शुद्ध, सहज, सुन्दर तथा सुखमय है। वह स्वतंत्रतापूर्वक रहना चाहता है, परन्तु फिर भी उसका जन्मजात स्वभाव है एक दूसरों से प्यार करना, एक-दूसरे का सहयोग करना तथा एक दूसरों को प्रसन्न करना।
3. समाज कई दोषो से भरा पड़ा है और प्रकृतिपूर्ण रूप से शुद्ध है।
4. हम सही ज्ञान प्रकृति से प्राप्त कर सकते है ना कि समाज से।
5. मनुष्य की इन्द्रियॉं ज्ञान का प्रवेश द्वारा है।
6. इन्द्रियों द्वारा शिक्षा, सच्ची शिक्षा है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. रूसो किस वाद के समर्थक हैं?

2. रूसो की किन्हीं दो रचनाओं के नाम लिखिए।

3. रूसो की किस पुस्तक में उसके मुख्यतः शिक्षा सम्बन्धी विचार मिलते हैं?

4. रूसो ने अपनी किस पुस्तक में अपने सामाजिक एवं राजनैतिक विचार प्रकट किए हैं?

5. रूसो, सभ्यता एवं विकास को सभी कष्टों का कारण मानते हैं। (सत्य/असत्य)

17.4 शिक्षा का संप्रत्यय Concept of Education

रूसो के समय में शिक्षा चर्च के हाथों में थी। वर्ग अन्तर अपने चरम पर था। गरीबों की शिक्षा के लिए कोई उचित व्यवस्था नहीं थी और जन शिखा को देय दृष्टि से देखा जाता था। रूसो ने इस सब के प्रति अपनी आवाज उठाई।

रूसो ने कहा कि शिक्षा एक प्रकृतिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चे की अंतर्निहित शक्तियों स्वभाविक रूप से विकसित किया जाता है, अत: सभी बालकों को प्राकृतिक विकास के लिए उचित अवसर मिलने चाहिए। रूसो ने ज्ञान देने के स्थान पर ज्ञान के विकास पर बल दिया। बच्चे को सच से परिचित कराना आवश्यक नहीं है बल्कि उसे सत्य की खोज करने के लिए सक्षम बनाना है। उसने सूचना के स्थान पर अनुभव पर बल दिया, और यह अनुभव इन्द्रियों द्वारा अर्जित किया जाए इस बात पर भी जो दिया।

रूसो ने इन्द्रियों को प्रशिक्षित कर उस अनुभव द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर सत्य की वास्तविक खोज पर बल दिया। रूसो ने इसको निषेधात्मक शिक्षा कहा।

इस प्रकार, रूसो के अनुसार, दो प्रकार की शिक्षा है-

निषेधात्मक शिक्षा – Negative Education

सकारात्मक शिक्षा निश्चयात्मक शिक्षा- Positive Education

रूसो के अनुसार- “”मैं निश्चयात्मक शिक्षा उसे कहता हूँ जो समय से पहले ही मस्तिष्क को परिपक्व बनाना चाहती है और बालक को प्रौढ़ मनुष्य के कर्तव्यों को करने का निर्देश देती है।””

“I call positive education one that tends to form mind prematurely and instruct the child in the duties that belong to man.”

निषेधात्मक शिक्षा Negative Education

बालक की प्राकृतिक शक्तियों और प्रवृत्तियों के अनुसार शिक्षा देना तथा ज्ञानेन्द्रियों का विकास करना ही निषेधात्मक शिक्षा का उद्देश्य है। रूसो के अनुसार- “शिक्षा सदगुण नहीं प्रदान करती, यह दुगुर्णो से बचाती है, यह सत्य बोलना नही सिखलाती, यह झूठ बोलने से बचाती है। यह बालक को उस ओर अन्मुख बनाती है जो उसे सत्य की ओर ले जाएगा और जब वह समझ सकने की अवस्था में पहुँचेगा तो वह इसे प्रेम करने की शक्ति प्राप्त कर लेगा।”

निषेधात्मक शिक्षा में रूसो ने निम्न बिन्दुओं पर बल दिया है-

इन्द्रिय प्रशिक्षण पर बल- Stress on training of sense organs.

पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर, अनुभव द्वारा सीखना- Learning by experience, in place of bookish Knowledge.

अपनी प्रकृति के अनुसार इसमें बच्चे बाध्य नहीं हैं, वे प्राकृतिक वातावरण में बाध्य नहीं हैं, वे प्राकृतिक वातावरण में अपने विकास के लिए स्वतंत्र हैं, बच्चों को मौखिक निर्देश नहीं दिये जाते बल्कि वे स्वयं काम करके सीखते हैं।

इन्द्रियों को प्रशिक्षित कर उस अनुभव द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर सत्य की वास्तविक खोज ही निषेधात्मक शिक्षा है। रूसो निषेधात्मक शिक्षा को ही वास्तविक शिक्षा मानता है। रूसो के अनुसार बच्चे की शिक्षा प्रारम्भ में निषेधात्मक ही होनी चाहिए।

17. 4.1 शिक्षा के उद्देश्य Aims of Education

रूसो ने समाज से अधिक महत्व व्यक्ति को दिया, अत: उसने शिक्षा द्वारा मनुष्य के व्यक्तिगत विकास पर बल दिया। मनुष्य के विकास का एक निश्चित क्रम है, वह कई अवस्थाओं से होकर आता है- शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था तथा युवावस्था और फिर प्रौढ़ बनता है। उसकी शारिरिक व मानसिक स्थिति विभिन्न अवस्थाओं में अलग-अलग होती है। रूसो ने विभिन्न अवस्थाओं के लिए विशिष्ट शैक्षिक उद्देश्य दिए है।

शैशवावस्था (Infancy)- जन्म से 05 वर्ष तक की अवस्था को शैशवावस्था कहते है। इसमें शिक्षा का मुख्य उद्देश्य शारीरिक विकास है। रूसो बच्चे को प्रारम्भ से ही स्वस्थ और शक्तिशाली बनाने के पक्ष में है। रूसो ने कहा- "समस्त दुष्टता निर्बलता से आती है। बालक को सबल बनाना चाहिए, जिससे कि वह कुछ ऐसा नहीं करेगा जो कि बुरा हो।"

Rousseau said: - "All wickedness comes from weakness. The child should be made strong so that he will do nothing which will be made."

रूसो के अनुसार, शिशु की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य शारीरिक विकास को प्रभावित करना ही होना चाहिए। अन्य अवस्थाओं में भी इस उद्देश्य के पक्ष में प्रयास किये जाने चाहिए। बालक को खेलने-कूदने, सोचने-समझने के काम में पूरी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए। बच्चे को उसके प्रवृत्तियों के स्वाभाविक विकास हेतु स्वतंत्रता दी जानी चाहिए।

बाल्यावस्था (5 से 12 वर्ष तक) Childhood- ये 5 से 12 वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक की जानेन्द्रियों का विकास करना है। बाल्यावस्था में शारीरिक विकास के साथ-साथ जानेन्द्रियों का विकास भी शिक्षा के मुख्य उद्देश्य हैं।

किशोरावस्था (12 से 15 वर्ष) Adolescence – 12-15 वर्ष तक किशोरावस्था में ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए जो उसके व्यक्तित्व के विकास में सहायक हो। इस अवधि में बालक को परिश्रम,निर्देश और अध्ययन के लिए अवसर मिलना चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य बालक को उपयोगी तथा जीवन का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना ही होना चाहिए। किशोर बालक को ऐसे अवसर प्रदान करने चाहिए जिनका उपयोग कर वह परिश्रम व अध्ययन द्वारा स्व-अनुभव से ज्ञान की खोज व विकास करें।

युवावस्था (15 से 20) Youth- यह काल 15 से 20 वर्ष तक माना जाता है। रूसो के अनुसार इससे पहले की तीन अवस्थाओं तक शरीर, ज्ञानेन्द्रियों व बुद्धि का विकास हो चुका हो तब युवकों के हृदय पक्ष का विकास जरूरी है। इस अवस्था में युवक की भावनाओं को समुचित रूप से जागरूक करना ही शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है। रूसो के अनुसार, "हमने उसके शरीर, ज्ञानेन्द्रियों एवं बुद्धि का विकास कर लिया है, अब उसे केवल हृदय प्रदान करना शेष है।"

According to Rousseau- "We have formed his body, his senses and intelligence, it remains to give him a heart"

बालक की अन्तर्निहित प्रवृत्तियों, इच्छाओं तथा भावनाओं का समयानुसार स्वतन्त्र तथा स्वाभाविक विकास में सहायता करना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। रूसो के अनुसार जीवन का उद्देश्य आनन्द प्राप्ति है। जो शिक्षा बालको के भावी सुखों के लिए वर्तमान के आनन्द का बलिदान करती है ऐसी शिक्षा नहीं दी जानी चाहिए।

इस प्रकार रूसो के अनुसार शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य थे-

शारीरिक विकास

ज्ञानेन्द्रियों का प्रशिक्षण

बौद्धिक विकास

भावात्मक विकास

व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करना

प्रवृत्तियों का स्वतंत्र एवं स्वाभाविक विकास करना

17.4.2 शिक्षा का पाठ्यक्रम Curriculum of Education

रूसो ने मानव विकास की मनोवैज्ञानिक अवस्थाएँ प्रस्तुत की और प्रत्येक अवस्था को ध्यान में रखते हुए विभिन्न उद्देश्य व पाठ्यक्रम निर्धारित किए। वह बच्चे पर कुछ भी थोपने के पक्ष में बिल्कुल नहीं था, उसके प्रकृति के अनुसार वातावरण सृजित करने की बात कही, अत: उसने विभिन्न आयु वर्ग की मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों के अनुसार पाठ्यक्रम विकसित किया। रूसो ने विभिन्न अवस्थाओं के अनुसार प्रत्येक अवस्था के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम किया है।

1.शैशवावस्था—Infancy:- इस अवस्था में बालक को खेल-कूद, व्यायाम, दौड़ना, घूमना, प्राकृतिक पदार्थ का अवलोकन करना, प्राकृतिक वातावरण का अनुभव करना इत्यादि, इस प्रकार की गतिविधियों के अवसर प्रदान करने चाहिए। रूसो किसी प्रकार के निर्देश एवं पुस्तकीय ज्ञान का विरोध करता है। इस आयु में बालक को प्रकृति की गोद में छोड़ देना चाहिए और मिट्टी, धूल में खेलने का अवसर देना चाहिए। इस आयु में बालक में किसी प्रकार की आदत डालने का प्रयास उचित नहीं है। रूसो का कहना था -"बालक को एक मात्र यही आदत विकसित करने की अनुमति दी जानी चाहिए कि उसमें कोई आदतें न हों।"

"The only habit the child should be allowed to contract is that of having no habit."

2.बाल्यावस्था-Childhood

बाल्यावस्था में भी रूसो का पाठ्यक्रम पुस्तकें नहीं है। उसकी शिक्षा निषेधात्मक शिक्षा पर आधारित है। बालक को पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर अनुभव द्वारा सीखने पर बल। इस अवस्था के पाठ्यक्रम में सम्मिलित हैं- निषेधात्मक शिखा, खेलना-कूदना, तैरना, देखना, सुनना, ज्ञानेन्द्रियों का स्वतंत्र प्रयोग करना, अनुभव प्राप्त करना, बच्चे की प्रकृति, भाषा, गणित एवं भुगोल की शिक्षा देनी चाहिए। उन्हें स्व-अनुभव द्वारा सीखना है।

3.किशोरावस्था Adolescence

इस अवस्था में शारीरिक एवं मानसिक विकास हो चुका है और अब किशोर अपनी गतिविधियों को समझ कर उनका मूल्यांकन करना प्रारम्भ कर देते हैं। वे नई खोज करने में रूचि दिखते है तथा उनके भीतर नया करने की प्रबल इच्छा होती है, अत: उन्हें प्राकृतिक विज्ञान की शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए जिससे की उनके भीतर अनुसंधान और आत्म-शिक्षा की शक्ति बढ़े। बालक को प्रकृतिक विज्ञान, भाषा, गणित, लकड़ी, काम, चित्रकला, सामाजिक जीवन और व्यवसाय संबंधी शिक्षा दी जानी चाहिए। किशोरावस्था में शिक्षा क्रियाओं और व्यवहार पर आधारित होनी चाहिए।

4.युवावस्था –Youth

युवावस्था के पाठ्यक्रम में नैतिक और धार्मिक शिक्षा को विशेष महत्व दिया है। रूसो वास्तव में इस अवस्था में निश्चयात्मक/ सकारात्मक शिक्षा देना चाहता है। बालक को सामाजिक जीवन के पाठ पढ़ाना, इसके लिए पौराणिक कथाएं, सामाजिक शिक्षा, साहित्य, दर्शन आदि पाठ्यक्रम में सम्मिलित किए जिससे कि प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, दया, क्षमा जैसे गुणों का विकास हो। नैतिक और धार्मिक शिक्षा के अतिरिक्त रूसो ने युवावस्था के पाठ्यक्रम में शारीरिक शिक्षा, संगीत, कला और काम शिक्षा को भी स्थान दिया है।

5.स्त्री शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम

Curriculum for Women Education

रूसो ने स्त्री-पुरूष को एक जैसा नहीं माना है। वह स्त्री को पुरूष का पूरक मानता है और उसका कोई स्वतन्त्र व्यक्तित्व नहीं मानता। उसने अपनी पुस्तक ‘एमील’ में अपनी काल्पनिक स्त्री पात्र ‘सोफी’, एमील की पत्नी को पढ़ा-लिखा, सभ्य महिला न बनाकर, उसे गृह कार्य की शिक्षा प्रदान की। जैसे- पाक कला, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, बच्चों का लालन-पालन आदि। उन्हें नाचना गाना तथा ललित कलाएँ भी सिखाई जानी चाहिए, किन्तु रूसो स्त्रियों को दर्शन, कला और विज्ञान की शिक्षा देना नहीं चाहता, क्योंकि उसका कहना है कि इसकी उन्हें कोई आवश्यकता नहीं है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6.रूसो के अनुसार, शिक्षा कितने प्रकार की है?उनके नाम लिखिए।

7.निषेधात्मक शिक्षा क्या है?

8.रूसो के अनुसार शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य लिखिए।

9.रूसो ने शिक्षा की अवधि को कितने भागों में बाँटा?

17.5 शिक्षण की विधियाँ Methods of Teaching

शिक्षा व्यवस्था और पाठ्यक्रम के समान शिक्षण-विधियों में भी रूसो प्रकृतिवादी है। उसने शिक्षा की प्रक्रिया में निम्नलिखित विधियों को महत्व दिया।

1.स्वानुभव द्वारा सीखना (Learning by Experience)- रूसो के अनुसार बच्चों को स्वानुभव द्वारा सीखने के अवसर प्रदान करने चाहिए। पुस्तक से ज्ञान अस्थायी होता है। अत: बच्चे स्वयं अपने अनुभव द्वारा ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

2.ज्ञानेन्द्रियों द्वारा शिक्षा- रूसो ज्ञानेन्द्रियों को ज्ञान का प्रवेश द्वारा मानता है, उसके अनुसार सबसे पहले ज्ञानेन्द्रियों का विकास होना चाहिए, जिससे कि ज्ञान का विकास स्वत: ही हो जाएगा। रूसो ने शिक्षण के समय ज्ञानेन्द्रियों के अधिक-अधिक उपयोग पर बल दिया है।

3.करके सीखना (Learning by doing)- रूसो ने रटने के स्थान पर क्रिया द्वारा सीखने का समर्थन किया, जहॉं बालक स्वयं कार्य करके, परीक्षण करके और ज्ञान का प्रयोग करके सीखता है। यह ज्ञान स्थायी एवं उपयोगी होता है।

रूसो ने पुस्तक से पढ़ाने की विधि को त्रुटिपूर्ण माना तथा उसके साथ पर करके सीखने, स्वानुभव द्वारा सीखने पर बल दिया। उसने यह भी कहा कि बच्चे को उसकी स्वयं की प्रकृति के अनुसार सीखने के अवसर प्रदान करने चाहिए तथा उसने बच्चे पर किसी भी प्रकार के बहाय दबाव का विरोध किया।

रूसो के इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर आगे चलकर कई मनोवैज्ञानिक विधियॉं विकसित हुई, जैसे- निरीक्षण विधि, अन्वेषण विधि, डाल्टन विधि आदि।

17.5.1 अनुशासन, शिक्षक, विद्यार्थी , विद्यालय

अनुशासन Discipline

प्रकृतिवादी रूसो बालक को अनुशासित करने के लिए उसे अधिक स्वतंत्रता देना चाहता है। रूसो बालक की स्वतंत्रता का समर्थक है और उस पर किसी प्रकार का बाहा नियन्त्रण नहीं चाहता है। रूसो के अनुशासन संबंधी विचार निम्न सिद्धान्तों पर आधारित हैं।

1.प्राकृतिक परिणामों का सिद्धान्त- Law of Natural Consequences

रूसो मुक्तात्मक अनुशासन का समर्थक है, बालक को मुक्त रखना चाहिए, उस पर किसीभी प्रकार का नियंत्रण नहीं होना चाहिए, वह सदा उनकी गलती के स्वाभाविक परिणाम के रूप में आना चाहिए, यह प्राकृतिक दण्ड की व्यवस्था है। यह प्राकृतिक अनुशासन है, जिसका अर्थ प्रकृति के नियमों का पालन है, यदि कोई इन नियमों का उल्लंघन करता है तो उसे प्रकृति द्वारा स्वयं तुरन्त दण्ड मिलता है। इस प्रकार स्वाभाविक दण्ड मिलने पर स्वयं समझ जाता है कि कौन सा कार्य अच्छा है और कौन सा बुरा।

2.स्वतंत्रता का सिद्धान्त- Principle of Freedom

स्वतंत्रता का अर्थ है कि बालक अपनी स्वयं की प्रकृति के अनुसार कार्य करे बिना किसी बाहा बन्धन के अपना विकास करे। स्वतन्ता पूर्ण वातावरण में बालक के नैसर्गिक गुणों को स्वतन्त्र रूप से

विकसित होने का अवसर मिलता है। इससे बालक को आत्मानुभूति एवं आत्म नियंत्रण का अवसर मिलता है। अगर बालक को अनियन्त्रित छोड़ दिया जाए तो वह अधिक अनुशासित हो सकेगा।

शिक्षक (Teacher)

समाज के विरोध में, रूसो ने शिक्षक को दोषायुक्त सामाजिक प्राणी माना है और रूसो शिक्षक को बच्चे की शिक्षा से हटाना चाहता है। उसने शिक्षक को गौण स्थान एवं शिक्षार्थी को प्रमुख स्थान दिया है। रूसो के अनुसार शिक्षक को कोई निर्देश नहीं देने चाहिए बल्कि उसे बच्चे के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण सृजित करना चाहिए। शिक्षक केवल एक दार्शनिक है जिसको केवन बालक के व्यवहार और अध्ययन के तरीके को देखना है। उसका कार्य बालक को नियंत्रित करना नहीं बल्कि उसे सहायता प्रदान करना है।

विद्यार्थी (Student)

रूसो मनुष्य की वैयक्तिकता का सम्मान करता है तथा उसके वैयक्तिक विकास कि लिए स्वतंत्रता देने के पक्ष में है। इसी वैयक्तिकता को महत्व देते हुए रूसो ने शिक्षा में बालक को महत्वपूर्ण स्थान दिया। उसकी शिक्षा बाल-केन्द्रित है। उसने शिक्षा को बालक की क्षमता, अभिवृद्धि तथा अवश्यकता के अनुसार बनाया है। रूसो ने बालक की प्रवृत्तियों तथा उसे विकास की अवस्थाओं के अनुसार शिक्षा को बनाने का प्रयास किया।

विद्यालय (School)

रूसो अपने समय के समाज एवं सामाजिक संस्थानों से पूर्ण रूप से असन्तुष्ट था। उसने अपने समय के विद्यालयी व्यवस्था को त्रुटिपूर्णमाना तथा उनका विरोध किया। उसने 'प्रकृति की ओर लौटो' Back to Nature का नारा दिया। उसने कहा कि समाज और उसकी सभ्यता ही सभी बुराईयों की जड़ है, अत: बच्चों को इसके कुप्रभावों से दूर रखना चाहिए तथा उन्हें प्रकृति की गोद में शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। वे समाज से दूर, प्रकृति की गोद में विद्यालय स्थापित करने के थे। उन्होंने विद्यालय में बच्चों को पूर्ण स्वतंत्रता देने पर बल दिया, उन पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं किया जाना चाहिए। रूसो ने समय सारिणी को भी एक बंधन के रूप में माना और यह कहा कि बच्चो को किसी भी समय कोई भी गतिविधि करने के लिए स्वतंत्रता रखना चाहिए। शिक्षक को विद्यालय का वातावरण सरल व शुद्ध बनाना चाहिए जिससे की बच्चे अपने प्राकृतिक विकास को प्रभावित कर सकें।

17.5.2 रूसों के शैक्षिक विचारों का मूल्य (Evaluation of Educational thought of Rousseau)

हर महान पुरूष अपने समय की देन होता है, उसके बनने मे समकालीन परिस्थियों का प्रभाव होता है। यही बात रूसो पर भी लागू होती है। रूसो फ्रांस की क्रांति का अग्रदूत और आधुनिक प्रजातंत्र का जनक माना जाता है।

जहां जक शिक्षा के क्षेत्र में रूसो के योगदान की बात है, प्लेटो और कॉमिनियस के बाद पाश्चात्य् जगत में रूसो का ही नाम लिया जाता है। एक समय ऐसा था जब रूसो के शैक्षिक विचारों ने शैक्षिक जगत में तरंगे उत्पन्न कर दी थी। परन्तु जिस तीव्रता के साथ रूसो के शैक्षिक विचारों को स्वीकारा गया। उसी तीव्रता के साथ उन्हें अस्वीकृत भी किया गया।

अब हम वर्तमान संदर्भ में रूसो के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन करेंगे।

रूसो ने शिक्षा को प्राकृतिक क्रिया माना, उन्होंने स्पष्ट किया की सीखना मनुष्य की जन्मजात प्रकृति है, अत: उसने स्वयं अपनी प्रकृति के अनुसार सीखने की अनुमति देनी चाहिए, जिसमें की किसी व्यक्ति या समाज का काई हस्तक्षेप न हो।

यह स्पष्ट है कि मनुष्य में सीखने की इच्छा और शक्ति जन्म से ही होती है, परन्तु वह सीखता तभी है जब उसके और शिक्षक के मध्य परस्पर बात-चीत होती है। शिक्षा एक क्रियाशील एवं गतिशील प्रक्रिया है। यह समाज द्वारा निर्धारित की गई एक सामाजिक प्रक्रिया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे एक समाज अपनी सभ्यता एवं संस्कृति का निरंतर विकास करता है।

1.रूसो ने शिक्षा की अवधि को चार स्तरों में बॉटा और हर स्तर के भिन्न शैक्षिक उद्देश्य निर्धारित किए। रूसो द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यो में, वर्तमान संदर्भ में कुछ दोष परिलक्षित होते है। रूसो ने एक स्तर में एक ही उद्देश्य की प्राप्ति पर बल दिया, जबकि शिक्षा एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है और किसी भी उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक है।

2.रूसो मनुष्य को जन्म से सरल और शुद्ध निर्दोष मानता है और उसके प्राकृतिक विकास में बल देता है। जबकि तथ्य यह है कि मनुष्य जन्म से ही एक उच्च पशु है और उसे एक मनुष्य बनाने के लिए उसका सामाजिक विकास आवश्यक है।

3.रूसो ने राजनीतिक व्यवस्था और नागरिकता की शिक्षा को महत्व नहीं दिया जबकि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह अत्यन्त आवश्यक है।

4. रूसो ने मानव विकास की मनोवैज्ञानिक अवस्थाएं प्रस्तुत की। उन्होंने हर अवस्था के लिए भिन्न शैक्षिक उद्देश्य एवं पाठ्यक्रम रखा। यह बात हमें रूसो से भी सीखने को मिली कि पाठ्यक्रम का निर्माण बालक की शारीरिक एवं मानसिक योग्यताओं के आधार पर करना चाहिए।

5.शिक्षा से कत्रिमता को दूर रखने के रूसो के प्रयास सराहनीय हैं। वे बालक को समाज के दोषों से दूर प्रकृति की गोद में रखना चाहते हैं।

6. बालक के प्राकृतिक विकास हेतु उसे पूर्ण स्वतंत्रता देना और बालक को उसकी रुचि,आवश्यकता एवं योग्यता के आधार पर शिक्षा देना, रूसो के इन विचारों का समर्थन आज भी किया जाता है।

7.सब रूसो के इस विचार से सहमत है कि बालकों को अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सीखने, स्वानुभव द्वारा सीखने के अवसर प्रदान करने चाहिए। परन्तु समाज से दूर प्रकृति की गोद में बालक को रखना असमान्य है तथा किसी को भी स्वीकार्य नहीं है।

रूसो ने अनुशासन के दो सिद्धान्त दिए-

1.पूर्ण स्वतंत्रता का सिद्धान्त (Complete Freedom)

2.प्राकृतिक परिणाम (Natural Consequences)

पूरी तरह से स्वतंत्रता का सिद्धान्त एक त्रुटिपूर्ण सिद्धान्त है। यह बच्चों को उच्छृंखल बनाने की संभावना भी अपने अन्दर छिपाए हुए है। यह अव्यवस्था को जन्म देगा। स्वतंत्रता को एक सीमा में बॉधना भी लाभप्रद होता है। रूसो के अनुसार प्राकृतिक परिणाम (दण्ड) स्वयं ही अनुशासन प्रदान करते हैं। यह सिद्धान्त उचित नहीं है।

शिक्षक की भूमिका को लेकर रूसो के विचारों में विरोधाभास है। एक तरफ रूसो शिक्षक को बुराइयों से लिप्त मानता है और बालक को शिक्षक एवं बुराईयों से दूर प्रकृति के नजदीक रखना चाहता है और दूसरी ओर वह शिक्षक से अपेक्षा करता है कि वह बालक को प्राकृतिक रूप से सीखने में सहायता प्रदान करें।

शिक्षक का कार्य केवल सहायता प्रदान करने तक ही सीमित नहीं है। यह उसका कर्तव्य है कि वह बालक को में ऐसे गुणों का संचार करे जिससे कि उनका संपूर्ण विकास हो और वे प्रगति की ओर अग्रसर हो।

रूसो समकालीन समाज और सामाजिक संस्थाओं से पूर्ण रूप से असंतुष्ट था। वे विद्यालय द्वारा बालकों पर थोपे गए नियंत्रण का असमर्थन करते है और बालक को स्वतंत्रता देने के पक्षधर हैं। उन्होंने तो विद्यालय की समय सारिणी का भी विरोध किया।

विद्यालय का निर्माण दूषित समाज से दूर प्राकृति की गोद में करने के रूसी के विचार से सभी सहमत है। समाज को दोष रहित करने का काम शिक्षा का है अत: विद्यालय का वातावरण आदर्श होना चाहिए।

रूसो विद्यालय में समय सारिणी का विरोध करता है, परन्तु यदि विद्यालय में समय सारिणी ना हो और विद्यालय की कार्य प्रणाली निर्धारित ना हो तो शिक्षक को अपनी कार्य व्यवस्था में कठिनाई का सामना करना होगा। एक व्यवस्थापित एवं अनुशासित कार्य प्रणाली हेतु समय सारिणी का महत्व होता है। बिना समय सारिणी का पालन कर हम बालक को पशु बनाएगें जबकि मनुष्य कि विशेषता है कि वह पूर्णरूप से नियोजित होकर कार्य करता है और बिना नियोजन एवं समयबद्धता के मनुष्य विकास की ओर अग्रसर नहीं हो सकता।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

10.युवावस्था के पाठ्यक्रम में _____ और _____ शिक्षा को विशेष महत्व दिया है।

11.रूसो ने किन शिक्षण विधियों को महत्व दिया?

12.रूसो के अनुशासन संबंधी विचार किन सिद्धान्तों पर आधारित हैं।

13. रूसो ने शिक्षक को ______ स्थान एवं शिक्षार्थी को ______ स्थान दिया है।

14.रूसो ने ____ की ओर लौटो का नारा दिया|

15.रूसो ने विद्यालय में समय सारिणी को एक बंधन के रूप में माना है। (सत्य/असत्य)

17.6 सारांश (Summary)

रूसो के शिक्षा सम्बन्धी विचार प्रकृतिवादी की श्रेणी में आते हैं। रूसो के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का अपना अनूठा व्यक्तित्व होता है, उसकी अपनी विशेष इच्छाएॅ रूचि व आवश्यकताएॅ होती है, परन्तु समाज उन्हें स्वतंत्रता पूर्वक रहने नहीं देता, रूसो मनुष्य को सामाजिक बन्धनों से मुक्त रखने पर बल देते हैं। रूसो के अनुसार प्रकृति का ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। रूसो के अनुसार वही ज्ञान सत्य है जो कि स्वयं के अनुभव द्वारा सीखा गया हो।

रूसो ने मनुष्य को ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति माना है।वह यह जानता था कि ईश्वर ने मनुष्य को जन्म से अच्छा बनाया है। यही कारण है कि वह मनुष्य को हर प्रकार के सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक नियमों से स्वतंत्र रखना चाहता है।

रूसो से प्रकृतिवाद को शिक्षा का आधार बनाया। तत्कालीन नियमित आडम्बरपूर्ण और कृत्रिम प्रणाली का घोर विरोध किया। रूसो ने कहा कि शिक्षा एक प्रकृतिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चे की अंतर्निहित शक्तियों स्वभाविक रूप से विकसित किया जाता है। रूसो ने इन्द्रियों को प्रशिक्षित कर उस अनुभव द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर सत्य की वास्तविक खोज पर बल दिया।

रूसो ने समाज से अधिक महत्व व्यक्ति को दिया, अत: उसने शिक्षा द्वारा मनुष्य के व्यक्तिगत विकास पर बल दिया। रूसो ने मानव विकास की मनोवैज्ञानिक अवस्थाएँ प्रस्तुत की और प्रत्येक अवस्था को ध्यान में रखते हुए विभिन्न उद्देश्य व पाठ्यक्रम निर्धारित किए। शिक्षा व्यवस्था और पाठ्यक्रम के समान शिक्षण-विधियों में भी रूसो प्रकृतिवादी है। शिक्षा व्यवस्था और पाठ्यक्रम के समान शिक्षण-विधियों में भी रूसो प्रकृतिवादी है। रूसो बालक को अनुशासित करने के लिए उसे अधिक स्वतंत्रता देना चाहता है। रूसो बालक की स्वतंत्रता का समर्थक है और उस पर किसी प्रकार का बाहा नियन्त्रण नहीं चाहता है। रूसो शिक्षक को गौण स्थान एवं शिक्षार्थी को प्रमुख स्थान दिया है। उसने कहा कि समाज और उसकी सभ्यता ही सभी बुराईयों की जड़ है, अत: बच्चों को इसके कुप्रभावों से दूर रखना चाहिए तथा उन्हें प्रकृति की गोद में शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

17.7 शब्दावली Glossary

1.तत्वमीमांसा- वास्तविकता का विज्ञान

2.ज्ञानमीमांसा- ज्ञान का विज्ञान

3.मूल्यमीमांसा- मूल्य का विज्ञान

4.निषेधात्मक शिक्षा- इन्द्रियों को प्रशिक्षित कर उस अनुभव द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर सत्य की वास्तविक खोज ही निषेधात्मक शिक्षा है।

5.सकारात्मक शिक्षा /निश्चयात्मक शिक्षा- जो समय से पहले ही मस्तिष्क को परिपक्व बनाना चाहती है और बालक को प्रौढ़ मनुष्य के कर्तव्यों को करने का निर्देश देती है।

17.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नो के उत्तर

1.प्रकृतिवाद

2.रूसो की किन्हीं दो रचनाओं के नाम हैं-

I द डिस्कोर्स ऑफ आर्ट्स एंड साइंस

II द ओरिजन ऑफ इनिक्वेलिटी अमंग मैन

3.एमिल

4. द सोशल कॉन्ट्रेक्ट

5.सत्य

6. रूसो के अनुसार दो प्रकार की शिक्षा है-

I निषेधात्मक शिक्षा

II सकारात्मक शिक्षा निश्चयात्मक शिक्षा-

7. इन्द्रियों को प्रशिक्षित कर उस अनुभव द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर सत्य की वास्तविक खोज ही निषेधात्मक शिक्षा है।

8. रूसो के अनुसार शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य हैं-

शारीरिक विकास

ज्ञानेन्द्रियों का प्रशिक्षण

बौद्धिक विकास

भावात्मक विकास

व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करना

प्रवृत्तियों का स्वतंत्र एवं स्वाभाविक विकास करना

9.रूसो ने शिक्षा की अवधि को दो भागों में बाँटा है।

10.नैतिक और धार्मिक

11.रूसो ने इन शिक्षण विधियों को महत्व दिया-

स्वानुभव द्वारा सीखना, ज्ञानेन्द्रियों द्वारा शिक्षा, करके सीखना

12.रूसो के अनुशासन संबंधी विचार इन सिद्धान्तों पर आधारित हैं-

प्राकृतिक परिणामों का सिद्धान्त

स्वतंत्रता का सिद्धान्त

13.गौण , प्रमुख

14.प्रकृति

15. सत्य

17.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)

1.लाल एण्ड पलोड, *एजुकेशनल थॉट एण्ड प्रैक्टिस*, मेरठ: आर0लाल प्रकाशन ,

2.पाण्डा, अ. कु. (2011). *शिक्षा दर्शन*. कानपुर: साहित्य रत्नालय्,

3.सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप., शिखा, च. (2010). *उदीयमान भारतीय समाज मे शिक्षक,* मेरठ: आर लाल प्रकाशन.

4.एलैक्स, शी. मै. (2008). *शिक्षा दर्शन*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

5.ओड, एल. के. *शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि*. राजस्थान ग्रंथ अकादमी.

17.10 निबन्धात्मक प्रश्न (Long Answer Questions)

1 रूसो के शैक्षिक विचारों के बारे में आप क्या जानते हैं? शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य एवं पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में विचारों की व्याख्या कीजिए।

2. रूसो के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कीजिए।

3. शिक्षण विधियों के सन्दर्भ में रूसो के क्या विचार हैं?स्पष्ट कीजिए।

4. निषेधात्मक शिक्षा पर एक टिप्पणी लिखिए।

इकाई 18: प्लेटो (Plato)

18.1 प्रस्तावना (Introduction)
18.2 उद्देश्य (Objectives)
भाग-एक (Part-I)
18.3 प्लेटो शिक्षा दर्शन (Education Philosophy of Plato)
18.3.1 प्लेटो का आदर्शवादी दर्शन (Idealistic Philosophy of Plato)
18.3.2 एथेन्स व स्पार्टा की शिक्षा प्रणाली (Education System of Athence and Sparta)
18.3.3 शैक्षिक पर्यावरण
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-दो 18.4 शिक्षा का अर्थ (Meaning of Education)
18.4.1 शिक्षा के कार्य तथा उद्देश्य (Function and Aims of Education)
18.4.2 पाठ्यक्रम (Curriculum)
18.4.3 शिक्षा के विभिन्न स्तर (Different Stages of Education)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-तीन (Part-III)
18.5 शिक्षण विधि (Method of Teaching)
18.5.1 स्त्री शिक्षा (Women Education)
18.5.2 दासों की शिक्षा (Education of Slaves)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
18.6 सारांश (Summary)
18.7 कठिन शब्द (Difficult Words)
18.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)
18.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)
18.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Books)
18.11 निबन्धात्मक प्रश्न ; (Essay Type Questions)

18.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION) :

प्लेटो के शिक्षा-दर्शन संबंधी विचार उसकी दो प्रमुख कृतियों 'रिपब्लिक' तथा 'लॉज' में प्रकट हुए हैं। अन्य संवादों में भी छुटपुट विचार मिलते हैं, किन्तु उपर्युक्त दो पुस्तकों में तो शिक्षा पर विषद विवेचन किया गया है। शिक्षा के इतिहास की दृष्टि से 'रिपब्लिक' शिक्षा संबंधी विचारों पर संचार में सबसे पहली पुस्तक है। 'रिपब्लिक' पहले लिखी गयी और 'लॉज' बाद में। दोनों पुस्तकों को पढ़ने से यह विदित होता है कि प्लेटो के शिक्षा संबंधी विचारों में एकरूपता नहीं है। 'रिपब्लिक' में वह नितान्त आदर्शवादी होकर हमारे समक्ष आता है और स्पष्ट घोषणा करता है कि अज्ञानता ही सारी बुराईयों की जड़ है, किन्तु 'लॉज' में वह अज्ञानता को इतना बुरा नहीं मानता। 'रिपब्लिक' की रचना प्लेटो ने अपने यौवन काल में की थी, 'लॉज' वृद्धावस्था में रची गई पुस्तक है। ज्यों-ज्यों प्लेटो के विचार परिपक्व होते गये त्यों-त्यों वह शिक्षा संबंधी विचारों में परिवर्तन करता गया। किन्तु अपने सभी संवादों में प्लेटो शिक्षा की क्षमता को स्वीकार करता है और वह समाज के कल्याण का आधार शिक्षा को ही मानता है।

18.2 उद्देश्य (OBJECTIVES) :

1. प्लेटो के शैक्षिक दर्शन व आदर्शवादी दर्शन का ज्ञान कराना।
2. तत्कालीन एथेन्स व स्पार्टा की शिक्षा प्रणाली से परिचित कराना।
3. शिक्षा का अर्थ, कार्य व उद्देश्यों से परिचित कराना।
4. शैक्षिक पाठ्यक्रम व शिक्षा के विभिन्न स्तरों का ज्ञान प्रदान कराना।
5. स्त्री शिक्षा व दासों की शिक्षा व्यवस्था से परिचित कराना

भाग-एक (PART-I)

18.3 प्लेटो शिक्षा दर्शन (EDUCATION PHILOSOPHY OF PLATO)

प्लेटो ने दो प्रकार के संसार की कल्पना की। एक तो प्रत्ययों का संसार और दूसरा इन्द्रियों में अनुभव होने वाला संसार। प्रत्ययों के जगत् को वह अमानवीय जगत् बताता है। सामान्य मनोवैज्ञानिकों की धारणा है कि प्रत्ययों का निर्माण चेतना के अंदर होता है और इन प्रत्ययों का स्रोत दृष्ट-जगत है, किन्तु प्लेटो का विचार इससे भिन्न है। वह प्रत्ययों के जगत् की वस्तुनिष्ठ सत्ता मानता है। दृष्ट-जगत् के पदार्थ प्रत्ययों के जगत् की नकल है। विशेष में कोई न कोई अपूर्णता रह जाती है, इसी से एक विशेष पदार्थ दूसरे विशेष पदार्थ से भिन्न होता है। प्रत्यय पूर्ण होता है, विशेष उस प्रत्यय

की अपूर्ण नकल होते हैं। प्रत्यय विशेष पदार्थो पर आधारित नहीं, वह तो उन विशेषों की रचना का आधार है। प्रत्यय कभी व्यक्ति का सूचक नहीं होता, वह श्रेणी का सूचक होता है। घोड़ा, हाथी, मनुष्य आदि के प्रत्यय इस या उस घोड़ा, हाथी या मनुष्य के प्रत्यय नहीं हैं प्रत्यय सदा पूर्ण होता है। दूसरे शब्दों में-प्रत्यय ही आदर्श होता है।

प्लेटो के अनुसार ज्ञान व्यक्ति वह है जो दृष्ट-जगत् से दृष्टि हटाकर प्रत्ययों की दुनिया का चिन्तन करता है। प्रत्ययों की दुनिया का ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। ज्ञान के संबंध में बतलाते हुए प्लेटो ज्ञान को तीन रूपों में बांटता है-इन्द्रियजन ज्ञान, सम्मतिजन्य ज्ञान तथा चिन्तनजन्य ज्ञान। इन्द्रियजन ज्ञान तथा सम्मतिजन ज्ञान अपूर्ण, अवास्तविक तथा मिथ्या ज्ञान है। चिन्तनजन्य ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। प्रत्ययों की दुनिया का ज्ञान इन्द्रियातीत है। यह चिन्तन का ही विषय है। विशेष पदार्थो का ज्ञान निम्न कोटि का होता है। एक पदार्थ किसी को हरा तो किसी को सफेद दिखाई पड़ सकता है। यह ज्ञान है ही नहीं। पदार्थो के रूप व परिमाण के विषय में लोग भिन्न सम्मलियां रख सकते हैं। अतः यह भी ज्ञान कहलाने का पात्र नहीं है। इससे ऊंचा ज्ञान रेखागणित में होता है। एक त्रिकोण की एक भुजा दो अन्य भुजाओं के योग से छोटी है। यह बोध सम्मति का विषय नहीं है, क्योंकि सभी त्रिकोणों की बाबत यही सत्य है। गणित के सत्य से भी ऊंचे स्तर पर तत्व ज्ञान है। प्लेटो की दृष्टि में तत्वज्ञान ही सही ज्ञान है।

प्लेटो के अनुसार संसार सत् और असत्-दोनों का संयोग है। प्रत्ययों की नकल होने के कारण सांसारिक पदार्थ सत् है और एकता व स्थिरता के अभाव के कारण असत् है। जहां तक दृष्ट जगत् की उत्पत्ति का संबंध है, प्लेटो यह मानता है कि यह स्रष्टा की क्रिया का फल है। स्रष्टा की क्रिया के पहले प्रकृति आकार-रहित एवं भेद रहित होती है। स्रष्टा इस अभेद प्रकृति को प्रत्ययों का रूप प्रदान करता है।

18.3.1 प्लेटो का आदर्शवादी दर्शन (Idealistic Philosophy of Plato)

दर्शन के क्षेत्र में प्लेटो को आदर्शवादी विचारधारा का समर्थक माना गया है। वस्तुतः प्लेटो ने अपने शैक्षिक विचारों में आदर्शवादी दृष्टिकोण का समावेश करने का प्रयत्न किया है। प्लेटो मानता था कि वास्तविक जगत् विचारों का जगत् होता है। (The real world is that of ideas only) उसके अनुसार यदि कोई वस्तु सत्य है तो वह केवल विचार (ideas) हैं। भौतिक जगत् का अस्तित्व केवल विचारों पर निर्भर है। उसके अनुसार केवल ब्रह्म ही सत्य है तथा जगत् मिथ्या है। यही पूर्ण है, शेष अपूर्ण है। व्यक्ति अपूर्ण है, जबकि ईश्वर पूर्ण है। प्लेटो के अनुसार, विचारों को शाश्वत, पूर्ण, अपरिवर्तनशील व निरन्तर (Eternal, perfect, unchangeable and everlasting) कहा जाता है। प्लेटो के आदर्शवादी दृष्टिकोण के अनुसार, जगत् दो हैं। प्रथम तो विचारों का जगत् है तथा दूसरा-उन वस्तुओं का जगत् है जो संसार में हैं तथा जिनका संपर्क विभिन्न वस्तुओं से होता है। विचारों के जगत् का अस्तित्व स्थायी होता है और इन्द्रिय-ज्ञात वस्तुओं का जगत् अस्थायी होता है

तथा विचारो के द्वारा ही उनका स्वरूप निर्धारित होता है। इन्द्रिय जगत् स्थूल व नश्वर है। वस्तुतः विचार का आधार पाकर स्थूल जगत् की वस्तुओं का अस्तित्व होता है। स्थूल व स्थिर जगत् में स्थायित्व की कमी होती है। इस जगत् में वस्तुओं का संबंध स्थान व समय से होता है। इनके बदलने से ये वस्तुएं भी परिवर्तित हो जाती हैं, नष्ट हो जाती हैं। भारतीय दर्शन में भी यही विचार पाए जाते हैं। अर्थात् स्थूल जगत् एवं मानव शरीर नाशवान है और उन पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि ये माया है। सच्चा जगत् तो विचार जगत् है। विचार जगत् मानसिक, सूक्ष्म व निरपेक्ष है। विचार जगत् को हम ईश्वर का मन (mind of God) भी कह सकते हैं। विचार आध्यात्मिक प्रकृति वाले होते हैं तथा वे अपने आप में शुद्ध एवं पूर्ण होते हैं। विचार का संबंध आत्मा से होता है। प्लेटो के अनुसार, आत्मा अमर व अनश्वर है। मनुष्य की देह में आत्मा होती है जो ज्ञानमुक्त होती है। शरीर नष्ट होने पर भी उसका अस्तित्व रहता है, क्योंकि वह परम तत्व का अंश होती है। अच्छे विचारों से युक्त जीवन होने के कारण मृत्यु के बाद आत्मा का निवास आनन्द लोक में होता है, जबकि इसके विपरीत बुरे कार्यो से अशुद्ध विचार होते हैं और इससे आत्मा उच्च श्रेणी मे न होकर निम्न श्रेणी के जीवों में प्रवेश करती है। इस तरह मनुष्य की उन्नति व अवनति से आत्मा को सुख व दुःख भोगना पड़ता है। प्लेटो का पुनर्जन्म में भी विश्वास था। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्लेटो के दार्शनिक विचारों पर भारतीय दर्शन की छाप स्पष्ट दिखाई देती है।

प्लेटो के अनुसार, आत्मा के निर्माण में तीन तत्व प्रमुख हैं:-

1. तृष्णा (Appetite)

2. इच्छा शक्ति (Will Power)

3. विवेक Wisdom)

विवेक मनुष्य के मस्तिष्क में, इच्छा-शक्ति हृदय में और तृष्णा नाभि में विद्यमान है। प्लेटो के अनुसार-तृष्णा का गुण संयम, इच्छा-शक्ति का धैर्य और विवेक का ज्ञान है। इन्हीं तीनों तत्वों व उनके गुणों से ही मनुष्य उन्नति करता है और आत्मा उच्च श्रेणी को प्राप्त करती है। इन्हीं गुणों के आधार पर प्लेटो ने मनुष्य जाति को तीन भागों में विभाजित किया है। तृष्णा की विशेषता वाला तीसरा वर्ग है जो उद्योगपति, व्यापारी, दुकानदार व किसान आदि का वर्ग है। इन्हें व्यवसायी कहा जा सकता है। इच्छा-शक्ति की विशेषताएं वाला वर्ग दूसरा है, जो सैनिकों का है तथा जिनका कर्तव्य सुरक्षा, युद्ध व्यवस्था, शान्ति स्थापना व नियम पालन आदि है। प्रथम वर्ग में दार्शनिक व शासक वर्ग आता है। इन लोगों की विशेषात है-ज्ञान एवं न्याय से युक्त विवेक या तर्क रखना। प्लेटो ने इस वर्ग को सबसे अधिक जिम्मेदारी दी है। इस वर्ग का विभाजन उसने जाति के ऊपर निर्भर न करके बुद्धि व ज्ञान पर किया है।

प्लेटो के अनुसार, यद्यपि सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् जीवन के उच्च मूल्य हैं, किन्तु सबसे उच्च वास्तविकता शिवम् की है। उनके अनुसार, नैतिकता के लिए कुछ सद्गुणों का विकास आवश्यक है और ये सद्गुण शिवम् से संबंधित होते हैं। उदारता, संयम, आत्म-नियंत्रण, धैर्यशीलता, साहस और ज्ञान ये समस्त शिवम् की ओर ले जाते हैं।

18.3.2 एथेन्स व स्पार्टा की शिक्षा प्रणाली

(Education System of Athence and Sparta)

प्लेटो से पहले यूनान में दो प्रकार की शिक्षा-प्रणाली प्रचलित थीं-एक तो एथेन्स की शिक्षा प्रणाली और दूसरे स्पार्टा की शिक्षा प्रणाली। एथेन्स की शिक्षा-प्रणाली पर राज्य का कोई नियंत्रण नहीं था और वह व्यक्तिगत प्रयास पर निर्भर थी। उसमें संपूर्ण शिक्षा तीन भागों में विभाजित थी-प्राथमिक, माध्यमिक और सैनिक अथवा उच्च शिक्षा। प्राथमिक शिक्षा में केवल साधारण अक्षर ज्ञान और अंकगणित सम्मिलित था। वह शिक्षा चौदह वर्ष की आयु तक पूरी होती थी। इसके बाद माध्यमिक शिक्षा का विधान था, जिस पर धनिकों का विशेषाधिकार था। इसके बाद उच्च शिक्षा के रूप में सैनिक शिक्षा दी जाती थी। इस प्रकार सैनिक शिक्षा को सर्वोच्च स्थान दिया गया था। एथेन्स की शिक्षा अत्यन्त व्ययसाध्य थी। वह व्यापक थी और उसके परिणामस्वरूप अच्छे नागरिकों का निर्माण होता था। उस पर राज्य का नियंत्रण नहीं था।

स्पार्टा की शिक्षा प्रणाली

स्पार्टा की शिक्षा प्रणाली एथेन्स की शिक्षा-व्यवस्था से बिल्कुल भिन्न थी। सात वर्ष की आयु के बाद स्पार्टा में बालकों पर राज्य का अधिकार माना जाता था और वही उनकी शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था करता था। संम्पूर्ण शिक्षा का आधार सैनिक प्रशिक्षण था। कलात्मक विद्याओं के अध्ययन पर कोई जोर नहीं दिया जाता था। एकमात्र कला युद्ध-कला ही सिखायी जाती थी। सैनिक अनपढ़ हुआ करते थे। उनका दृष्टिकोण संकीर्ण और अनुदार होता था। उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं हो पाता था, यद्यपि वे कुशल सैनिक होते थे।

दोनों का समन्वय

प्लेटो ने इन दोनों प्रचलित प्रणालियों के गुण-दोषों का सूक्ष्म अध्ययन किया और इनकी विशेषताओं को लेकर एक नई शिक्षा-प्रणाली उपस्थित की। जहां एक ओर वह एथेन्स की शिक्षा-प्रणाली की व्यापकता तथा अच्छे नागरिक पैदा करने की क्षमता की प्रशंसा करता था वहीं दूसरी ओर वह शिक्षा-व्यवस्था को व्यक्तिगत प्रयास पर छोड़ देने के विरूद्ध था। स्पार्टा की भांति प्लेटो शिक्षा पर राज्य का नियंत्रण चाहता था और वह चाहता था कि शिक्षा-व्यवस्था अच्छे नागरिकों के साथ-साथ

अच्छे सैनिकों का भी निर्माण करे, किन्तु फिर वह स्पार्टा के सैनिकों की भांति अपने सैनिकों का दृष्टिकोण संकीर्ण और अनुदार नहीं बनाना चाहता था। अस्तु, उसने एक ऐसी शिक्षा-प्रणाली उपस्थित की जो कि अधिक सर्वांग थी और जिसमें एथेन्स और स्पार्टा दोनों की शिक्षा-प्रणालियों की विशेषताएं सम्मिलित थीं।

18.3.3 शैक्षिक पर्यावरण Educational Environment

प्लेटो के अनुसार मानव-मस्तिष्क सदैव सक्रिय रहता है। मनुष्य अपने चारों ओर के परिवेश में जो कुछ देखता है, उसी की ओर दौड़ता है। बालक की इसी शक्ति का लाभ उठाकर अध्यापक को उसे शिक्षा देनी चाहिए। उसे बालक के परिवेश की वस्तुओं पर ध्यान देना चाहिए। बालक के आसपास सुन्दर वस्तुएं हों, उसमें स्वभावतया उनकी ओर आकर्षण हो और उसकी जिज्ञासा को प्रोत्ससाहन मिले। इस प्रकार परिवेश की वस्तुओं की ओर मस्तिष्क की प्रतिक्रिया से ही शिक्षा की प्रक्रिया आगे बढ़ती है। सुन्दर परिवेश मस्तिष्क को उत्तम खाद्य देता है, जिससे मस्तिष्क का विकास होता है, इसलिए बालक को बराबर सुन्दर परिवेश में रखा जाना चाहिए। बाल्यावस्था में ही नहीं बल्कि जीवन भर मनुष्य को सुन्दर परिवेश की अवश्यकता होती है, क्योंकि प्लेटो के अनुसार मनुष्य की शिक्षा आजीवन चलती रहती है। प्लेटो ने अपनी शिक्षा में मस्तिष्क के विकास को अत्यन्त उच्च स्थान दिया है।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र. 1 प्लेटो ने दो प्रकार के संसार की कल्पना की, एक तो प्रत्ययों का संसार और दूसरा-

(अ) इन्द्रियों में अनुभव होने वाला संसार

(ब) समाज में अनुभव होने वाला संसार

(स) मन में अनुभव होने वाला संसार

(द) विद्यालय में अनुभव होने वाला संसार

प्र. 2 प्लेटो ज्ञान को कितने रूपों में बांटता है ? उनके नाम लिखिए।

प्र. 3 'गणित के सत्य से भी ऊंचे स्तर पर तत्व ज्ञान है'-यह कथन है-

प्र. 4 'The Republic' और 'The Laws' किसके द्वारा रचित पुस्तक है ?

प्र. 5 प्लेटो के अनुसार आत्मा के निर्माण में तीन प्रमुख तत्व हैं:-

प्र. 6 प्लेटो ने सम्पूर्ण शिक्षा को कितने भागों में विभाजित किया है ?

प्र. 7 स्पार्टा में एक मात्र कला कौन सी सिखाई जाती थी ?

भाग-दो Part II

18.4 शिक्षा का अर्थ (Meaning of Education)

प्लेटो ने शिक्षा को नैतिक प्रशिक्षण की एक प्रक्रिया माना है। क्या नैतिकता की शिक्षा दी जा सकती है? दूसरे शब्दों में, क्या सद्गुण को सिखाया जा सकता है? इस प्रश्न ने प्राचीन यूनान के सभी दार्शनिकों का ध्यान आकृष्ट किया था। सुकरात ने सद्गुण को ज्ञान के रूप में देखा। उसके अनुसार ज्ञान ही सद्गुण है। प्लेटो ने सुकरात के विचारों को आगे बढ़ाते हुए ज्ञान और सद्गुण में भेद किया। प्लेटो के विचार के भेद में निम्नलिखित चार अंश सम्मिलित हैं:-

1. दर्शन संबंधी ज्ञान
2. विज्ञान
3. ललित कला
4. बुद्धि द्वारा निर्दोष समझी जाने वाली श्रेष्ठ तृप्ति

सद्गुण के संबंध में विचार करते हुए प्लेटो कहता है कि प्रमुख सद्गुण चार हैं:- बुद्धिमता, साहस, संयम और न्याय। यूनानियों की दृष्टि में अच्छा आदमी अच्छे राष्ट्र का अच्छा नागरिक होता है। शिक्षा का कार्य अच्छे राष्ट्र के अच्छे नागरिक तैयार करना है। राष्ट्र में कम से कम तीन वर्ग होने चाहिए। एक तो राष्ट्र के संरक्षक होने चाहिए। दूसरे, उन संरक्षकों के सहायक सैनिक होने चाहिए और संरक्षकों एवं सैनिकों के अतिरिक्त संम्पत्ति का उत्पादक-वर्ग भी होना चाहिए। प्रत्येक वर्ग को अपना निश्चित कार्य करना चाहिए। राष्ट्र में इस प्रकार की व्यवस्था हो कि प्रत्येक वर्ग अपना कार्य करे और दूसरे वर्ग को अपना कार्य करने दे। प्लेटो ने इस व्यवस्था को 'सामाजिक न्याय' नही कहा जा सकता है। क्योकि मूल भारतीय जिन्हे उसने शुद्र् कहा है उनके लिय उसने शिक्षा की व्यावसथा न करके अन्याय किया है क्योकि सामाजिक न्याय की स्थापना जिस प्रक्रिया द्वारा की जाती है वह शिक्षा ही है। जो गुण समाज के लिए आवश्यक हैं, वही सभी व्यक्तियो के लिए भी आवश्यक हैं। प्रत्येक व्यक्ति में इन चारों गुणों का संतुलित विकास होना चाहिए। सामाजिक न्याय की व्याख्या करते हुए प्लेटो कहता है कि राष्ट्र के अन्य दो वर्गो को संरक्षकों के अधीन रहना चाहिए। ठीक इसी प्रकार व्यक्ति में भी बुद्धि का शासन होना चाहिए। व्यक्ति के जीवन यही न्याय है।

नवीन काल में प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक शापनहार ने प्लेटो की इस सूची का विरोध किया है। वह कहता है कि बुद्धिमता और साहस जीवन के लिए आवश्यक तो हैं, किन्तु इन्हें सद्गुण का पद नहीं दिया जा सकता। बहुत से बुद्धिमान एवं साहसी व्यक्ति अपनी बुद्धि अथवा साहस का दुरूपयोग

करते हैं। संयम का पथ भी निश्चित नहीं है। जो पथ मेरे लिए संयम का है, वह अत्यधिक शीत-प्रधान टुण्ड्रावासी के लिए संयम का पथ नहीं हो सकता। कुछ भी हो, प्लेटो स्पष्ट रूप से कहता है कि बुद्धिमता, साहस, संयम और न्याय मौलिक सद्गुण हैं एवं इनमें प्रशिक्षित करने की प्रक्रिया ही शिक्षा है। अपनी अंतिम पुस्तक 'राजनियम' (लॉज) में वह कहता है-'शिक्षा से मेरा अभिप्राय उस प्रशिक्षण से है जो शिशुओं में उचित आदतों के निर्माण के द्वारा सदगुणों को उत्पन्न करता है। इस प्रशिक्षण से हमें यह योग्यता प्राप्त हो जाती है कि हम उस वस्तु से सदा घृणा करें, जिससे हमें घृणा करनी चाहिए और उस वस्तु से प्रेम करें, जिससे वास्तव में प्रेम करना चाहिए। मेरी दृष्टि में इसके प्रशिक्षण को ठीक ही शिक्षा कहा है।'

प्लेटो के अनुसार संयम तथा साहस का विकास अभ्यास से होता है। ये दोनों गुण आदतजन्य हैं। प्रारंभिक जीवन के उचित नियंत्रण से ही आदत तथा अभ्यास संभव है। आदत एवं अभ्यास के ही आधार पर बाद में बुद्धि-तत्व विकसित होता है। इसी बुद्धि-तत्व पर बुद्धिमता एवं न्याय के सद्गुण आधारित हैं। शिक्षा द्वारा इन्हीं सद्गुणों का विकास किया जाता है।

18.4.1 शिक्षा के कार्य तथा उद्देश्य (Function and Aims of Education)

प्लेटो ने शिक्षा को समूची सृष्टि की प्रक्रिया का एक आवश्यक कार्य माना है। शिक्षा की असीम शक्ति को प्लेटो स्वीकार करता है। प्लेटो के अनुसार शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

1. शिक्षा का प्रथम उद्देश्य नागरिकता के गुणों का विकास करना है। अच्छे राष्ट्र के निर्माण के लिए अच्छे नागरिकों की आवश्यकता होती है, अतः अच्छे नागरिक के गुणों का विकास करना शिक्षा का एक मुख्य कार्य है। इस दिशा में कार्य करने के लिए युवकों में संयम, साहस एवं सैनिक कुशलता प्रदान करना चाहिए।

2. शिक्षा का द्वितीय उद्देश्य राज्य की एकता की रक्षा करना है। सोफिस्टो ने यूनान में व्यक्तिवाद को प्रमुखता दी थी। प्लेटो ने व्यक्ति एवं राज्य के संबंध का सुन्दर दार्शनिक विवेचन किया और स्पष्ट किया कि व्यक्ति राज्य के लिए है। इकाई का अस्तित्व पूर्ण के लिए होता है। राज्य की स्थिति पूर्णता की है। अतः व्यक्ति को राज्य की वेदी पर अपने स्वार्थो को निछावर करने को तैयार रहना चाहिए। अतः शिक्षा का यह प्रमुख कार्य है कि वह बालकों में सहयोग की भावना उत्पन्न करे, समुदाय के प्रति विश्वास जगाए एवं भ्रातृत्व के भाव का विकास करे। इससे यह विदित होता है कि प्लेटो एथेन्स से अधिक स्पार्टा की ओर झुका हुआ था। किन्तु प्लेटो के समाजवाद में शिवम् निहित था तथा बुद्धि-तत्व प्रमुख था, जबकि स्पार्टा के समाजवाद में इनका अभाव था।

3. शिक्षा के तीसरे उद्देश्य के रूप में सत्यम्, शिवम् एवं सुन्दरम् के प्रति आस्था उत्पन्न करना है। जन्म के समय शिशु इन्द्रियों का दास होता है। धीरे-धीरे उसमें सत्यम्, शिवम् एवं सुन्दरम् के प्रति प्रेम उत्पन्न करना चाहिए।

4. सुकरात ने कहा था कि सद्गुण के विकास के लिए ज्ञान आवश्यक है। प्लेटो ने बुद्धिमता को सद्गुण का पद दिया है। प्लेटो के अनुसार विवेक ही सामाजिक व्यवस्था की नींव है। यह विवेक प्रत्येक शिशु में सुप्तावस्था में विद्यमान रहता है। अतः शिक्षा का एक यह भी उद्देश्य है कि इस गुप्त विवेक को जागृत किया जाए। विवेक से ही जीवन नियंत्रित हो सकता है। जब तक विवेक जागृत न हो जाए तब तक शिशु को बाड़ों के ही नियंत्रण में रखा जाए।

5. प्लेटो सामाजिक वर्गो का पक्षपाती था। उसके अनुसार समाज में तीन वर्ग मुख्य हैं। एक वर्ग संरक्षकों का है, दूसरा सैनिकों का, तथा तीसरा व्यवसायियों का। यूनानी समाज में उस समय दास-प्रथा प्रचलित थी और यूनान में अनेक दास विद्यमान थे। प्लेटो ने इन दासों की स्थिति को यथावत् स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार प्राचीन भारतीय समाज की भांति प्लेटो भी चार वर्णो में विश्वास करता था। भारतीय एवं प्लेटो की विचारधाराओं में इस अद्भुत साम्य के विषय में कुछ लोगों का कहना है कि प्लेटो भारत आया था और उसके विचारों पर भारतीय वर्ण-व्यवस्था की छाप पड़ी थी। प्लेटो के अनुसार शिक्षा का कार्य प्रत्येक व्यक्ति को इस योग्य बनाना है कि वह अपने अनुकूल सामाजिक वर्ग का सक्षम सदस्य बन सके।

6. शिक्षा का छठवां उद्देश्य मानव-शिशु को मानव बनाना है। उसमें मानवता के गुणों का विकास करना है।

7. शिक्षा का सातवां उद्देश्य अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करना है। अच्छा व्यक्तित्व संतुलित होता है तथा वह ‘स्व’ के नियंत्रण में रहता है। स्व-नियंत्रित व्यक्ति विभिन्न परिस्थितियों के अनुकूल आचरण करने की योग्यता रखता है। समंजन की यह योग्यता शिक्षा के द्वारा ही संभव है।

8. प्लेटो के अनुसार जीवन में अनेकानेक विरोधी तत्व विद्यमान रहते हैं। इन विरोधी तत्वों को पहचानना एवं इनमें संतुलन स्थापित करना शिक्षा का एक प्रमुख कार्य है।

18.4.2 पाठ्यक्रम (CURRICULUM)

प्लेटो ने पाठ्यक्रम की रूपरेखा निर्धारित करने में बालक की क्रियाओं का ध्यान रखा है। पाश्चात्य शिक्षा के इतिहास में प्लेटो ही प्रथम व्यक्ति था, जिसने पाठ्यक्रम पर कुछ व्यवस्थित विचार प्रकट किये।

प्लेटो के अनुसार जीवन के प्रथम 10 वर्षो में छात्रों को अंकगणित, रेखागणित, संगीत तथा नक्षत्र विद्या की कुछ बातें सिखानी चाहिए। अंकगणित तथा रेखागणित आदि का अध्ययन गिनती करना सीखने के लिए ही नहीं वरन् इन विषयों में निहित श्वाश्वत संबंधों को जानने के लिए करना चाहिए।

माध्यमिक स्तर के छात्रों के लिए कविता, गणित, खेलकूद, कसरत, सैनिक प्रशिक्षण, शिष्टाचार, संगीत तथा धर्मशास्त्र आदि की शिक्षा का विधान होना चाहिए। प्लेटो के विचार में तत्कालीन

यूनानी समाज में खेलकूद की शिक्षा अनुपयुक्त हो गयी थी। प्लेटो के अनुसार खेलकूद की शिक्षा का उद्देश्य प्रतियोगिताओं में भाग लेना न होकर मनोरंजन तथा शारीरिक गठन की प्राप्ति होना चाहिए। इससे आत्मा का उन्नयन भी संभव है। प्लेटो के शिक्षाक्रम में कसरत, नृत्य तथा खेलकूद का स्थान बड़ा ऊंचा था। ये तीनों एथेनी शिक्षा में पहले से ही विद्यमान थे। प्लेटो ने भी इन्हें उपयुक्त समझा। कसरत तथा खेलकूद से शारीरिक सौन्दर्य बढ़ता है। किन्तु कसरत तक खेलकूद आत्मा को भी प्रभावित करते हैं। संगीत और कसरत का यदि संयोग कर दिया जाए तो व्यक्तित्व का चतुर्मुखी विकास होता है। कसरत विहीन संगीतज्ञ कायर होगा, जबकि संगीत विहीन कसरती पहलवान आक्रामक पशु हो जाएगा। प्लेटो ने नृत्य की शिक्षा पर भी बल दिया है। नृत्य को उसने कसरत का ही एक अंग माना है। नृत्य युद्धकाल तथा शान्तिकाल दोनों के लिए उपयोगी है।

प्लेटो ने काव्य तथा साहित्य की शिक्षा पर भी बल दिया है। काव्य को उसने बौद्धिक जीवन का मूल स्रोत माना है। गणित का भी वह समर्थक था। आदर्श प्रत्यय ईश्वर की प्राप्ति के लिए तर्क आवश्यक है। इसका ज्ञान हमें गणित से प्राप्त होता है। गणित व्यावहारिक, सैनिक, राजनीतिक तथा कलात्मक जीवन के लिए आवश्यक है।

प्लेटो के पाठ्यक्रम में दर्शन का स्थान सर्व प्रमुख था। इसका अध्ययन उच्च श्रेणी के विद्यार्थी करें- ऐसा उसका प्रस्ताव था। उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में नीतिशास्त्र, दर्शन, मनोविज्ञान, अध्यात्मशास्त्र, प्रशासन, कानून की शिक्षा को स्थान मिलना ही चाहिए। प्लेटो ने 'डाइलेक्टिक' शब्द का प्रयोग वस्तुतः इन सभी विषयों के सम्मिलित ज्ञान के लिए किया है। डाइलेक्टिक में ये सभी विषय सम्मिलित है।। 'डाइलेक्टिक' का अध्ययन सत्य की खोज के लिए होता है।

18.4.3 शिक्षा के विभिन्न स्तर

(Different Stages of Education)

प्लेटो ने मानव के शारीरिक एवं मानसिक विकास के आधार पर भिन्न प्रकार की शिक्षा का समर्थन किया है। प्लेटो के अनुसार विभिन्न स्तरों के लिए निम्नलिखित ढंग से शिक्षा होनी चाहिए:-

1. शैशव काल - जन्म से 3 वर्ष की अवधि शैशव-काल है। इस काल में उसे पुष्टिकारक भोजन मिलना चाहिए। उसका लालन-पालन ठीक से होना चाहिए। इस काल में बालकों को सुख-दुःख की परिस्थितियों से यथासंभव बचाना चाहिए।

2. नर्सरी - यह समय 3 से 6 वर्ष की अवस्था का है। इस काल में शिक्षा प्रारम्भ कर देनी चाहिए। शिक्षा की दृष्टि से यह काल बड़ा महत्वपूर्ण है। इस काल में खेलकूद, परियों की कहानियों और सामान्य मनोरंजन की शिक्षा देनी चाहिए।

3. प्रारम्भिक विद्यालय का स्तर - बालकों की स्कूली शिक्षा इसी स्तर से प्रारम्भ होनी चाहिए। यह स्तर 6 वर्ष की आयु से 13 वर्ष की आयु तक का है। बालक तथा बालिकाओं की शिक्षा अलग-अलग होगी। ये छात्र द्वारा संचालित शिविरों मे रखे जाने चाहिए। इस अवस्था में शिक्षा के दो कार्य हैं-एक तो बालकों व बालिकाओं की अनियंत्रित क्रियाओं को नियंत्रित करना, दूसरे उनमें सामंजस्य स्थापित करना। इसके लिए संगीत, नृत्य तथा काव्य की शिक्षा दी जानी चाहिए। धर्म तथा गणित की भी शिक्षा इस अवस्था में प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

4. माध्यमिक शिक्षा - यह काल 13 से 16 वर्ष की अवधि का का है। 'रिपब्लिक' के अनुसार प्रारम्भिक स्तर पर ही अक्षर-ज्ञान प्रारम्भ कर देना चाहिए, किन्तु 'राज नियम' (लॉज) के अनुसार अक्षरों की शिक्षा को 13 वर्ष की अवस्था पर प्रारम्भ करना चाहिए। 13 से 16 वर्ष की अवस्था में गायन एवं वादन पर बल देना चाहिए। धार्मिक श्लोकों का गायन, कविता-पाठ तथा गणित के सिद्धान्तों की शिक्षा इस स्तर पर विशेष महत्व रखती है।

5. जिमनैस्टिक काल - यह काल 16 से 20 वर्ष की अवस्था का काल है। यह काल दो भागों में विभक्त रहना चाहिए-(क) 16-18 वर्ष की अवस्था का काल और (ख) 18-20 वर्ष की आयु का समय। पहली अवधि में शरीर को सबल बनाने के लिए भांति-भांति के शारीरिक व्यायाम करने चाहिए। यह सैनिक प्रशिक्षण की पृष्ठभूमि है और आगे की अवधि अर्थात् 18-20 वर्ष की अवधि पूरी तरह से सैनिक प्रशिक्षण में लगानी चाहिए। दूसरी अवधि में छात्रों को घुड़सवारी,, शस्त्र संचालन, सैन्य-संचालन, व्यूह रचना आदि की शिक्षा मिलनी चाहिए।

6. उच्च शिक्षा - उच्च शिक्षा की अवधि 20 से 30 वर्ष की अवस्था तक होगी। इस शिक्षा को ग्रहण करने की पात्रता सिद्ध करना प्रत्येक छात्र के लिए आवश्यक है। 20 वर्ष की अवस्था में छात्रों के ज्ञान की जांच होनी चाहिए। जॉच में जो छात्र उत्तीर्ण हों, वे ही उच्च शिक्षा के अधिकारी समझे जायें। इस काल में युवकों को अंकगणित, रेखागणित, संगीत, नक्षत्र विद्या आदि वैज्ञानिक विषयों का ज्ञान प्राप्त कराना चाहिए। इस काल में युवकों में विज्ञान के व्यवस्थित करने की क्षमता प्रदान करना है।

7. उच्चतम शिक्षा - 30 वर्ष की अवस्था में पुनः चुनाव होगा। तीस वर्ष की अवस्था में उच्च शिक्षा प्राप्त युवकों की परीक्षा की जायेगी और उत्तीर्ण युवक 5 वर्ष तक अग्रिम अध्ययन करेंगे। जो युवक अनुत्तीर्ण हो जायेंगे, वे शासन में कनिष्ठ अधिकारी होंगे। उत्तीर्ण युवक 5 वर्ष तक 'डाइलेक्टिक' का अध्ययन करेंगे। 'डाइलेक्टिक' के अध्ययन से युवक सच्चे ज्ञान को प्राप्त करेंगे और वे सत्य का दर्शन करने में समर्थ होंगे। सत्य के ज्ञान से युवकों में सद्गुण उत्पन्न होगा। 35 वर्ष की अवस्था में समाज में लौटेंगे और समाज के हितों के संरक्षक बनेंगे। 15 वर्ष तक ये दार्शनिक समाज के संरक्षक के रूप में प्रशिक्षित होंगे और उन्हें व्यावहारिक अनुभव प्राप्त होगा। 50 वर्ष की अवस्था में वे पदमुक्त हो सकते हैं और पद से निवृत्त होने के पश्चात् वे अपना जीवन चिन्तन, मनन एवं ध्यान में लगायेंगे तथा शिवम् का जीवन व्यतीत करेंगे।

अपनी उन्नति जानिए (Cheque your Progress)

प्र. 1. प्लेटो के अनुसार सद्गुण कितने हैं ? उनके नाम लिखो।

प्र. 2. ''प्रत्येक वर्ग अपना कार्य करे और दूसरे वर्ग को अपना कार्य करने दे।'' प्लेटो ने इस व्यवस्था को क्या कहा है ?

प्र. 3. ''शिक्षा का अंतिम उद्देश्य मानव-शिशु को मानव बनाना है, उसमें मानवता के गुणों का विकास करना है।'' यह कथन है-

प्र. 4. प्लेटो के अनुसार फिलासाफर (दार्शनिक) अर्थात् ज्ञान प्रेमी कितने वर्ष की आयु पर पदमुक्त हो सकते हैं ?

(अ) 45 वर्ष (ब) 50 वर्ष

(स) 55 वर्ष (द) 60 वर्ष

भाग-तीन (Part-III)

18.5 शिक्षण विधि (Method of Teaching)

प्लेटो के अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य चूंकि ज्ञान की खोज है, अतः शिक्षण विधि भी तद्रूप होनी चाहिए। प्लेटो ने शिक्षा की योजना में सर्वप्रमुख विषय 'तर्क' है अर्थात् विचारशील व्यक्तियों का वाद-विवाद। इस प्रकार शिक्षण विधि का प्रथम रूप है-तर्क विधि।

द्वितीय विधि के रूप में प्लेटो ने प्रश्नोत्तर विधि को स्थान दिया है। इस विधि का सूत्रपात सुकरात ने किया था। इसके तीन चरण हैं- उदाहरण, परिभाषा तथा निष्कर्ष। उदाहरण वार्तालाप से प्रारम्भ होता हे, फिर सामान्य गुणों का निर्धारण होता है ओर अन्त में निष्कर्ष निकाल लिया जाता है।

तृतीय विधि है, वार्तालाप विधि। इस विधि का आगे चलकर इतना प्रचार हुआ कि यह उच्च शिक्षा का माध्यम बन गई और इसे व्याख्यान विधि (Lecture Method) के नाम से पुकारा जाने लगा।

18.5.1 स्त्री शिक्षा (WOMEN EDUCATION)

प्लेटो ने स्त्री के महत्व को स्वीकार करते हुए बताया है कि पुरूष और स्त्री में कोई मौलिक भेद नहीं है। जो कार्य पुरूष कर सकते हैं, वह कार्य स्त्रियां भी कर सकती हैं। यह बात दूसरी है कि पुरूष अधिक बलवान होते हैं और स्त्रियों से कुछ शक्तिशाली होते हैं। पर ये भेद गुण का न होकर मात्रा का

है। अतः स्त्रियों और पुरूषों को एक-सी शिक्षा मिलनी चाहिए। खेलकूद, व्यायाम, घुड़सवारी, सैन्य संचालन आदि की शिक्षा केवल पुरूषों को ही नहीं वरन् स्त्रियों को भी मिलनी चाहिए।

विश्वास किया जाता है कि प्लेटो ही सर्वप्रथम ऐसे शिक्षा शास्त्री थे जिन्होंने शिक्षा को एक विधिवत् आकार प्रदान किया। उसने 'एकेडमी' स्थापित कर अपने विचारों एवं सिद्धान्तों को कार्य रूप में प्रस्तुत कर उसकी व्यावहारिकता सिद्ध करने का सफल प्रयास किया। उसका आदर्शवाद कोरा सिद्धान्त नहीं है। उदार शिक्षा की रूपरेखा निश्चित करने में आज भी प्लेटो के सिद्धान्तों का आश्रय लेते हैं। उसने स्त्री-शिक्षा के विषय में जो विचार व्यक्त किये, वे विचार आज दो हजार तीन सौ वर्ष बाद भी नवीन लगते हैं। उसके सिद्धान्तों में जीवन के शाश्वत मूल्यों की झलक मिलती है। प्लेटो का पाश्चात्य सभ्यता पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। ज्ञान के क्षेत्र में तो कुछ समय तक प्लेटो के सिद्धान्तों की व्याख्या करना ही ज्ञान-प्राप्ति का लक्ष्य बन गया। प्लेटो कई सौ वर्षो तक पश्चिमी धर्म, राजनीति, दर्शन, शिक्षा आदि पर छाया रहा और उसके मतों का समर्थन अथवा सिद्धान्तों का आलोचन ही विद्वता का लक्षण बना रहा। आज भी प्लेटो के विचार प्रेरणा के स्रोत हैं।

18.5.2 दासों की शिक्षा (Education of Slaves)

जैसा पहले कहा जा चुका है, प्राचीन यूनान में दासों की संख्या बहुत अधिक थी और उनके अस्तित्व को प्लेटो ने स्वीकार किया था। प्लेटो ने दासों को नागरिक नहीं माना। उसके अनुसार दास राज्य के नागरिक नहीं हो सकते और न वे राज्य के किसी सार्वजनिक कार्य में भाग ले सकते हैं। अतः प्लेटो ने दासों को शिक्षा से भी विमुख रखा। दासों के लिए उसने कहा कि उन्हें अपने परिवार का पेशा अपनाना चाहिए और घरेलू कामों मे ही लगे रहना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्लेटो ने शिक्षा पर बड़े विस्तार से विचार किया है। उसके व्यक्तित्व में यूनान की विद्वता का चरमोत्कर्ष मिलता है। स्थूल और सूक्ष्म का जिस सुन्दर ढंग से उसने समन्वय किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। उसने शिक्षा का जो रूप प्रस्तुत किया, वह आदर्शवादी शिक्षा का प्रमुखतम रूप है।

प्लेटो की शिक्षा-योजना में कुछ दोष भी समझ पड़ते हैं। उसके आलोचकों ने जिन बातों के लिए उसकी आलोचना की है, उनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं:-

1. प्लेटो का मनोविज्ञान का ज्ञान दोषपूर्ण था। उसने व्यक्तित्व को तीन वर्गो में रखा, जो आधुनिक खोजों के विपरीत है।

2. उसके सिद्धान्त प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तों से मेल नहीं खाते।

3. उसने दास प्रथा के विरूद्ध एक भी शब्द नहीं कहा, उलटे उसने इसे मान्यता प्रदान की।

4. उसने व्यावसायिक एवं प्राविधिक शिक्षा की उपेक्षा की।

5. उसने अपने सिद्धान्तों के व्यावहारिक पक्ष की ओर कम ध्यान दिया।

इन दोषों के होते हुए भी प्लेटो के सिद्धान्त उच्च कोटि के थे। वह प्रथम व्यक्ति था जिसने शिक्षा पर विधिवत् विचार किया और शिक्षा की एक योजना प्रस्तुत की। उसका आदर्शवाद कोरा सिद्धान्त नहीं है। उदार शिक्षा की रूपरेखा निश्चित मायने में आज भी लोग प्लेटो के सिद्धान्तों का आश्रय लेते हैं। उसने स्त्री-शिक्षा के विषय में जो विचार व्यक्त किये, वे विचार आज दो हजार तीन सौ वर्ष बाद भी नवीन लगते हैं। उसके सिद्धान्तों में जीवन के शाश्वत मूल्यों की झलक मिलती है।

अपनी उन्नति जानिए (Cheque your Progress)

प्र. 1. प्लेटो के अनुसार शिक्षण-विधि का प्रथम रूप क्या है ?

प्र. 2. प्लेटो के अनुसार शिक्षण-विधि का द्वितीय रूप क्या है ?

प्र. 3. तृतीय विधि, वार्तालाप विधि के दूसरे किस नाम से जाना जाता है ?

प्र. 4. 'पुरूष अधिक बलवान होते हैं और स्त्रियों से कुछ शक्तिशाली, पर, ये भेद गुण का न होकर मात्रा का है'। यह कथन है –

(अ) सुकरात (ब) रूसो (स) प्लेटो द) आगस्टीन

प्र. 5. प्लेटो ने मूल भारतीय अर्थात् दासों को शिक्षा से वंचित रखा। यह कथन है -

(अ) सत्य (ब) असत्य

18.6 सारांश (SUMMARY)

प्लेटो एक महान राजनीतिज्ञ, दार्शनिक एवं समाजशास्त्री ही नहीं अपितु एक महान शिक्षाशास्त्री और आदर्श शिक्षक भी था। उसका शिक्षा जगत में विशेष योगदान है-

1. शिक्षा के नैतिक एवं आध्यात्मिक पक्ष को स्वीकारते हुए छात्रों में चारित्रिक एवं नैतिक गुणों के विकास को महत्व दिया, जो हमेशा उपयोगी सिद्ध होगा।

2. शिक्षण कला के क्षेत्र में अनेक सुझाव दिये यथा-प्रारम्भिक शिक्षा आकर्षक हो, रोचक विधियों का उपयोग किया जाए, शिक्षा में खेल का महत्व, आसान से कठिन की ओर, बच्चे को शिक्षण प्रक्रिया में महत्व देकर उसका अग्रिम शिक्षा के लिए चयन अथवा बहिष्कार हेतु जांच प्रणाली।

3. मानव जीवन के चरम उद्देश्य आत्मानुभूति का प्रमुख साधन शिक्षा को स्वीकार किया।

4. शिक्षा को लोकव्यापी बनाने के उद्देश्य से निःशुल्क एवं आवश्यक शिक्षा का विचार प्रस्तुत किया।

5. प्लेटो ने शिक्षा द्वारा व्यक्तित्व के विकास के साथ-साथ सामाजिक विकास के पक्ष को भी शामिल किया तथा आदर्श नागरिक बनाने पर जोर दिया।

6. नागरिकों को योग्य तथा उपयोगी बनाने हेतु उनकी शिक्षा का दायित्व राज्य को सौंपा।

7.प्लेटो ने पुरूष और नारी के लिए समान शिक्षा करने को कहा।

8. प्लेटो ने शैशवकाल से लेकर सम्पूर्ण जीवनकाल हेतु एक सुविचारित, सुव्यवस्थित आदर्श शिक्षा योजना तैयार की।

9. बालक के शरीर, मन और आत्मा के विकास को महत्व देकर बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास को महत्वपूर्ण माना।

10. शिक्षक को न केवल शिक्षा प्रक्रिया में ही बल्कि समाज में भी श्रेष्ठ स्थान प्रदान किया, साथ ही उसके आदर्श गुणों और कर्तव्यनिष्ठा की अपेक्षा की।

18.7 कठिन शब्द (Difficult Words)

आदर्शवादी दृष्किोण के अनुसार जगत्:- जगत् दो हैं, प्रथम तो विचारों का जगत् है तथा दूसरा उन वस्तुओं का जगत् है जो संसार में हैं तथा जिनका सम्पर्क विभिन्न वस्तुओं से होता है। विचारों के जगत् का अस्तित्व स्थायी होता है और इन्द्रिय-ज्ञात वस्तुओं का जगत् अस्थाई होता है।

दार्शनिक:- जिनके पास ज्ञान Knowledge का गुण है।

सद्गुण:-सद्गुण चार हैं:- बुद्धिमता, साहस, संयम और न्याय।

डाइलेक्टिक:- प्लेटो ने डाइलैक्टिक शब्द का प्रयोग वस्तुतः इन सभी विषयों के सम्मिलित (नीतिशास्त्र, दर्शन शास्त्र, मनोविज्ञान, अध्यात्मशास्त्र, प्रशासन, कानून) ज्ञान के लिए किया है। डाइलैक्टिक का अध्ययन सत्य की खोज के लिए किया है।

जिमनैस्टिक काल:- यह काल 16 से 20 वर्ष की अवस्था का काल है। यह काल दो भागों में विभक्त रहना चाहिए- (ए) 16 से 18 वर्ष की अवस्था का समय (बी) 18 से 20 की आयु का समय

18.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

भाग-एक (PART-I)

उत्तर-1 इन्द्रियों में अनुभव होने वाला संसार

उत्तर-2 प्लेटो ज्ञान को तीन रूपों में बांटता है-इन्द्रियजन्य ज्ञान, सम्मतिजन्य ज्ञान व चिन्तनजन्य ज्ञान

उत्तर-3 प्लेटो का

उत्तर-4 प्लेटो की

उत्तर-5 प्लेटो के अनुसार आत्मा के निर्माण में तीन प्रमुख तत्व हैं- तृष्णा (Appetete), इच्छा शक्ति (Will power), विवेक (Wisdom).

उत्तर-6 प्लेटो ने सम्पूर्ण शिक्षा को तीन भागों में बांटा है- प्राथमिक, माध्यमिक, सैनिक तथा उच्च शिक्षा

भाग-दो (PART-Ii)

उत्तर-1 प्लेटो के अनुसार सद्गुण चार हैं- बुद्धिमता, साहस, संयम और न्याय

उत्तर-2 सामाजिक न्याय

उत्तर-3 प्लेटो का

उत्तर-4 डाइलैक्टिक शब्द का प्रयोग सभी विषयों के सम्मिलित ज्ञान व सत्य की खोज के लिए किया जाता है।

उत्तर-5 पदमुक्त (Retirement) की आयु 50 वर्ष बतायी है

भाग-तीन (PART-III)

उत्तर-1 शिक्षण विधि का प्रथम रूप तर्क विधि है

उत्तर-2 शिक्षण विधि का द्वितीय रूप प्रश्नोत्तर विधि है

उत्तर-3 शिक्षण विधि का तृतीय रूप वार्तालाप विधि/व्याख्यान विधि है

उत्तर-4 प्लेटो का

उत्तर-5 सत्य

18.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference BOOKS)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

18.10 सहायक/उपयोगी सहायक ग्रन्थ (USEFUL BOOKS)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

18.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

प्र. 1. प्लेटो के दर्शन से आप क्या समझते हैं ? प्लेटो के शिक्षा दर्शन की विवेचना कीजिए।

प्र. 2. प्लेटो के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य क्या है? व्याख्या कीजिए।

प्र. 3. प्लेटो के अनुसार शिक्षा के विभिन्न स्तर कौन से हैं? व्याख्या कीजिए।

प्र. 4. प्लेटो के शिक्षा दर्शन पर टिप्पणी लिखें।

प्र. 5. स्त्री शिक्षा के संबंध में प्लेटो के विचारों का वर्णन कीजिए।

प्र. 6. 'प्लेटो द्वारा दास प्रथा का समर्थन करना एक गलत सोच का नतीजा है।'-इस कथन की व्याख्या कीजिए।

इकाई-19: जॉन डीवी (John Dewey)

19.1 प्रस्तावना
19.2 उद्देश्य
19.3 जॉन डीवी के दार्शनिक विचार
    19.3.1 तत्वमीमांसा
    19.3.2 ज्ञानमीमांसा
    19.3.3 मूल्यमीमांसा
19.4 जॉन डीवी के शैक्षिक विचार
    19.4.1 शिक्षा का संप्रत्यय
    19.4.2 शिक्षा के उद्देश्य
19.5 शिक्षा का पाठ्यक्रम
    19.5.1 शिक्षण विधियॉं
    19.5.2 अनुशासन, शिक्षक ,शिक्षार्थी ,विद्यालय
    19.5.3 डीवी के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन
19.6 सांराश
19.7 शब्दावली
19.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नो के उत्तर
19.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
19.10 निबंधात्मक प्रशन

19.1 प्रस्तावना

सबसे पहले की इकाइयों में आपने भारतीय तथा पाश्चात्य दर्शन एवं दार्शनिकों का अध्ययन किया, इसी क्रम में इस इकाई में आप, पाश्चात्य दर्शन के प्रयोजनवादी दार्शनिक जॉन डीवी के दार्शनिक विचारों, शैक्षिक विचारों का अध्ययन करेंगें। जॉन डीवी ने शिक्षा को निरन्तर चलने वाले समायोजन की प्रक्रिया माना है। वे उसी शिक्षा को उपयोगी मानते है जो कि जीवन की समस्याओं के समाधान में सहायक हो और साथ ही मनुष्य को समाज का उपयोगी सदस्य बनायें।

जॉन डीवी का आधुनिक शिक्षा में बहुत बड़ा योगदान है। इस इकाई में आप डीवी के शिक्षा में योगदान का अध्ययन भी करेंगे तथा उसकी उपयोगिता के विषय में जानेंगे।

19.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

1. जॉन डीवी एक प्रयोजनवादी दार्शनिक के जीवन से परिचित होगें।

2. जॉन डीवी के शैक्षिक विचारों का वर्णन कर सकेंगें।

3. जॉन डीवी के अनुसार, शिक्षा के पाठ्यक्रम का अध्ययन कर पायेंगे।

4. जॉन डीवी के अनुसार विभिन्न शिक्षण विधियों से परिचित हो पायेंगे।

5. शिक्षण की विभिन्न विधियों का वर्णन कर पायेंगे।

6. डीवी के अनुसार विद्यायल, अनुशासन, शिक्षक एवं शिक्षार्थी, कैसा हो? इसको स्पष्ट कर पायेगें।

7. डीवी के शिक्षा के क्षेत्र में योगदान को अपने शब्दों में व्यक्त कर पायेंगे।

19.3 जॉन डीवी के दार्शनिक विचार (Philosophical Thoughts of John Dewey)

अमेरिका के ख्याति प्राप्त प्रयोजनवादी दार्शनिक और महान शिक्षाशास्त्री जॉन डीवी का जन्म न्यू इंग्लैण्ड में स्थित वरमॉण्ट नगर के बरलिंगटन नामक शहर में सन् 1859 में हुआ। अपनी प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात, अपने परिवार की प्रथा के विरूद्ध जाकर उन्होंने उच्च शिक्षा की ओर कदम बढ़ाया। उन्होंने बी0ए0 की डिग्री वरमॉण्ट विश्वविद्यालय से प्राप्त की ।

डीवी, दर्शन के अच्छे विद्यार्थी थे। उन्होंने विभिन्न दार्शनिकों एवं दर्शनों का गहन अध्ययन किया। उन्होंने मुख्यत: प्लेटो, हीगल, काण्ट तथा डार्विन के दार्शनिक विचारों का अध्ययन किया। उन्होंने काण्ट के दार्शनिक विचारों पर अध्ययन कर पी0एच0डी0 की उपाधि प्राप्त की।

डीवी के जीवन एवं लेखों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि उनके दार्शनिक विचारों में परिवर्तन आता गया।

डीवी ने दर्शनशास्त्र में अनेक पुस्तके लिखीं। जॉन डीवी द्वारा किये गए प्रमुख कार्य निम्न है-

1. दि स्कूल एंड सोसाइटी

The School and Society, 1899

2. दि स्कूल एंड दि चाईल्ड

The School and the Child

3. स्कूल ऑफ टुमोरो

School of Tomorrow

4. एजुकेशन ऑफ टुडे

Education of Today

5. दि चाइल्उ एंड दि करिक्युलम

The Child and Curriculum

6. माई पेडागॉजिक क्रीड

My Pedagogic Creed

7. हाऊ वी थिंक

How we think, 1910

8. इन्टरेस्ट् एंड एफर्ट्स इन एजुकेशन

Interest and Efforts in Education, 1913

9. डेमोक्रेसी एंड ऐजुकेशन

Democracy and Education, 1930

10 रिकन्सट्रक्सन इन फिलॉसफी

Reconstruction in Philosophy, 1920

11 सोर्सेज ऑफ ए साइंस ऑफ एजुकेशन

Sources of a science of Education

12 एक्सपीरियंस एंड ऐजुकेशन

Experience and Education

डीवी, प्रयोजनवादी दार्शनिक था, प्रयोजनवाद को फलवाद एवं अनुभववाद के नाम से भी जाना जाता है, डीवी की दार्शनिक विचारधारा व्यवहारिक है।

19.3.1 जॉन डीवी के दार्शनिक विचारों की तत्वमीमांसा

(Metaphysics of Philosophical Thoughts of John Dewey)

जेम्स की तरह, डीवी ने भी अपना समय आत्मा एंव परमात्मा के विश्लेषण में उपयोग न करके, मूर्त जगत एवं उसकी गतिविधियों के विश्लेषण में लगाया। डीवी कतिपय यह नहीं मानते कि इस जगत का सृजन दैवीय हैं, उनके अनुसार ये विभिन्न गतिविधियों के फलस्वरूप निर्मित है तथा सदैव परिवर्तनशील है। डीवी किसी प्रकार के शास्वत सत्य एवं मूल्यों पर विश्वास नहीं करता। उसके अनुसार जगत निरंतर परिवर्तनशील है तथा ऐसे परिवर्तनशील जगत में अपरिवर्तित सत्य एंव मूल्य निर्धारित नहीं किए जा सकते हैं। बदलते समाज के साथ मूल्य भी निरंतर बदलते रहते है। जॉन डीवी के अनुसार दर्शन का कार्य इस परिवर्तनशील संसार में सत्य एवं मूल्यों की खोज करना होना चाहिए।

19.3.2 डीवी के दार्शनिक विचारों की ज्ञानमीमांसा (Epistemology and Logic of Philosophical thoughts of Dewey)

डीवी के अनुसार ज्ञान तो कर्म का परिणाम है। अनुभव ज्ञान का स्त्रोत है, सम्पूर्ण ज्ञान अनुभव पर आधारित है, साधारण रूप से लोगों का विचार है कि कर्म के बिना भी ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और ज्ञान एक स्वतंत्र अस्तित्व रखता है, किन्तु डीवी इस बात से सहमत नहीं है। उनका कथन है कि बिना कर्म के ज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता। किसी न किसी प्रकार इसका किसी कर्म से सम्बन्ध अवश्य होता है। डीवी ने क्रियाओं को ज्ञान का आधार माना है। सभी ज्ञान व्यक्तियों की उन क्रियाओं के फलस्वरूप प्राप्त होता है, जो वे अपने अस्तित्व के लिये संघर्ष करने में करते हैं। जब मनुष्य किसी प्रकार की समस्या का सामना करता है तो वह उस समस्या के समाधान की ओर चिन्तन आरम्भ कर देता है। इस प्रकार डीवी चिन्तन को क्रिया का ही एक स्वरूप समझते हैं। डीवी द्वारा प्रतिपादित चिंतन के निम्न पाँच पद है-

किसी शंका, हिचकिचाहट, कठिनाई अथवा समस्या का अनुभव करना।

(Experience of Problem or difficulty)

1. सम्पूर्ण परिस्थिति पर दृष्टिपात करके उसके विभिन्न रूपों का विश्लेषण करना और तदुपरान्त समस्या के वास्तविक रूप को समझना।

(Clarification of the problem)

2.सुझावों का मस्तिष्क में उठना और यथोचित हल पाने के लिए उन सुझावों का अनुसरण करना।

(Formulation of Hypotheses)

3.प्रत्येक हल का परिणाम तथा सबसे अधिक सम्भव हल का परीक्षण करना।

(Testing the hypotheses by experiments)

4.उस हल को स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करने के उद्देश्य से आगे निरीक्षण व परीक्षण करना।

(Observation of outcomes and drawing of inferences)

19.3.3 डीवी के दार्शनिक विचारों की मूल्यमीमांसा
Axiology and Ethics of Philosophical thoughts of Dewey

डीवी आध्यात्मिक जगत में विश्वास नहीं रखते, वह मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी मानते है और उसको इसी जगत के लिए तैयार करना चाहते है। डीवी ने वास्तविक उपयोगिता पर बल दिया है। डीवी मनुष्य को मूलभूत आवश्यकताओं के साथ-साथ सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु भी तैयार करना चाहते हैं। डीवी के अनुसार वही मनुष्य इस संसार में खुशी से जीवन व्यतीत कर सकता है जो कि समस्याओं का समाधान सफलतापूर्वक खोज सके, डीवी मनुष्य और मनुष्य के मध्य अन्तर नहीं करते। वह प्रत्येक मनुष्य को उचित स्वतंत्रता देने के पक्षधर है ताकि वे अपनी रूचियों, अभिवृद्धि एवं क्षमताओं के अनुसार विकास कर सके। उन्होंने किसी भी मनुष्य पर किसी भी प्रकार के आदर्शो को नहीं थोपा, वह चाहता था कि हर कोई सत्य की खोज स्वयं करे। परन्तु वे किसी भी मनुष्य को इतनी स्वतंत्रता देने के पक्षधर नहीं है जिससे कि समाज के कल्याण में बाधा उत्पन्न हो। उन्होंने समाज और मनुष्य दोनों के विकास कि बात कही, इस प्रकार जॉन डीवी प्रजातंत्र का समर्थक था।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. डीवी की किन्हीं दो रचनाओं के नाम लिखिए।

2. डीवी द्वारा प्रतिपादित चिंतन के पदों के नाम लिखिये।

3. जॉन डीवी किस वाद के समर्थक हैं?

19.4 जॉन डीवी के शैक्षिक विचार (Educational Thoughts of John Dewey)

जॉन डीवी एक प्रयोजनवादी दार्शनिक एवं विचारक है। वह शास्वत सत्य एवं मूल्यों पर विश्वास नहीं करता। डीवी ने सत्य उसी को माना है जिसका की जीवन में वास्तविक महत्व हो, उसके अनुसार विश्व परिवर्तनशील है और इस परिवर्तनशील विश्व में अपरिवर्तित होने वाले सत्यों एवं मूल्यों की कल्पना भी करना उचित नहीं है। वह मनुष्य को इस परिवर्तनशील समाज में कुशलतापूर्वक जीना सिखाना चाहता है।

19.4.1 शिक्षा का संप्रत्यय Concept of Education

डीवी ने शिक्षा को एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया। उसने स्पष्ट किया कि मनुष्य कुछ जन्मजात शक्तियों के साथ जन्म लेता है और इन शक्तियों का विकास, सामाजिक चेतना में भागीदारी के फलस्वरूप होता है ।

जॉन डीवी ने इनको शिक्षा मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आयाम कहा है।

डीवी के अनुसार," "समस्त शिक्षा व्यक्ति द्वारा प्रजाति की सामाजिक चेतना में भाग लेने से आगे बढ़ती है।"

"All education proceeds by the participation of the individual in the social consciousness of race."

डीवी का मानना है कि शिक्षा स्वयं जीवन है। डीवी ने अपनी पुस्तक 'डेमोक्रेसी एण्ड एजुकेशन' में बताया है कि जीवन के लिए शिक्षा बहुत आवश्यक है अत: शिक्षा ही जीवन है।

डीवी के अनुसार- "शिक्षा, अनुभवों के सतत् पुनर्निमाण द्वारा जीवन की प्रक्रिया है। यह व्यक्ति की उन समस्त क्षमताओं का विकास है, जो उसको अपने वातावरण को नियन्त्रित करने एवं सम्भावनाओं को पूर्ण करने के योग्य बनाती है।"

"Education is the process of living through a continuous reconstruction of experiences. It is the development of all those capacities in the individual which will enable him to control his environment and fulfill his possibilities."

19.4.2 शिक्षा के उद्देश्य Aims of Education

जॉन डीवी एक बड़े दार्शनिक एवं प्रयोजनवादी थे जो किसी पूर्ण निश्चित शिक्षा के उद्देश्य में विश्वास नहीं करते।

उनका कथन है-"शिक्षा का सदैव तात्कालिक उद्देश्य होता है और जहाँ तक शिक्षा प्राप्य होती है, वहाँ तक शिक्षा उस साध्य को प्राप्त करती है।"

"Education has all the time an immediate end and so for as activity is educative it reaches that end."

डीवी जीवन के किसी परम उद्देश्य में विश्वास नहीं रखते, उनके अनुसार शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाले, गत्यात्मक प्रक्रिया है, अत: शिक्षा के निश्चित उद्देश्यों को वह नहीं मानते। डीवी के अनुसार यदि शिक्षा का कोई उद्देश्य है तो वह मनुष्य में ऐसे गुणों और संम्भावनाओं का विकास करना है जिससे की वह अपने वर्तमान जीवन को सफलतापूर्वक जी सके तथा भविषय के मार्ग पर अग्रसर हो सकें। डीवी के विचारों को शिक्षा के उद्देश्यों के संदर्भ में निम्न प्रकार से क्रमबद्ध किया जा सकता है-

1.अनुभवों का पुनर्निमाण (Reconstruction of Experiences):- डीवी ने सपष्ट कर दिया कि मानव जीवन गत्यात्मक व परिवर्तनशील है अत: शिक्षा भी गत्यात्मक एवं परिवर्तनशील है। अत: अनुभवों के निमाण एवं पुनर्निमाण की प्रक्रिया भी निरन्तर चलती रहती है। इस प्रकार शिक्षा का उद्देश्य अनुभवों का पुनर्निमाण है।

2.वातावरण के साथ समायोजन (Adjustment with environment):- शिक्षा का उद्देश्य है बालक को अपने वातावरण के साथ समायोजन करने के लिए योग्य बनाना जिसके द्वारा बालक का जीवन उसके सामाजिक वातावरण के अनुकूल होकर विकसित हो सकें।

डीवी का कथन है- "शिक्षा की प्रक्रिया समायोजन की एक निरन्तर प्रक्रिया है, जिसका प्रत्येक अवस्था में उद्देश्य होता है- विकास को हुई क्षमता प्रदान करना।"

"The process of education is a continuous process of adjustment having as its aim at every stage and added capacity to growth."

3.सामाजिक कुशलता का विकास (Development of Social Efficiency):- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज से बाहर रहकर उसका विकास नहीं हो सकता। सामाजिक जीवन में सभी का विकास होता है, इसलिए शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक जीवन में दक्षता प्राप्त करना है। सामाजिक कुशलता प्राप्त करना है।

डीवी के अनुसार- "शिक्षा का कार्य असहाय प्राणी को सुखी, नैतिक एवं कार्य कुशल बनाने में सहायता देना है।"

According to Dewey, "The function of education is to help growing to helpless young animal in to a happy, moral and efficient human being."

4.लोकतांत्रिक जीवन में प्रशिक्षण (Training in Democratic life):- डीवी लोकतांत्रिक समाज का बड़ा समर्थक था। डीवी शिक्षा द्वारा ऐसे समाज का निर्माण करना चाहता है जिसमें व्यक्ति-व्यिक्त में कोई भेद न चाहता है, सभी पूर्ण स्वतनत्रता और सहयोग से काम करें। प्रत्येक मनुष्य को अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों, इच्छाओं और आकांक्षाओं के अनुसार विकसित होने का अवसर मिले, सभी को समान अधिकार दिए जायें। ऐसा समाज तभी बन सकता है, जबकि व्यक्ति और समाज के हित में कोई अन्तर न माना जाए, शिक्षा द्वारा मनुष्य में परस्पर सहयोग और सामजस्य की स्थापना होनी चाहिए। विद्यालय लोकतांत्रिक समाज का एक सूक्ष्म रूप है। उसमें बालक में लोकतांत्रिक गुणों का विकास किया जाना चाहिए।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

4.डीवी ने शिक्षा को एक सामाजिक _______ के रूप में स्वीकार किया।

5.डीवी के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों को लिखिए।

6.डीवी शास्वत सत्य एवं मूल्यों पर विश्वास नहीं करते हैं। (सत्य/असत्य)

19.5 शिक्षा का पाठ्यक्रम (Curriculum of Education)

डीवी ने परंपरागत विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम को दूषित माना है। उन्होंने इस बात पर बल दिया है कि पाठ्यक्रम को कृत्रिमता से दूर होना चाहिए तथा वास्तविक जीवन की गतिविधियों पर आधारित होना चाहिए। डीवी के अनुसार समाज गत्यात्मक है परिवर्तनशील है अत: पाठ्यक्रम में भी समय और समाज की माँग के अनुसार परिवर्तित होने का गुण होना चाहिए। डीवी ने कोई निश्चित पाठ्यक्रम निर्धारित नहीं किया है, परन्तु उन्होंने पाठ्क्रम निर्धारित नहीं किया है, परन्तु उन्होंने पाठ्यक्रम निर्माण के कुछ सिद्धान्त अवश्य निर्धारित किए है। डीवी के अनुसार पाठ्यक्रम निर्माण के निम्नलिखिति सिद्धान्त हैं-

1.बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम (Child Centered Curriculum)– जॉन डीवी ने परंपरागत विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम का विरोध किया और बालक के मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक वातावरण व उसकी आवश्यकताओं को केन्द्र बिन्दु बनाने पर बल दिया। डीवी ने यह सपष्ट कर दिया कि बालक

की अपनी रूचियॉ, योग्यता, अभिवृत्ति और क्षमताऐं होती हैं। वे विशिष्ट प्रकार के अनुभव प्राप्त करता है अत: पाठ्यक्रम बालक के अनुभव के अनुकूल होना चाहिए जिसमें वह स्वयं नवीन अनुभव प्राप्त कर सकें।

2.उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of Utility)- शिक्षा में पाठ्यक्रम निर्माण वास्तविक उपयोगिता के आधार पर होना चाहिए। जिसमें बालक की सामान्य समस्याएं और उपयोग सम्बन्धित घटनाएं हो। बालक की इन्हीं समस्याओं का समाधान करने के लिए उपयुक्त विषयों एवं क्रियाओं को पाठ्यक्रम में स्थान देना चाहिए। अत: पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों को सम्मिलित करना चाहिए जिससे बालक को ऐसी क्रियाओं को करने के लिए अभिप्रेरणा व अवसर प्रदान हों।

3.रूचि का सिद्धान्त (Principle of Interest):- डीवी के अनुसार बालक की शिक्षा उसकी क्षमताओं, रूचियों व आदतों आदि मनोवैज्ञानिक अध्ययन के पश्चात् प्रारम्भ करनी चाहिए। डीवी के निम्न चार प्रकार की रूचियों का वर्णन किया है-

विचारों के आदान-प्रदान में रूचि

खोज परीक्षण में रूचि

सृजन में रूचि

कलात्मक अभिव्यक्ति में रूचि

डीवी के अनुसार शैक्षिक पाठ्यक्रम इन्हीं रूचियों पर आधारित होना चाहिए। इस दृष्टिकोण से डीवी से भाषा, गणित, इतिहास, भुगोल, विज्ञान, सिलाई, गृहकार्य, बढ़ईगिरी, संगीत एंव व्यवसायिक कार्य आदि विषयों को पाठ्यक्रम में स्थान देने की बात कही है।

4.सानुबन्धिता का सिद्धान्त (Principle of Correlation) :- जीवन अपने आप में एक पूर्ण इकाई है, जॉन डीवी का मानना है कि संपूर्ण ज्ञान व उससे जुड़ी क्रियाऐं भी अपने आप में पूर्ण है। डीवी के अनुसार बालक के जीवन की पूर्णता के लिए एकीकृत ज्ञान या अनुभव बालक को होना चाहिए। डीवी ने इस बात पर बल दिया कि जो भी विषय व क्रियाऐं पाठ्यक्रम में सम्मिलित की जाएं वे सभी एकीकृत हो। इसलिए पाठ्यविषयों का अलग-अलग प्रदान न करके विषयोंको सानुबन्धित करके एकीकृत रूप से पढ़ाया जाना चाहिए।

5.लचीलेपन का सिद्धान्त (Principle of Flexibility):- डीवी ने परमपरागत पाठ्यक्रम का विरोध किया, उसने कहा कि विभिन्न बालकों की भिन्न भिन्न रूचियॉ, अभिवृत्ति और क्षमताऐं होती है, उनका मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक वातावरण भिन्न होता है तदनुसार उनकी आवश्यकताएँ

भी इसी प्रकार भिन्नता होनी चाहिए। पाठ्यक्रम मे रूढ़िवादिता न होकर लचीलापन होना चाहिए जिससे बालक अपनी इच्छानुसार कोई भी विषय या क्रिया को चुन सकता है।

19.5.1 शिक्षण विधियाँ Teaching Methods

डीवी ने मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी माना है और कहा है कि उसका विकास सामाजिक चेतना में भागीदारी से ही हुआ है।

डीवी के अनुसार शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। और मनुष्य तभी कुछ सीख सकता है जब उसकी सामाजिक चेतना जागृत हो और वह सक्रिय हो, डीवी ने क्रिया को ही सीखने का आधार माना। डीवी के अनुसार शिक्षण की निम्न विधियाँ है।

1. प्रयोग द्वारा सीखना (Learning by Experiment)– डीवी किसी पूर्वनिर्धारित ज्ञान, तथ्य व सिद्धान्त को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं था। इन्हें स्वीकार करने से पहले डीवी ने उन्हें परीक्षण कर के देखा। डीवी के विचार से प्रयोगविधि सीखने के सर्वोत्तम विधि है। इस विधि में अवलोकन , क्रिया, स्वानुभव, तर्क तथा सामान्यीकरण और परीक्षण सम्मिलित है। डीवी ने सीखने को इस विधि पर आधारित करने की बात कही।

2. कर के सीखना (Learning by doing)– डीवी के अनुसार क्रियाओं को केन्द्र बनाकर शिक्षादी जानी चाहिए। विभिन्न क्रियाओं को पाठ्यक्रम विषयों के साथ सम्बन्धित कर दिया जाए ताकि बालक स्वयं कर के सीखे व ज्ञान प्राप्त कर सकें।

डीवी के अनुसार- "सभी प्रकार का सीखना कार्यो (क्रियाओं) की गौण उपज के रूप में होना चाहिए न कि स्वयं सीखने के लिए।"

"All learning must come as a byproduct of actions and never as something learned directly for its own sake"

3. सहसंबंध विधि (Correlation Method)- डीवी, ज्ञान को एक पूर्ण इकाई के रूप में मानता है, उसका तर्क है कि मनुष्य का जीवन भी अपने आप में एक पूर्ण इकाई है। इसी प्रकार विभिन्न विषयों व क्रियाओं की प्रक्रिया होते हुए भी शिक्षा भी एक पूर्ण इकाई है। इस आधार पर वह सभी विषयों व क्रियाओं को एकीकृत, सहसंबंधित करने के पक्ष में है।

4. योजना विधि (Project Method)- उपरोक्त सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर डीवी के शिष्य किल पैट्रिक ने योजना विधि का आविष्कार किया। योजना विधि में सभी विषयों का ज्ञान व सभी क्रियाओं का परीक्षण एक योजना की सहायता से, एक इकाई के रूप में दिया जाता है।

19.5.2 अनुशासन Discipline, शिक्षक Teacher, विद्यार्थी Student विद्यालय School

अनुशासन (Discipline) :- बालकों को किसी दण्ड के भय से सही व्यवहार करने को अनुशासन नहीं मानता, उसने यह स्पष्ट किया कि जब एक शिक्षक भय व दण्ड के द्वारा अनुशासन स्थापित करता है तो तो बालकों के मन में अपने प्रति घृणा व विरोध की भावना ही उत्पन्न करता है और जब यह भावना तीव्र व प्रबल हो जाती है तो बालक इस अनुशासन को तोड़ देते हैं फिर हम यह कहते है कि बालक अनुशासनहीन है।

डीवी के अनुसार, अनुशासन एक भीतरी शक्ति है जो कि मनुष्य सामाजिक मानकों के अनुसार व्यवहार करने के लिए प्रेरित करती है। उसी प्रकार की शक्तियों व गुणों का विकास करने के लिए डीवी ने लोकतांत्रिक वातावरण की आवश्यकता पर बल दिया।

लोकतांत्रिक वातावरण की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है – स्वतंत्रता, ऐसे वातावरण में बालक बिना किसी दबाव के अपनी रूचि के अनुसार क्रियाओं का चयन कर अपनी आवश्यकताओं के अनुसार स्वतंत्रतापूर्वक सीखता है। डीवी ने स्पष्ट किया है कि ऐसे स्वतंत्र व लोकतांत्रिक वातावरण में बालक के अनुशासनहीन होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता बल्कि बालक में ऐसी शक्तियों का विकास होता है जिससे वो सामाजिक कल्याण के बारे में सोचता है। डीवी इसको स्वानुशासन कहता है। उसके अनुसार स्वानुशासन ही सच्चा अनुशासन है।डीवी के अनुसार, अनुशासन का एक उद्देश्य एक ऐसे सामाजिक व्यक्ति का सृजन करना है जो कि सामाजिक कल्याण में अपना योगदान दे सकें।

उनके अनुसार - “कार्य को करने से कुछ परिणाम निकलते है। यदि इन कार्यों को सामाजिक तथा सहकारी ढंग से किया जाए तो उनसे एक प्रकार का अनुशासन उत्पन्न होगा।”

शिक्षक (Teacher)

डीवी ने जनतांत्रिक आदर्शों का समर्थक है, वे मनुष्य की वैयक्तिकता का आदर करते हैं। शिक्षक को आदर देते हुए, वह यह कहते है कि शिक्षक को अपने आदर्शो को विद्यार्थियों पर नहीं थोपना चाहिए। डीवी ने शिक्षक को शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान देते हुए एक समाज सेवक के रूप में माना है। उसने कहा कि शिक्षक का कार्य, विद्यालय में ऐसा वातावरण का निर्माण करना है, जिसमें की बालक अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं खोजने के योग्य बन सके, बालक के सामाजिक व्यक्तित्व का विकास हो सके और वह जनतंत्र का एक योग्य नागरिक बन सके, डीवी के मतानुसार ऐसे वातावरण में भागीदारी कर के बालक के ऐसे कौशलों का विकास होगा जिनका की वास्तविक जीवन में उपयोग हो, इसको डीवी ने सामाजिक कुशलता (Social Efficiency) कहा है। डीवी के शिक्षक को एक पथ प्रदर्शक और निरीक्षक के रूप में स्वीकार किया है।

विद्यार्थी (Student)

डीवी, मनुष्य को वैयक्तिकता को महत्व देते हुए, उसका आदर करते हुए प्रत्येक बालक को उसके प्राकृतिक विकास के लिए स्वतंत्रता देने के पक्षधर हैं, वह बालक को उसकी रूचि, अभिवृत्ति व आवश्यकता के अनुसार पूर्ण स्वतंत्रता देकर उसके सामाजिक व मनोवैज्ञानिक विकास के पक्ष पर जोर देता है। उसने यह नारा दिया कि प्रत्येक बालक को अपनी क्षमताओं के अधिकतम विकास करने के अवसर प्रदान करना चाहिए जिससेकि वह अपना समाज का हित कर सकें।

विद्यालय (School)

डीवी के अनुसार शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। बालक समाज में रहकर ही वस्तुओं, भाषा व क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करता है। डीवी का कहना है कि सीखने की प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिए उपयुक्त सामाजिक वातावरण की आश्यकता होती है। ऐसे उपयुक्त के सृजन के लिए उसने विद्यालय को आवश्यक माना है। डीवी विद्यालय को समाज के लघु रूप में देखते है। इसलिए वो चाहते है कि विद्यालय का वातावरण सामाजिक वातावरण के समान हो।

डीवी ने शिक्षा के दो ध्रुव निर्धारित किए है- मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक, डीवी के अनुसार विद्यालय को बालकों की मनोवैज्ञानिक व सामाजिक आश्यकताओं की पूर्ति करनी चाहिए।

डीवी, विद्यालयों को ज्ञान की दुकान के रूप में स्वीकार नहीं करते वरन उन्हें प्रयोगशाला के रूप में लेते है।

19.5.3 जॉन डीवी के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन (Evaluation of Educational thought of John)

जॉन डीवी दर्शन के छात्र थे, प्रारंभ में डीवी आदर्शवाद से प्रभावित रहे फिर उनका झुकाव प्रकृतिवाद की ओर रहा और अन्त में वे जेम्स के प्रयोजनवाद से प्रभावित हुए और फिर उन्होंने अपनी विचारधारा प्रस्तुत की।

डीवी किसी वस्तु या क्रिया को नहीं मानते थे जिसकी वास्तविक उपयोगिता ना हो, उन्होंने ईश्वर और आत्मा की कोई वास्तविक उपयोगिता का नहीं माना। उन्होंने आत्मा और परमात्मा को सम्मिलित न करके इस जगत का अपूर्ण विश्लेषण प्रस्तुत किया, डीवी के अनुसार जिसका अनुभव किया जाए वही सत्य है। यदि हम डीवी के इस कथन या विचार का समर्थन करते है तो यह कहना गलत नहीं होगा उनका स्वयं का अनुभव भी विस्तृत नहीं था। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में डीवी का महत्वपूर्ण योगदान रहा। उन्होंने शिक्षा पर गहन चिन्तन किया एवं लिखा भी ।

अब आप शैक्षिक जगत में जॉन डीवी के शैक्षिक विचारों के मूल्यांकन का अध्ययन करेंगे-

जॉन डीवी ने लिखा है कि शिक्षा न तो साधन है और न साध्य, यह मनुष्य के सामाजिक जीवन की प्रक्रिया है। जॉन डीवी शिक्षा को मानव जीवन का अभिन्न अंग मानते हैं और वे शिक्षा को एक सामाजिक, गतिशील एवं विकासात्मक प्रक्रिया मानते है। डीवी के उस विचार से सभी शिक्षाविद सहमत है । परन्तु डीवी इस विचार से कोई सहमत नहीं है कि शिक्षा का कार्य वातावरण को नियंत्रित कर संम्भावनाओं को पूर्ण करना ही है।

डीवी जीवन को परिवर्तनशील मानते है और उनका मानना था कि परिवर्तनशील जीवन के अपरिवर्तनशील उद्देश्य नहीं हो सकते। परन्तु डीवी ने स्वयं कुछ शैक्षिक उद्देश्य प्रस्तुत किए। एक ओर डीवी पुर्वनिर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों को नहीं चाहते और वहीं दूसरी ओर वे लोकतांत्रिक जीवन में प्रशिक्षण की बात करते हैं। ये परस्पर विरोधाभास है।

किसी समाज एवं देश के शैक्षिक उद्देश्य निर्धारित होने चाहिए। औपचारिक शिक्षा निश्चित उद्देश्यों के आभाव में सुचारू रूप से नही चल सकती।

1. डीवी ने किसी प्रकार का पाठ्यक्रम निर्धारित नहीं किया, परन्तु उनहोंने पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त के लिए शिक्षा के क्षेत्र में डीवी का यह सर्वश्रेष्ठ योगदान है। आज भी किसी भी देश में पाठ्यक्रम का निर्माण इन सिद्धान्तों के आधार पर होता है।

पाठ्यक्रम में डीवी ने धर्म और नैतिकता को कहीं स्थान नहीं दिया। डीवी के अनुसार धर्म और नैतिकता की मानव जीवन में कोई वास्तविक उपयोगिता नहीं है। जबकि धर्म एंव नैतिकता के पालन में मनुष्य जीवन शांतिपूर्वक, आनन्दमयी व्यतीत होता है।

2. शिक्षण विधियों में भी डीवी का महत्वपूर्ण योगदान है, डीवी ने सीखने की वास्तविक परिस्थियों के विकास पर बल दिया- स्वयं करके सीखना, स्वानुभव द्वारा सीखना, उनके विचार से प्रयोग विधि पढ़ाने की सबसे अच्छी विधि है। डीवी के सिद्धानतों के आधार पर उनके शिष्य किलपैट्रिक ने परियोजना विधि (Project Method) का निर्माण किया।

3. जॉन डीवी ने शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनके अनुसार शिक्षक को विद्यालय में ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिए जिससे की बालक अपनी समस्याओं का स्वयं समाधान खोज सकें। वे शिक्षक को बच्चों पर अपने विचार एंव आदर्श थोपने की अनुमति नहीं देते। ज्यादातर शिक्षाविद, शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों को समान महत्व देते है परन्तु वे डीवी के इस तर्क से सहमत नहीं है कि शिक्षक का कार्य केवल ऐसा वातावरण का निर्माण करना है जिसमें भाग लेकर बालक सीखे। उनका मत है कि बालक सब कुछ स्वानुभव द्वारा नहीं सीख सकता, हमें दूसरे अनुभवों से भी सीख सकते हैं।

4. डीवी जनतंत्रात्मक प्रणाली या व्यवस्था में विश्वास करते हैं । वे व्यक्ति की वैयक्तिकता का सम्मान करते हैं तथा उसको एक समाजीकृत व्यक्ति बनाने पर बल देते हैं। विश्व में जहॉ भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था है, वहॉ बालकों को ऐसे नि:शुल्क अवसर प्रदान किए जा रहें है जिससे कि वे अपनी रूचियों, योग्यता एवं क्षमता के अनुसार विकास कर सकें । यह जॉन डीवी का शिक्षा पर प्रत्यक्ष प्रभाव है।

5. डीवी विद्यालय को लघु समाज के रूप में मानते हैं। वे समाज का सरल रूप प्रस्तुत करना चाहते हैं ना कि जटिल रूप। वे व़िद्यालय को ज्ञान की दुकान के रूप में स्वीकार नहीं करते। विद्यालय और समाज के मध्य संबंध की स्पष्ट कर डीवी ने शैक्षिक श्रेत्र में सामाजिक सहयोग को प्रोत्साहन दिया और इससे शिक्षा को प्रसार मिला।

परन्तु डीवी ने विद्यालय को समाज का लघु रूप कह कर मिथ्या धारणा प्रस्तुत की। डीवी के अनुसार, विद्यालय को वास्तविक जीवन से जुड़ी गतिविधियों को विद्यालय में संचालित करना चाहिए। यदि हम विद्यालय में भी वही सिखाएगें जो बाहर समाज में है तो विकास कैसे संभव है ? हमें नई परिस्थितियों का सृजन करना होगा जिससे हम विद्यालय में समाज से भी उत्तम वातावरण का निर्माण कर सकें।

एक दार्शनिक विचारक के रूप में, डीवी ने एक प्रगतिशील समाज के निर्माण में सराहनीय योगदान दिया है। डीवी ने व्यक्ति की वैयक्तिकता को महत्व दिया। डीवी से पहले शिक्षा आदर्शवादी थी, डीवी उसे वास्तविकता में लाए, रूसो ने शिक्षा को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया और डीवी ने मनोवैज्ञानिक आधार के साथ- साथ सामाजिक आधार भी प्रदान किए, उन्होंने शिक्षा को समाज-केन्द्रित बनाया। आधुनिक शिक्षा में वैज्ञानिक और सामाजिक प्रवृत्ति डीवी क योगदान है।

डीवी का सबसे बड़ा योगदान है प्रगतिशील शिक्षा और प्रगतिशील समाज।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

7. डीवी के अनुसार पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धातों को लिखिए।

8. डीवी ने किन चार प्रकार की रूचियों का वर्णन किया है?

9. डीवी के अनुसार शिक्षण विधियों के नाम लिखिए।

10 डीवी के शिष्य का नाम क्या है?

11 योजना विधि का आविष्कार किसने किया?

12 डीवी के शिक्षक को किस रूप में स्वीकार किया है?

13. डीवी विद्यालय को समाज के ________ रूप में देखते हैं।

14. डीवी विद्यालयों को _______ के रूप में स्वीकार करते है।

19.6 सारांश (Summary)

डीवी ने अपना समय आत्मा एंव परमात्मा के विश्लेषण में उपयोग न करके, मूर्त जगत एवं उसकी गतिविधियों के विश्लेषण में लगाया। डीवी कतिपय यह नहीं मानते कि इस जगत का सृजन दैवीय हैं, उनके अनुसार ये विभिन्न गतिविधियों के फलस्वरूप निर्मित है तथा सदैव परिवर्तनशील है। डीवी के अनुसार ज्ञान कर्म का परिणाम है। अनुभव ज्ञान का स्त्रोत है, सम्पूर्ण ज्ञान अनुभव पर अधारित है। जॉन डीवी के अनुसार दर्शन का कार्य इस परिवर्तनशील संसार में सत्य एवं मूल्यों की खोज करना होना चाहिए। डीवी आध्यात्मिक जगत में विश्वास नहीं रखता वह मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी मानता है और उसको इसी जगत के लिए तैयार करना चाहता है। डीवी ने वास्तविक उपयोगिता पर बल दिया है। उसके किसी भी मनुष्य पर किसी भी प्रकार के आदर्शो को नहीं थोपा, वह चाहता था कि हर कोई सत्य की खोज स्वयं करे। परन्तु वह किसी भी मनुष्य को इतनी स्वतंत्रता देने का पक्षधर नहीं है जिससे कि समाज के कल्याण में बाधा उत्पन्न हो।

डीवी ने शिक्षा को एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया। डीवी के अनुसार,“ समस्त शिक्षा व्यक्ति द्वारा प्रजाति की सामाजिक चेतना में भाग लेने से आगे बढ़ती है। डीवी जीवन के किसी परम उद्देश्य में विश्वास नहीं रखते, उनके अनुसार शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाले, गत्यात्मक प्रक्रिया है, अत: शिक्षा के निश्चित उद्देश्यों को वह नहीं मानते। डीवी के अनुसार यदि शिक्षा का कोई उद्देश्य है तो वह मनुष्य में ऐसे गुणों और संम्भावनाओं का विकास करना है जिससे की वह अपने वर्तमान जीवन को सफलतापूर्वक जी सके तथा भविषय के मार्ग पर अग्रसर हो सकें।

डीवी ने लोकतांत्रिक वातावरण की आवश्यकता पर बल दिया। डीवी के अनुसार, अनुशासन एक भीतरी शक्ति है जो कि मनुष्य को सामाजिक मानकों के अनुसार व्यवहार करने के लिए प्रेरित करती है। डीवी के अनुसार, अनुशासन का एक उद्देश्य एक ऐसे सामाजिक व्यक्ति का सृजन करना है जो कि सामाजिक कल्याण में अपना योगदान दे सकें।

एक दार्शनिक विचारक के रूप में, डीवी ने एक प्रगतिशील समाज के निर्माण में सराहनीय योगदान दिया है। डीवी ने व्यक्ति की वैयक्तिकता को महत्व दिया। उन्होंने शिक्षा को समाज-केन्द्रित बनाया। आधुनिक शिक्षा में वैज्ञानिक और सामाजिक प्रवृत्ति डीवी क योगदान है।

19.7 शब्दावली (Glossary)

1. तत्वमीमांसा- वास्तविकता का विज्ञान

2. ज्ञानमीमांसा- ज्ञान का विज्ञान

3. मूल्यमीमांसा- मूल्य का विज्ञान

4. प्रयोजनवाद- ऐसा वाद जिसमें सत्य का आधार प्रयोजन(वास्तविक उपयोगिता) को माना जाता है।

5. फलवाद- ऐसा वाद जिसमें सत्य को परिणाम(फल) के आधार पर सुनिश्चित किया जाता है।

6. अनुभववाद- ऐसा वाद जिसमें सत्य को अनुभव के आधार पर सुनिश्चित किया जाता है।

19.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नो के उत्तर

1. डीवी की किन्हीं दो रचनाओं के नाम

I दि स्कूल एंड सोसाइटी The School and Society, 1899

Ii दि स्कूल एंड दि चाईल्ड The School and the Child

2. डीवी द्वारा प्रतिपादित चिंतन के पदों के नाम हैं-

I किसी शंका, हिचकिचाहट, कठिनाई अथवा समस्या का अनुभव करना।

Ii सम्पूर्ण परिस्थिति पर दृष्टिपात करके उसके विभिन्न रूपों का विश्लेषण करना और तदुपरान्त समस्या के वास्तविक रूप को समझना।

Iii सुझावों का मस्तिष्क में उठना और यथोचित हल पाने के लिए उन सुझावों का अनुसरण करना।

Iv प्रत्येक हल का परिणाम तथा सबसे अधिक सम्भव हल का परीक्षण करना।

V उस हल को सवीकृत अथवा अस्वीकृत करने के उद्देश्य से आगे निरीक्षण व परीक्षण करना।

3.जॉन डीवी प्रयोजनवाद के समर्थक हैं।

4. प्रक्रिया

5. डीवी के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों निम्न हैं-

I अनुभवों का पुनर्निमाण

Ii वातावरण के साथ समायोजन

Iii सामाजिक कुशलता का विकास

Iv लोकतांत्रिक जीवन में प्रशिक्षण

6. सत्य

7. डीवी के अनुसार पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धांत निम्न हैं-

I बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम

Ii उपयोगिता का सिद्धान्त

Iii रूचि का सिद्धान्त

Iv सानुबन्धिता का सिद्धान्त

V लचीलेपन का सिद्धान्त

8. डीवी ने निम्न चार प्रकार की रूचियों का वर्णन किया है-

I विचारों के आदान-प्रदान में रूचि

Ii खोज परीक्षण में रूचि

Iii सृजन में रूचि

Iv लात्मक अभिव्यक्ति में रूचि

9. डीवी के अनुसार शिक्षण विधियों के नाम हैं-

I प्रयोग द्वारा सीखना

Ii कर के सीखना

Ii सहसंबंध विधि

Ii योजना विधि

10. डीवी के शिष्य का नाम किल पैट्रिक है।

11 डीवी के शिष्य किल पैट्रिक ने योजना विधि का आविष्कार किया।

12 डीवी के शिक्षक को एक पथ प्रदर्शक और निरीक्षक के रूप में स्वीकार किया है।

13 लघु

14 प्रयोगशाला

19.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)

1.लाल एण्ड पलोड, *एजुकेशनल थॉट एण्ड प्रैक्टिस*, मेरठ: आर0लाल प्रकाशन ,

2.पाण्डा, अ. कु. (2011). *शिक्षा दर्शन*. कानपुर: साहित्य रत्नालय्,

3.सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप., शिखा, च. (2010). *उदीयमान भारतीय समाज मे शिक्षक,* मेरठ: आर लाल प्रकाशन.

4.एलैक्स, शी. मै. (2008). *शिक्षा दर्शन*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

5.ओड, एल. के. *शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि*. राजस्थान ग्रंथ अकादमी.

19.10 निबन्धात्मक प्रश्न (Long Answer Questions)

1. जॉन डीवी के शैक्षिक विचारों के बारे में आप क्या जानते हैं? शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य एवं पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में विचारों की व्याख्या कीजिए।

2. जॉन डीवी के शैक्षिक विचारों का मूल्यांकन कीजिए।

3. जॉन डीवी द्वारा प्रतिपादित पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धांतों की व्याख्या कीजिए।

4. शिक्षा के उद्देश्यों के सन्दर्भ में जॉन डीवी के क्या विचार हैं?स्पष्ट कीजिए।

इकाई 20 : ज्याँ पाल सार्त्र (Jean Paul Sartre)

20.1 प्रस्तावना
20.2 उद्देश्य
20.3 जीवन परिचय Life Sketch)
  20.3.1 अस्तित्ववाद व ज्याँ पाल सार्त्र
    अपनी अधिगम प्रगति जानिए
20.4 अस्तित्ववाद की अवधारणा (स्वरूप)
20.4.1 अस्तित्ववाद की मूल अवधारणा
    अपनी अधिगम प्रगति जानिए
20.5 ज्याँ पाल सार्त्र के दार्शनिक विचार
20.5.1ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक विचार
20.5.1 ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता
    अपनी अधिगम प्रगति जानिए
20.6 सारांश
20.7 शब्दावली
20.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नो के उत्तर
20.9 सन्दर्भ ग्रंथ/पठनीय पुस्तकें
20.10 निबन्धात्मक प्रश्न

20.1 प्रस्तावना :

ज्याँ पाल सार्त्र एक फ्रांसीसी अस्तित्ववादी (Existentialist) दार्शनिक, नाटककार, उपन्यासकार, चलचित्र के लिए कथानक लिखनेवाला, राजनीति कार्यकर्ता, जीवनी लेखक और साहित्यिक आलोचक था। उसका जन्म 21 जून 1905 को हुआ तथा देहावसान 15 अप्रैल 1980 को हुआ। 20 वीं सदी के फ्रेंच दर्शन और मार्क्सवाद में उनका योगदान सराहनीय रहा है। सार्त्र का अस्तित्ववादी दर्शन समस्त विश्व के शैक्षिक जगत को प्रभावित किया और एक नए शिक्षा दर्शन की शुरूआत हुई। प्रस्तुत इकाई में आप ज्याँ पाल सार्त्र की जीवनी, उनके दार्शनिक विचार व शैक्षिक दर्शन के विभिन्न पक्षों का अध्ययन करेंगे।

20.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- ज्याँ पाल सार्त्र के जीवन वृत्त का वर्णन कर सकेंगे।
- ज्याँ पाल सार्त्र के दार्शनिक विचारों की व्याख्या कर सकेंगे।
- उनके शैक्षिक दर्शन के विभिन्न पक्षों का वर्णन कर सकेंगे।
- ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक दर्शन का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- ज्याँ पाल के मुख्य दार्शनिक विचारों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक विचारों को शिक्षण प्रक्रिया में अन्तर्निहित मुख्य बिंदुओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- अस्तित्ववाद दर्शन में ज्याँ पाल सार्त्र के मुख्य योगदान का वर्णन कर सकेंगे।
- अस्तित्ववाद दर्शन की मूल अवधारणाओं का विवेचन कर सकेंगे।

20.3 जीवन परिचय Life Sketch):

बीसवीं सदी के सर्वाधिक चर्चित विचारक और लेखकों में से एक सार्त्र का जन्म 21 जून 1905 को पेरिस में हुआ। 1934 में सार्त्र ने बर्लिन में फ्रेंच इंस्टीट्यूट में एक वर्ष रहकर जर्मन दर्शन का गहन अध्ययन किया। उन्होंने कई वर्ष अध्यापन कार्य भी किया। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान सार्त्र जर्मनी के फासीवादी हमलावरों की कैद में रहे और घूमने के बाद उन्होंने प्रतिरोध आंदोलन में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। इसके बाद अध्ययन कार्य छोड़कर वे पूरी तरह से लेखन कार्य में जुट गये। यद्पि समय-समय पर उन्होंने जनता की मुक्ति के समर्थन में राजनीतिक कार्यवाईयों में भाग लिया। उन्होंने प्रसिद्ध फ्रांसीसी पत्रिका 'लेंस टेंप्स मॉडर्नेस' का संपादन भी किया।

सार्त्र को अस्तित्ववादी दार्शनिक के रूप में जाना जाता है और इस दृष्टि से उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया था। लेकिन अंतत: उन्होंने अपने को मार्क्सवादी घोषित किया। उनका विचार था कि अस्तित्ववादी और कुछ नही मार्क्सवाद का ही अंत:क्षेत्र है। मार्क्सवाद जो उनके समय की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचारधारा थी।

सार्त्र सिर्फ विचारक ही नहीं थे बल्कि इस सदी के महान साहित्यकारों में से एक थे। उनके उपन्यासों और नाटकों ने फ्रांस के बाहर भी व्यापक लोकप्रियता अर्जित की। 'नाउसिया' (उबकाई) (Nausea) उनका सबसे प्रसिद्ध उपन्यास है। इसके अलावा 'द एज़ ऑफ रिजन' (The Age of Region), 'द रिप्राइव' (The Reprieve), 'आईरन इन द सॉल'(Iron in the Soul), उपन्यास: 'लेस माउचेस', 'लेस मेन्स सेल्स' (Less Men's Sales), निक्रासोव (Necrasov), आदि नाटक भी काफी लोकप्रिय हुए।

उनकी दार्शनिक कृतियों में 'बीइंग एंड नथिंगनेस' (Being and Nothingness) को विशिष्ट स्थान हासिल है। 'द वर्डस (The Words) नाम से उन्होंने अपनी बचपन की स्मृतियों को प्रस्तुत किया है।

सार्त्र को उनके महान साहित्यिक **अवदान** के लिए नोबेल पुरस्कार के लिए चुना गया था, लेकिन उसे लेने से उन्होने इन्कार कर दिया था। 75 वर्ष की आयु में 15 अप्रैल को 1980 को उनका निधन हो गया।

20.3.1 अस्तित्ववाद व ज्याँ पाल सार्त्र:

ज्याँ पाल सार्त्र के दर्शन व शैक्षिक दर्शन को समझने से पूर्व आपको अस्तित्ववाद की मूल अवधारणा को समझना होगा| यहाँ पर अस्तित्ववाद की मूल अवधारणा को आपके समक्ष रखा गया है|

अस्तित्ववाद एक पद्धतिवाद दर्शन नहीं है जो कि दर्शन की परम्पराओं से जुड़ा हो परन्तु उसकी विशेषता यह है कि उसके अन्तर्गत भिन्न-भिन्न दर्शन के विषय उभरते हैं जिसे अस्तित्ववाद के दार्शनिकों ने उसे अपने तरीकों से इंगित किये हैं। सत्य तो यह है कि सम्पूर्ण अस्तित्ववाद के दार्शनिकों ने अपने अपने तरीकों से उन्नति किये हैं। सत्य तो यह है कि सम्पूर्ण अस्तित्ववाद एक दार्शनिक विचारधारा की तरह है जिसमें समय-समय पर नये-नये विचार उभरे और मुख्य धारा में सम्मिलित हो गये। इस विचारधारा से प्रमाणित अथवा इस विचारधारा को विकसित करने वाले अधिकतर जर्मन दार्शनिक थे जो ईश्वरवादी या अनीश्वरवादी व्यक्ति के अस्तित्ववाद की खोज में चिन्तित थे। किर्क्गार्ड के अलावा हस्सेर्ल, नीत्शे, हाइडेगर, जैसपर्स, मार्सल, बेबर, ज्यॉ पाल सार्त्र इस धारा के प्रमुख दार्शनिक हैं जिन्होंने किसी न किसी प्रकार से अस्तित्ववाद की दिशा को प्रभावित किया और विभिन्न विषयों पर चर्चा की है।

अस्तित्ववाद की स्थापना यह है कि व्यक्ति का अस्तित्व समिष्ट के समक्ष कुछ नहीं के रूप में है अत: व्यष्टि को समष्टि से जूझना है। विश्वजनीन उपकरणता के विरूद्ध अस्तित्वमय होना व संघर्ष करना है। साहित्य व कलाएं उस संघर्ष को व्यक्त करती है अत: कला कृति का स्वरूप अस्तित्व मूलक है। इसलिए अस्तित्ववाद साहित्य में भी चिन्तन का विषय बन गया है। व्यक्ति के लिए यह संभव नहीं है कि वह कोई कार्य करते समय उसके सम्पूर्ण उत्तरदायित्व से स्वयं को मुक्त रखे। इसलिए व्यक्ति वरण के द्वारा समूची मानवीयता को सम्बद्ध कर लेता है। यही व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का बोध और मानवीय कर्तव्य चेतना, अस्तित्ववाद का मूल सार तत्व है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1. सार्त्र का जन्म 21 जून 1905 को ....में हुआ।
2. ....ज्यॉ पाल सार्त्र का सबसे प्रसिद्ध उपन्यास है।

3. अस्तित्ववाद को विकसित करने वाले अधिकतर दार्शनिक................ के थे|
4. सार्त्र को उनके महान साहित्यिक अवदान के लिए..................... के लिए चुना गया था, लेकिन उसे लेने से उन्होने इन्कार कर दिया था।
5. अस्तित्ववाद की स्थापना यह है कि व्यक्ति का अस्तित्व .... के समक्ष कुछ नहीं के रूप में है।

20.4 अस्तित्ववाद की अवधारणा (स्वरूप) :

अस्तित्ववाद आधुनिक युग का बहुचर्चित एवं सर्वाधिक प्रतिष्ठित मतवाद है। अस्तित्ववाद में मानवीय जीवन और मानवीय नियति का वास्तविक चिन्तन उपलब्ध होता है। अस्तित्ववाद को कई विद्वानों ने अपने-अपने ढ़ंग से परिभाषित किया है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में अस्तित्ववाद की व्याख्या इस प्रकार है- "अस्तित्ववाद एक दार्शनिक स्कूल के बजाय एक प्रवृति या संस्थित भाव है। अस्तित्ववाद दर्शन चिन्तन का रास्ता है जो सम्पूर्ण पार्थिव ज्ञान का उपयोग करता है, उसे इस क्रम में परिवर्तित करता है जिससे मानवजन स्वयं जैसे बन सकें।"

ज्याँ पाल सार्त्र ने अपने ग्रंथ 'Existentialism' में अस्तित्ववाद की व्याख्या करते हुए कहा है कि अस्तित्ववाद अनीश्वर और अनास्थात्मक सह-जीवन परिस्थितियों के परिणामों की प्रस्तुत करने के प्रयास के सिवाय और कुछ नहीं है। 'द एडविंचर ऑफ क्रिटिसिज्म (The Adventure of Criticism)' में अस्तित्ववाद को अन्ध-समानीकरण और अविशिष्टीकरण की प्रतिक्रिया कहा है। डॉ श्यामसुन्दर मिश्र ने अपनी पुस्तक 'अस्तित्ववाद कुछ नयी स्थापनाओं' में अस्तित्ववाद को अधुनातन जीवन के विभिन्न निषेधों (सामाजिक, नैतिक, आर्थिक, राजनैतिक) और सामाजिक उपलब्धियों की यांन्त्रिकता के बीच आबद्ध व्यक्ति-इकाई की आकुल चिन्ता का वैज्ञानिक और समीचीन विश्लेषण माना है। अस्तित्ववाद के सर्वप्रथम तत्वशास्त्री सॉरेन कीर्क्गार्द 'वरण की स्वतंत्रता' का उल्लेख करता है। उनके शब्दों में, अस्तित्ववाद का प्रयोग इस दावे पर जोर देने के लिए किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति-इकाई अपने आप में स्वयं जैसी है| आध्यात्मिक या वैज्ञानिक प्रक्रिया के सन्दर्भ में अविश्लेषणीय है। व्यक्ति-इकाई अस्तित्वमय है, व्यक्ति स्वयं चुनाव करता है, स्वयं चिन्तन करता है। वह स्वतंत्र है और चूँकि वह स्वतंत्र है इसलिए सहन करता है कि उसका भविषय कुछ अंशों में उसके स्वतंत्र चुनाव पर निर्भर है। चयन के सम्बन्ध में सभी अस्तित्ववादी विचारकों ने विचार किया है। चयन अथवा वरण अनिवार्य मानवीय आवश्यकता है।

ज्यॉ पॉल सार्त्र के अनुसार वस्तुत: स्वतंत्रता चयन करने की स्वतंत्रता नहीं है। वरण न करना वास्तव में वरन न करने को चुनना है। परिणाम यह होता है कि चयन करना अस्तित्वमय की नींव होता है किन्तु चयन करने की नींव नहीं होता।अत: चयन इस स्तर पर स्वतंत्रता की असंगति है।

बीसवीं शताब्दी के प्रमुख दार्शनिक चिन्तकों डा0 मार्टिन हिडेगर, कार्ल यास्पर्स, ग्रैबियल मार्शल, ज्यॉ पॉल सार्त्र, फ्रेज काफ्फका और आल्वेयर कामू के चिन्तन और विचारधारा का परीक्षण करने पर प्रमाणित हो जाता है कि इस काल में दो तरह के अस्तित्ववादी विचारक हैं, जिन्हे ईश्वरवादी और अनिश्वरवादी अस्तित्ववादी चिन्तकों की संज्ञा दी जा सकती है। ज्यां पॉल सार्त्र, कार्ल यास्पर्स, और ग्रेबियल मार्शल को ईश्वरवादी अस्तित्ववादी माना जाता है तथा डॉ0 हिडेगर अपनी तथा अन्य फ्रांसीसी विचारकों एव लेखकों की गणना अनीश्वरवादी अस्तित्ववादी चिन्तकों में करता है।

ईश्वरवादी अस्तित्ववाद- इस विचारधारा के जनक कीर्केगार्ड हैं। कीर्केगार्ड मानवीय अस्तित्ववाद और उसके तनाव की व्याख्या ईसाई आस्था के सन्दर्भ में करते हैं। जीवन निर्वाह और सार्थक अस्तित्वबोध के इस संघर्ष के साथ व्यक्ति मानसिक आस्था के रूप में ईश्वरीय तत्व की सतत चेतना को हृदयंगम करने का जतन करता है। वैयक्तिक स्तर पर ग्रहीत ईश्वर बोध और तदगत अनुभूतियॉ उसकी निजी उपलब्धियॉ हैं। अत: यह आवश्यक है कि ईसाई आस्था के सन्दर्भ में नवीन संवेदनात्मक ईश्वरत्व की व्यवस्था का अनुसंधान किया जाय।

अनीश्वरवादी अस्तित्ववाद- नीत्शे परम्परागत ईश्वर की मृत्यु की उद्घोषणा द्वारा मानवीव अस्तित्व की समसामयिक विडम्बना को अभिव्यक्ति देता है। इस विचारधारा का प्रारम्भ नीत्से के ईश्वर और धर्म सम्बन्धी विचारों से होता है।

चिन्ता – चिन्ता अथवा व्यग्रता अस्तित्ववाद के लिए एक महत्वपूर्ण विषय है परन्तु अस्तित्ववाद के दार्शनिक इस विषय को अवैज्ञानिक आधार न देकर उसके बारे में चिन्तन कुछ भिन्न तरीकों से करते करते हैं। यह व्यग्रता व्यक्ति को दिशा देती है और व्यक्ति जो प्रारंभ में कुछ भी नहीं है को उसके अस्तित्व की ओर ध्यान दिलाता है। सत्य यह है कि व्यक्ति विशेषणों गुणों और मूल्यों के बिना भी रह सकता है, जी सकता है परन्तु व्यग्रता द्वारा शनै:- शनै: वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि उसका भी अस्तित्व होना चाहिए और धीरे-धीरे वह गुणहीन तथा मूल्य रहित अवस्था से निकल कर अपने अस्तित्व को खोजने लगता है और अर्थहीन शून्य अवस्था से निकल कर अपने अस्तित्व को अर्थ अथवा माईने देता है।

मृत्यु : मृत्यु कोई ईश्वरीय शक्ति नहीं है और न ही व्यक्ति के जीवन में वह एक महत्वपूर्ण घटना है। इस कारण वह हर व्यक्ति तक पहुँचती है मौत उतना ही सत्य है जितना कि व्यक्ति का अस्तित्व| मूल्य प्रक्रिया है जो सदा चलती रहती है। व्यक्ति के अस्तित्व में प्रारम्भ से ही यह प्रारंभ हो जाती है| जो ईश्वरवादी अस्तित्ववाद के दार्शनिक हैं उनके अनुसार मृत्यु के पश्चात् भी व्यक्ति के अस्तित्व का आभास रह जाता है। नास्तिक धारा के दार्शनिकों का मत है कि मृत्यु के पश्चात् व्यक्ति का सम्पूर्ण अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है कुछ भी शेष नहीं रहता| मृत्यु के अलावा अस्तित्वहीनता को भी बड़े रोचक ढ़ंग से उस वाद के दार्शनिकों ने परिभाषित किया है।

अस्तित्वहीनता: सार्त्र के अनुसार अस्तित्वहीनता का बहुत महत्व है क्योंकि उस अवस्था के कारण ही व्यक्ति अपने अस्तित्व को ढूंढता है| जब व्यक्ति नहीं का उपयोग करता है तब वह स्वतंत्रता की अवस्था में होता है और वह अवस्था ही उसके अस्तित्व का द्योतक है| जिसके द्वारा वह अपना अस्तित्व ही नहीं वरन् मूल्य तथा गुणों को विकसित कर पाता है। बिना स्वतंत्रता के वह आधारहीन अथवा अर्थहीन है| वह केवल हाड़ मांस का पुतला है। मौत उसके जीवन का व उसके अस्तित्व का अंग है।

स्वयं- सार्त्र के अनुसार स्वयं दो प्रकार का होता है। प्रथम स्वयं अपने में और दूसरा स्वयं अपनों के लिए| उदाहरण के तौर पर एक व्यक्ति गरीब माँ बाप के यहाँ पैदा हुआ तो वास्तव में वह स्वयं होगा और उसके बाद की चेष्टा जिसके द्वारा वह अपने परिवार के लिए धन और खुशहाली जुटायेगा वह उसका दूसरा स्वयं होगा|

स्वतंत्रता – अस्तित्ववाद के दार्शनिक व्यक्ति की स्वतंत्रता को कार्य करने की क्षमता से जोड़ते हैं जिसका पूर्व निर्धारित सिद्धांत से भी संबन्ध माना जाता है।

कार्यक्षमता- व्यक्ति की कार्य करने की क्षमता अथवा किसी कार्य को प्रारंभ करने में उसके द्वारा जो तर्क या स्वतंत्रता का सहारा लिया गया है, उस पर व्यक्ति का कार्य चुनना और पूरा करना निर्भर है। कार्य करने में संपूर्ण व्यक्ति ही सम्मिलित होता है जिसमें उसकी भावना और विचार दोनों ही सम्मिलित होते हैं। किसी भी कार्य को उसके फल से आंक नहीं सकते, ना ही उस कार्य करने की प्रक्रिया से| कार्य करने में सम्पूर्ण एकता से जुड़ा हुआ व्यक्ति अपने कार्य के द्वारा अपने आपको व्यक्त करता है। उस व्यस्तता में उसका सम्पूर्ण जुड़ाव है न केवल उसकी भावना या विचार अथवा सफलता या कार्य करने की प्रक्रिया।

20.4.1 अस्तित्ववाद की मूल अवधारणा:

1. अस्तित्ववाद मूलरूप से दर्शन का सिद्धान्त है। अस्तित्ववाद के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के सामने विभिन्न संभावनाएं या रास्ते हैं। मनुष्य अपनी स्वतंत्रता के आधार पर इन संभावनाओं या रास्तों में से एक या अधिक का वरण करता है।
2. व्यक्ति का अस्तित्व सम्भावनापरक है अत: उसकी अन्तिम रूप से व्याख्या नहीं की जा सकती है।
3. मानवीय अस्तित्व की व्याख्या का एक ही तरीका शेष रह जाता है कि विश्व में कार्यकलापों के माध्यम से उसका विश्लेषण किया जाये। अस्तित्ववादी इस स्तर पर प्रत्येक व्यक्ति को उसके कार्यों के लिए उत्तरदायी मानता है।
4. वरण की स्वतंत्रता के परिणामस्वरूप मनुष्य अपने अस्तित्व को न केवल प्रमाणित करता है बल्कि प्रमाणिक भी बनाता है।

5. वरण के स्वतन्त्र प्रयोग के कारण उसके सार का निर्माण होता है अर्थात् सार से पूर्व अस्तित्व है। अस्तित्व के पूर्ववर्ती होने के कारण उसे अस्तित्ववाद की संज्ञा दी गई है।
6. सार्त्र व्यक्ति की आंतरिकता को शरीर में निहित मानता है अत: वैयक्तिक अस्तित्व के तीन आयाम हैं- मैं शरीर में हूँ, यह चेतना शरीर का पहला आयाम है। मेरा शरीर दूसरों के द्वारा उपयोगी और श्रेय है, यह दूसरा आयाम है। जहॉं तक मैं दूसरे के लिए हूँ दूसरा मेरे समक्ष विषय के रूप में स्पष्ट हैं; जबकि मैं उसके लिए पार्थिव वस्तु हूँ। मैं उस विश्व में स्वयं अपने लिए हूँ किन्तु दूसरे के द्वारा शरीर के रूप में माना जाता हूँ। यह व्यक्ति के शरीर का तीसरा आयाम है।
7. वैयक्तिक अस्तित्व एवं स्व-अस्तित्वमय की दिशा में उन्मुख है। स्व अस्तित्वमय एवं अवसरानुकूल आवरण है अत: स्पष्ट है कि वह स्वयं को बनाता है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1. “अस्तित्ववाद एक दार्शनिक स्कूल के बजाय एक ………………..है।
2. ज्याँ पाल सार्त्र ने अपने ग्रंथ ……………………….. में अस्तित्ववाद की व्याख्या करते हुए कहा है कि अस्तित्ववाद अनीश्वर और अनास्थात्मक सह-जीवन परिस्थितियों के परिणामों की प्रस्तुत करने के प्रयास के सिवाय और कुछ नहीं है।
3. ईश्वरवादी अस्तित्ववाद के जनक ……………………….हैं।
4. ....से पूर्व अस्तित्व है।
5. वैयक्तिक अस्तित्व के....................... आयाम हैं|

20.5 ज्याँ पाल सार्त्र के दार्शनिक विचार (The Philosophical Thoughts of Jean Paul Sartre):

ज्याँ पाल सार्त्र मूलत: अस्तित्ववादी दार्शनिक हैं। इनके अनुसार “अस्तित्ववाद” शब्द का अर्थ एक ऐसा सिद्धांत है जो मानव जीवन को संभव बनाता है और जो मानता है कि प्रत्येक सत्य और कर्म का संबंध मानव परिवेश तथा उसकी आत्मपरकता में निहित होता है। अस्तित्ववादी दार्शनिकों को दो भागों में विभक्त किया गया है।

आस्तिक अस्तित्ववादी

नास्तिक अस्तित्ववादी

आस्तिक अस्तित्ववादी को ईश्वर के अस्तित्व में अटूट विश्वास है जबकि नास्तिक अस्तित्ववाद पूर्ण संगति के साथ यह घोषणा करता है कि यदि ईश्वर का अस्तित्व नहीं है तो भी एक सत्ता ऐसी है जिसका अस्तित्व सत्य से पहले आता है और जो अपनी किसी भी धारणा द्वारा समझाए जाने से पूर्व

ही मौजूद है। अस्तित्व सत्य से पूर्व आता है, इसका हम क्या अर्थ लेते हैं ? हम समझते हैं कि सबसे पहले मनुष्य का अस्तित्व है फिर वह स्वयं अपने से संघर्ष करता है और विश्व में अपनी जगह तलाशता है तत्पश्चात वह अपने को परिभाषित करता है। सार्त्र कहते हैं, यदि मनुष्य परिभाष्य नहीं है तो इसका कारण यह है कि आरंभ में वह कुछ भी नहीं था। बाद में भी वह कुछ नहीं होगा और वह वही बनेगा जैसा वह अपने को बनाना चाहेगा। इसलिए मानव प्रकृति जैसी कोई चीज नहीं है क्योंकि इसकी धारणा बनाने के लिए कोई ईश्वर नहीं है। सीधी बात यह है कि मनुष्य है। वह अपने बारे में जैसा सोचता है, वैसा नहीं होता बल्कि वैसा होता है जैसा वह संकल्प करता है। ज्याँ पाल के दार्शनिक विचार को निम्न बिन्दुओं के तहत समझा जा सकता है-

अस्तित्व के बाद सारतत्व आता है (Existence precedes essence.)

मेरा अस्तित्व है इसलिए में सोचता हूँ। (I exists therefore I think)

किसी विशिष्ट वस्तु होने के पूर्व सबसे पहले उसका अस्तित्व है।

मनुष्य का अस्तित्व स्वीकार करने के लिए उसे ‘चयन करने वाला अभिकरण’ मानना आवश्यक होता है।

मनुष्य को क्या बनना है इसका चुनाव करने के लिए वह पूर्णतया स्वतंत्र है।

मनुष्य का ‘सारतत्व’ यह है कि वह स्वतंत्र है, वह सृजन कर सकता है, वह चयन कर सकता है और उसके चाहे अनचाहे भी ‘कष्ट, पीड़ा तथा खतरे’ उसके उपलभ्य हैं।

सार्त्र के अनुसार, मनुष्य अनिर्णीत है तथा उसमें चुनाव करने की सामर्थ्य है, अत: वह अपने आप की प्रगति के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहता है।

मनुष्य केवल चेतन प्राणी ही नहीं है अपितु अद्धितीय रूपेण वह आत्मचेतना से युक्त है। अत: वह केवल विचार ही नहीं करता अपितु विचार के बारे में भी विचार कर सकता है।

20.5.1 ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक विचार (Educational Thoughts of Jean Paul Sartre):

ज्याँ पाल सार्त्र के शिक्षा दर्शन के केन्द्र में मनुष्य का अस्तित्व है। इनका शिक्षा दर्शन मुख्यत: मनुष्य के स्वतंत्रता, चयन, निरंतर प्रयत्नशीलता, नियति का स्वयं नियन्ता, मूल्यों का निर्माता व व्याख्याता इत्यादि पर जोर डालता है।

ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक विचार को निम्न बिंदुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है-

1.शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education): ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित अभिधारणाओं पर निर्भर करता है:

I मनुष्य एक स्वतन्त्र प्राणी है। वह जो बनना चाहे उसके लिए वह स्वतंत्र है।

Ii मनुष्य को चयन की स्वतंत्रता है।

Iii मनुष्य को अपने चयन का पूरा दायित्व स्वयं उसका है।

ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार, शिक्षा द्वारा बालक को स्वतंत्र मानव बनाना, जिससे कि वह अपने जीवन के संबंध में पराश्रित न रहकर स्वयं अपनी नियति का निर्धारण कर सके। प्रत्येक व्यक्ति को अपना लक्ष्य-निर्धारण करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति अपना मार्ग स्वयं निश्चित करता है। इनके अनुसार चयनकर्ता का चयन प्रक्रिया के साथ तादात्म्य अनिवार्य है। अत: वह बालक के भावात्मक एवं सौन्दर्यात्मक पक्षों के विकास पर अधिक जोर डालता है। बालक की चयन प्रक्रिया किसी मार्गदर्शन से रहित, तर्क रहित, प्रमाण रहित होना चाहिए। परन्तु साथ ही वह दायित्वयुक्त होनी चहिए।

ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार, शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य बालक को जीवन के अनिवार्य सतत पीड़ा के लिए तैयार करना है क्योंकि उसके लिए कोई आश्रय नहीं है, कोई सांत्वना देने वाला नहीं है। पीड़ा का भाग ही उसकी नियति है।

2.**छात्र अवधारणा (Concept of Student)-** शिक्षा की समस्त प्रक्रिया में छात्र के अस्तित्व के बारे में सोचना चाहिए। छात्र केवल व्यक्ति है जिसका इस संसार में न कोई मित्र है न हितैषी। वह किसी समूह का अंग नहीं है। उसे सामाजिक कुशलता का पाठ पढ़ाने की आवश्यकता नहीं है। समूह गत्यात्मकता सिखाने की उसे आवश्यकता नहीं है क्योंकि समूह का निर्णय उसके वैयक्तिक निर्णय से उच्चतर नहीं है। सार्त्र बालक की स्वतंत्रता का उद्घोषक है। उन्होंने शिक्षा को व्यक्ति केन्द्रित माना है। इनके अनुसार सामूहिक शिक्षा का कोई अस्तित्व है ही नहीं। बालक के अद्वितीय व्यक्तित्व की रक्षा करने के लिए यह आवश्यक है कि इस पर सामाजिक स्वीकृति लादी न जाय। उसे स्वतंत्र निर्णय के अवसर प्रदान करना आवश्यक है।

3.शिक्षक अवधारणा (Concept of Teacher)- ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार शिक्षक के लिए शिक्षा का दृष्टिकोण होगा 'मृत्यु की दृष्टि में रखकर शिक्षा'। शिक्षक छात्रों में इस दृष्टिकोण का विकास करता है कि मृत्यु का सामना करना चाहिए और मृत्यु के द्वारा अशुभ, अन्याय तथा अत्याचार को नग्न रूप में प्रकट किया जा सके तथा उन्हें रोका जा सके, तो उसका स्वागत करना चाहिए। शिक्षक के द्वारा विषय सामग्री को इस प्रकार प्रस्तुत करना चाहिए जिससे कि उसमें निहित सत्य को स्वतन्त्र साहचर्य द्वारा खोजा जा सके। शिक्षक द्वारा छात्रों के "मस्तिष्क का स्वत: संचालन" इस रूप में विकसित

करना कि उसक शिष्यों में एक विशेष प्रकार का चरित्र गठन हो। ऐसा चरित्र जो स्वतंत्र, उदार तथा स्वचालित हो। उसके छात्रों की शिक्षा ऐसी हो कि वे किसी बात को इसलिए सच मानें कि उसके सच होने का उन्हें स्वयं निश्चय हो गया हो। शिक्षक से एक और महत्वपूर्ण अपेक्षा की जाती है कि वह छात्रों को उनके द्वारा चयन किए गए निर्णय के निहितार्थ की अनुभूति कराए।

4.पाठ्यक्रम (Curriculum) : ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार सत्य अनन्त है| अत: कोई निश्चित पाठ्यक्रम निर्धारित करना संभव नहीं है। सार्त्र मानविकी (Humanities) विषयों को पाठ्यक्रम में सबसे प्रमुख स्थान देते हैं। वैज्ञानिक विषयों को ये संदेह की दृष्टि से देखते हैं। इनके अनुसार साहित्य का अध्ययन, सामाजिक विषयों, मानव संस्कृति संबंधी विषयों का समावेश एक पाठ्यक्रम को आदर्श बनाता है। ये सभी विषय वास्तविकताओं यथा दु:ख, पीड़ा, व्यथा, प्रेम, घृणा आदि के प्रति भावनात्मक पक्ष का विकास करने में मुख्य रूप से सहायक होता है।

5.**शिक्षण विधियॉ (Teaching Methods)** : ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक दर्शन से यह स्पष्ट है कि शिक्षण विधियॉ पूर्णरूपेण व्यक्ति विशेष की योग्यताओं को विकसित करने वाली अर्थात व्यक्तिनिष्ठ (Subjective) होनी चाहिए। इस दृष्टि से "कार्य करके सीखना विधि (Learning by Doing)" को अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। उनकी विचारधारा के अनुसार शिक्षण के उन ढंगों को ही अधिक अपनाने पर बल देना चाहिए जो छात्रों में हीन भवनायें दूर कर, उनमें स्वचेतना का भाव विकसित करे।

6.अनुशासन (Discipline)- ज्याँ पाल सार्त्र का शिक्षा- दर्शन बालक को अनुशासित करने के लिए किसी संरचित नियम-विधान को स्वीकार नहीं करता बल्कि स्वतंत्रता की बात करता है। बालकों में स्वतंत्र निर्णय एवं क्षमता का विकास किया जाय ताकि उनमें वैयक्तिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित हो पाए। उस स्वतंत्रता की भावना से पनपने वाले नैतिक गुण से उत्तर कोई नैतिकता नहीं है।

20.5.2 ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता (Relevance of the Educational Philosophy of Jean Paul Sartre):

ज्याँ पाल सार्त्र का अस्तित्वाद दर्शन शिक्षा के क्षेत्र में बहुत ही प्रासंगिक नहीं है। यूँ अस्तित्ववाद दर्शन न होकर दार्शनिक प्रवृति मात्र है। इसकी जटिलता इतनी व्यापक है कि शिक्षा के क्षेत्र में उससे निकलने वाले निहितार्थ अत्यंत कम हैं। इनके दर्शन के आधार पर किसी संगठित विद्यालय की कल्पना नहीं की जा सकती है| विद्यालय संगठन का अधारभूत तत्व यह है कि समाज अपनी सांस्कृतिक धरोहर के रक्षण, हस्तांतरण तथा विकास के लिए विद्यालयों की स्थापना करता है। समाज विद्यालयों की स्थापना इसलिए करता है कि समाज जिन मूल्यों को वांछनीय मानता है, उन्हें नई पीढ़ी तक अनुप्रमाणित कर सके तथा युवा पीढ़ी का

सांस्कृतिकरण संभव हो सके। अतः सार्त्र का शिक्षा दर्शन विद्यालय की संकल्पना के प्रति विश्वास नहीं रखता| लेकिन अन्य शिक्षा के अन्य क्षेत्रों में सार्त्र का शैक्षिक दर्शन निम्नवत् रूप में प्रांसगिक हो सकता है-

- प्रत्येक छात्र की रूचि एंव मानसिक स्तर के अनुरूप शिक्षा दी जानी चाहिए।
- छात्रों के अध्ययन विषय चुनाव की स्वतंत्रता उन्हीं पर छोड़ देनी चाहिए न कि विद्यालय या अभिभावक पर।
- छात्रों पर दबाव देकर शैक्षिक विषयों या शैक्षिक दायित्वों का अनुकरण नहीं कराना चाहिए बल्कि व्यावहारिक पद्धति से उन्हें सिखाया जाना चाहिए।
- छात्रों की स्वतंत्रता चाहे मानसिक, शारीरिक या सामाजिक हो, उस पर नियंत्रण कम किया जाना चाहिए।
- छात्रों को मूल्यों की शिक्षा के द्वारा शुभ और अशुभ या सत् अथवा असत् की पहचान करने की शिक्षा दी जानी चाहिए।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1. मेरा ……………………………….. है इसलिए में सोचता हूँ।
2. ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार शिक्षक के लिए शिक्षा का दृष्टिकोण होगा ………………………..।
3. सार्त्र …………………..विषयों को पाठ्यक्रम में सबसे प्रमुख स्थान देते हैं।
4. ज्याँ पाल सार्त्र शिक्षा को ……………………..केन्द्रित माना है।
5. ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार …………………………………..को अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।

20.6 सारांश :

बीसवीं सदी के सर्वाधिक चर्चित विचारक और लेखकों में से एक सार्त्र का जन्म 21 जून 1905 को पेरिस में हुआ तथा देहावसान 15 अप्रैल 1980 को हुआ। सार्त्र को अस्तित्ववादी दार्शनिक के रूप में जाना जाता है और इस दृष्टि से उनका कार्य बहुत ही महत्वपूर्ण है। अंत में उन्होंने अपने आपको मार्क्सवादी भी घोषित कर लिया था। सार्त्र एक दार्शनिक विचारक के अलावा इस सदी के महान साहित्यकारों में से एक थे। उनके उपन्यासों और नाटकों ने पूरी दुनियां में व्यापक लोकप्रियता अर्जित की।

सम्पूर्ण अस्तित्ववाद एक दार्शनिक विचारधारा की तरह है जिसमें समय-समय पर नये-नये विचार उभरे और मुख्य धारा में सम्मिलित हो गये। इस विचारधारा से प्रमाणित अथवा इस विचारधारा को विकसित करने वाले अधिकतर जर्मन दार्शनिक थे जो ईश्वरवादी या अनीश्वरवादी व्यक्ति के अस्तित्ववाद की खोज में चिन्तित थे। किर्कगार्ड के अलावा हस्सेर्ल, नीत्शे, हाइडेगर, जैसपर्स, मार्सल, बेबर, ज्यॉ पाल सार्त्र इस धारा के प्रमुख दार्शनिक थे जिन्होंने किसी न किसी प्रकार से अस्तित्ववाद की दिशा को प्रभावित किया और विभिन्न विषयों पर चर्चा की।

i. ज्याँ पाल के दार्शनिक विचार निम्नलिखित हैं-

ii. अस्तित्व के बाद सारतत्व आता है (Existence precedes essence.)|

iii. मेरा अस्तित्व है इसलिए में सोचता हूँ (I exists therefore I think)|

iv. किसी विशिष्ट वस्तु होने के पूर्व सबसे पहले उसका अस्तित्व है।

v. मनुष्य का अस्तित्व स्वीकार करने के लिए उसे 'चयन करने वाला अभिकरण' मानना आवश्यक होता है।

vi. मनुष्य को क्या बनना है इसका चुनाव करने के लिए वह पूर्णतया स्वतंत्र है।

vii. मनुष्य का 'सारतत्व' यह है कि वह स्वतंत्र है, वह सृजन कर सकता है, वह चयन कर सकता है और उसके चाहे अनचाहे भी 'कष्ट, पीड़ा तथा खतरे' उसके उपलभ्य हैं।

viii. सार्त्र के अनुसार, मनुष्य अनिर्णीत है तथा उसमें चुनाव करने की सामर्थ्य है, अत: वह अपने आप की प्रगति के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहता है।

ix. मनुष्य केवल चेतन प्राणी ही नहीं है अपितु अद्धितीय रूपेण वह आत्मचेतना से युक्त है। अत: वह केवल विचार ही नहीं करता अपितु विचार के बारे में भी विचार कर सकता है।

ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक विचार के मुख्य बिंदु निम्नवत हैं-

शिक्षा के उद्देश्य: ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार, शिक्षा द्वारा बालक को स्वतंत्र मानव बनाना, जिससे कि वह अपने जीवन के संबंध में पराश्रित न रहकर स्वयं अपनी नियति का निर्धारण कर सके। प्रत्येक बालक को अपना लक्ष्य-निर्धारण करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रत्येक बालक अपना मार्ग स्वयं निश्चित करता है। उन्होंने शिक्षा को व्यक्ति केन्द्रित माना है।

छात्र अवधारणा (Concept of Student)- शिक्षा की समस्त प्रक्रिया छात्र केंद्रित है। सार्त्र बालक की स्वतंत्रता का उद्घोषक है।

शिक्षक अवधारणा (Concept of Teacher)- छात्रों को उद्देश्य चयन में शिक्षक को मदद करनी चाहिए| केवल शिक्षक के लिए शिक्षा का दृष्टिकोण होगा 'मृत्यु की दृष्टि में रखकर शिक्षा'। शिक्षक छात्रों में इस दृष्टिकोण का विकास करता है कि मृत्यु का सामना करना चाहिए|

पाठ्यक्रम (Curriculum) : ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार सत्य अनन्त है| अत: कोई निश्चित पाठ्यक्रम निर्धारित करना संभव नहीं है। सार्त्र मानविकी (Humanities) विषयों को पाठ्यक्रम में सबसे प्रमुख स्थान देते हैं।

शिक्षण विधियॉं (Teaching Methods) : ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक दर्शन से यह स्पष्ट है कि शिक्षण विधियॉ पूर्णरूपेण व्यक्ति विशेष की योग्यताओं को विकसित करने वाली अर्थात व्यक्तिनिष्ठ (Subjective) होनी चाहिए। इस दृष्टि से “कार्य करके सीखना विधि (Learning by Doing)” को अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।

अनुशासन (Discipline)- ज्याँ पाल सार्त्र का शिक्षा- दर्शन बालक को अनुशासित करने के लिए किसी संरचित नियम-विधान को स्वीकार नहीं करता बल्कि स्वतंत्रता की बात करता है।

- **सार्त्र के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता:** सार्त्र का शैक्षिक दर्शन निम्नवत् रूप में प्रांसगिक हो सकता है-
- प्रत्येक छात्र की रूचि एंव मानसिक स्तर के अनुरूप शिक्षा दी जानी चाहिए।
- छात्रों के अध्ययन विषय चुनाव की स्वतंत्रता उन्हीं पर छोड़ देनी चाहिए न कि विद्यालय या अभिभावक पर।
- छात्रों पर दबाव देकर शैक्षिक विषयों या शैक्षिक दायित्वों का अनुकरण नहीं कराना चाहिए बल्कि व्यावहारिक पद्धति से उन्हें सिखाया जाना चाहिए।
- छात्रों की स्वतंत्रता चाहे मानसिक, शारीरिक या सामाजिक हो, उस पर नियंत्रण कम किया जाना चाहिए।
- छात्रों को मूल्यों की शिक्षा के द्वारा शुभ और अशुभ या सत् अथवा असत् की पहचान करने की शिक्षा दी जानी चाहिए।

20.7 शब्दावली :

अस्तित्ववाद: अस्तित्ववाद एक दार्शनिक विचारधारा है जो व्यक्ति के अस्तित्व को महत्वपूर्ण मानता है| सार से पूर्व अस्तित्व है। अस्तित्व के पूर्ववर्ती होने के कारण उसे अस्तित्ववाद की संज्ञा दी गई है।

ईश्वरवादी अस्तित्ववाद- मानवीय अस्तित्ववाद और उसके तनाव की व्याख्या ईसाई आस्था के सन्दर्भ में करना व ईश्वरीय तत्व की सतत चेतना को हृदयंगम करने का जतन करना।

अनीश्वरवादी अस्तित्ववाद- अस्तित्ववाद में ईश्वर की मृत्य की उद्घोषणा द्वारा मानवीय अस्तित्व की व्याख्या।

चिन्ता – अस्तित्व के लिए व्यग्रता|

मृत्य: व्यक्ति के जीवन में एक महत्वपूर्ण घटना जो मानव विकास की पूर्णतम अवस्था है|

अस्तित्वहीनता: वह अवस्था जिसमें व्यक्ति अपने अस्तित्व को ढूंढता है|

20.8 अपनी अधिगम प्रगति जानिए सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर :

1. पेरिस 2. नाउसिया' (उबकाई) (Nausea) 3. जर्मन 4. नोबेल पुरस्कार 5. समिष्ट 6. प्रवृति या संस्थित भाव 7.'Existentialism' 8. कीर्केगार्ड 9. सार 10. तीन 11. अस्तित्व 12. 'मृत्यु की दृष्टि में रखकर शिक्षा' 13. मानविकी (Humanities) 14. व्यक्ति 15. कार्य करके सीखना विधि (Learning by Doing)"

20.9 संदर्भ ग्रंथ/ पठनीय पुस्तकें (Reference Book/Suggested Readings) :

1.लाल एण्ड पलोड, *एजुकेशनल थॉट एण्ड प्रैक्टिस*, मेरठ: आर0लाल प्रकाशन ,

2.पाण्डा, अ. कु. (2011). *शिक्षा दर्शन*. कानपुर: साहित्य रत्नालय्,

3.सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप., शिखा, च. (2010). *उदीयमान भारतीय समाज मे शिक्षक,* मेरठ: आर लाल प्रकाशन.

4.एलैक्स, शी. मै. (2008). *शिक्षा दर्शन*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

5.ओड, एल. के. *शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि*. राजस्थान ग्रंथ अकादमी.

20.10 निबंधात्मक प्रश्न :

1. ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता का मूल्यांकन कीजिए|
2. ज्याँ पाल सार्त्र के अनुसार, शिक्षा के प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन कीजिए|
3. ज्याँ पाल के मुख्य दार्शनिक विचारों को स्पष्ट कीजिए|
4. ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक विचारों को शिक्षण प्रक्रिया में अन्तर्निहित मुख्य बिंदुओं की व्याख्या कीजिए|
5. अस्तित्ववाद दर्शन में ज्याँ पाल सार्त्र के मुख्य योगदान का वर्णन कीजिए|
6. अस्तित्ववाद दर्शन की मूल अवधारणाओं का विवेचन कीजिए|
7. ज्याँ पाल सार्त्र के शैक्षिक दर्शन का मूल्यांकन कीजिए|

इकाई -21 समाजशास्त्र का अर्थ, शिक्षा और समाज मे आपसी सम्बन्ध, शैक्षिक समाजशास्त्र का अर्थ, प्रकृति और क्षेत्र (Sociology – Its Meaning, Relationship between Education and Society, Educational Sociology - Meaning nature and Scope)

21.1 प्रस्तावना (Introduction)
21.2 उददेश्य (Objectives)
भाग एक
21.3 समाजशास्त्र और शैक्षिक समाजशास्त्र (Sociology and Educational Sociology)
    21.3.1 समाजशास्त्र का अर्थ (Meaning of Sociology)
    21.3.2 समाजशास्त्र की परिभाषाये (Definition of sociology)
    21.3.3 समाजशास्त्र की विषय वस्तु (Subject Metter of Sociology)
        अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग दो
21.4 शिक्षा और समाज मे सम्बन्ध (Relationship Between Education and Society)
    21.4.1 इतिहास में उदाहरणों द्वारा शिक्षा तथा समाज का सम्बन्ध (Relationship Between Education and Society)
    21.4.2 ओटावे द्वारा शिक्षा व समाज के सम्बन्ध (Relationship between Education and Society)
        अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग तीन
21.5 शैक्षिक समाजशास्त्र (Educational Sociology)
    21.5.1 शैक्षिक समाजशास्त्र का अर्थ (Meaning of Educational Sociology)
    21.5.2 शैक्षिक समाजशास्त्र की प्रकृति (Nature of Education Sociology)

21.5.3 शैक्षिक समाजशास्त्र का क्षेत्र (Scope of Educational Management)
21.5.4 शैक्षिक समाजशास्त्र का उददेश्य (Aims of Educational Management)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
21.6 सारांश (Summary)
21.7 शब्दावली (Glossary)
21.8 अभ्यास प्रश्नो के उत्तर (Answer of Exercise Question)
21.9 सन्दर्भ (Reference)
21.10 उपयोगी/ सहायक ग्रन्थ (Useful Books)
21.11 दीर्घ उत्तर वाले प्रश्न (Long answer Types Question)

21.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा समाज की सामाजिक विरासत, सभ्यता और संस्कृति को पीढी दर पीढी सुरक्षित रखने का महत्वपूर्ण साधन है। शिक्षा के द्वारा ही नयी पीढी को समाज की संस्कृति और सभ्यता से परिचित कराया जाता है। नयी पीढी इस विरासत में अपना योगदान करती है। शिक्षा का उददेश्य बालक मे ऐसी सामाजिक भावना और सामाजिक गुणों का विकास करना है। जिससे वे समाज और राष्ट्र के उपयुक्त सदस्य के रूप में अपना उत्तरदायित्व समझ सके। विद्यालय स्वयं समाज का एक छोटा रूप है। अध्यापक विद्यालय में सब प्रकार के आदर्श सामाजिक वातावरण निर्माण करके शिक्षार्थियों को समाज का सही चित्र देते है। विद्यालय से निकलकर शिक्षार्थी इसी चित्र को वास्तविक समाज से साकार करने का प्रयास करते है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति में समाज के आदर्श सदस्य के गुण का निर्माण होते है और जब अधिकतर सदस्य सुशिक्षित होगे तो समाज का निश्चय ही विकास होगा।

21.2 उददेश्य (Objectives)

- समाजशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना |
- शिक्षा का समाज पर प्रभाव व परिवर्तन |
- समाज व शिक्षा का आपसी सम्बन्ध की जानकारी |

- समाजशास्त्र की प्रकृति और क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त कराना |
- समाज का शिक्षा पर प्रभाव |
- शैक्षिक समाजशास्त्र का ज्ञान प्राप्त कराना |

21.3 समाज शास्त्र और शैक्षिक समाजशास्त्र (Sociology and Education Sociology)

शिक्षा चैतन्य रूप मे एक नियन्त्रित प्रकिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार मे परिवर्तन लाया जाता है। समाज मे शिक्षा एक सामाजिक प्रकिया है जो कि जन्म से लेकर मृत्यु तक निरन्तर चलती रहती है। बालक को सर्वप्रथम शिक्षा अपने माता पिता से प्राप्त होती है, इसके बाद विद्यालय तथा अन्य समितियॉ यह कार्य करती है। शिक्षा प्राप्त करके ही बालक समाज के आदर्शो मूल्यों तथा आचरण के नियमों का ज्ञान प्राप्त करता है। शिक्षा सामाजीकरण का एक महत्वपूर्ण साधन है। शिक्षा का अति महत्वपूर्ण कार्य समाज की सांस्कृतिक सभ्यता, प्रथा परम्परा मूल्य आदर्श आदि की रक्षा करना तथा उसे अगली पीढी को हस्तान्तारित करना है। ऐसा करने के लिए सबल माध्यम शिक्षा ही है। बालकों में सामाजिक गुणों, सामाजिक भावनाओं तथा सामाजिक दृष्टिकोण का विकास करना शिक्षा का प्रथम उददेश्य है। एक प्रजातान्त्रिक समाज में यह अत्यधिक अनिवार्य है कि वहॉ के निवासी उत्तम नागरिक हो। सामाजिकता की भावना के विकास के परिणामस्वरूप छात्र समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को अच्छी प्रकार से निभा सकेंगे तथा समाज के साथ अनुकुलन उत्तम ढंग से कर सकेगें। इससे समाज और राष्ट्र का विकास होगा।

21.3.1 समाजशास्त्र का अर्थ Meaning of Sociology-

समाज का अध्ययन करने वाले विज्ञान को समाजशास्त्र कहा जाता है। यूँ तो समाज का अध्ययन किसी न किसी रूप में अति प्राचीन काल से होता जा रहा है। किन्तु आधुनिक समाजशास्त्र का जन्म उन्नीसवी शताब्दी में माना जाता है। बौद्विक दृष्टि से समाजशास्त्र के विकास पर इतिहास दर्शन और सामाजिक सर्वेक्षण का मुख्य प्रभाव पडा। समाज के विकास में भौतिक कारक औद्योगिक क्रान्ति सामाजिक क्रान्ति तथा अनेक सामाजिक परिवर्तन थे। सन् 1850 में अगस्त कॉम्टे के लेखों से समाजशास्त्र का जन्म माना जाता है। समाजशास्त्र अन्य सामाजिक विज्ञानों की तुलना में अधिक विश्वकोषात्मक (Encyclopedia) हैं| वह विकासात्मक और विधायक विज्ञान है वह समाज का विज्ञान है,उसमें सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है वह सामाजिक समबन्धों के स्वरूपों और अन्तर्वस्तु दोनो का अध्ययन किया जाता है समाजशास्त्र के क्षेत्र के विषय में समाजशास्त्रियों में दो प्रमुख विचारधारायें दिखलाई पडती है। विशेषात्मक सम्प्रदाय के अनुसार समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों की अन्तर्वस्तु का नही बल्कि स्वरूपों का अध्ययन करता है यह सम्प्रदाय समाजशास्त्र के क्षेत्र को अत्यधिक सकुचित कर देता है। वास्तव में मूर्त सम्बन्धों से अलग करके अमूर्त स्वरूपों का

अध्ययन किया जा सकता है।

समन्वयक सम्प्रदाय समाजशास्त्र को विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों का एक समन्वयक अथवा एक सामान्य विज्ञान मानता है। समाजशास्त्र और अन्य सामाजिक विज्ञानों की विषय सामग्री एक है। किन्तु दृष्टिकोण भिन्न है। यह दूसरी ओर अन्य विज्ञानों का संकलन मात्र भी नही है। वह अपनी विषय सामग्री अन्य विज्ञानों से अवश्य लेता है। किन्तु उसकों ज्यों का त्यों संग्रहमात्र न करके बिल्कुल नया रूप में दे देता है। वास्तव में समाजशास्त्रीय पद्वति से अध्ययन किये जाने वाले सत्र विषय समाजशास्त्र के क्षेत्र में आते है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण व्यावहारिक और वर्तमान है। भौतिक विज्ञानों के दृष्टिकोण की तुलना में यह अधिक गत्यात्मक है। समाजदर्शन की अपेक्षा यह अधिक तथ्यात्मक है।

21.3.2 समाजशास्त्र की परिभाषाएं Definition of Sociology –

समाजशास्त्र अन्य विज्ञानों की तुलना में एक विज्ञान है। समाजशास्त्र के अर्थ का स्पष्टीकरण विभिन्न समाजशास्त्रियों द्वारा दी गयी परिभाषाओं से स्पष्ट होता है। विभिन्न विद्वानों ने समाजशास्त्र की परिभाषा पृथक पृथक ढंग से का है विद्वानों ने समाजशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार दी है।

ओडम (Odem)- "समाजशास्त्र समाज का विज्ञान है”
ब्लैकमार तथा गिलिन (Blackmaar and Gillin) - "समाजशास्त्र मानव जाति के सम्बन्ध से उत्पन्न समाज की घ्टनाओं का अध्ययन करता है” ।

मैक्स वेबर (Max Baber)- "समाजशास्त्र एक विज्ञान है जो सामाजिक कार्यो की व्याख्या करते हुए इनको स्पष्ट करने का प्रयत्न करता है”।

कूले और मूर (Cooley and moore)- ‘’समाजशास्त्र व्यक्ति के बहुमुखी व्यवहार का अध्ययन करता है।

“इमाइल दुर्खीय (EmileDurkhim)- ‘’समाजशास्त्र सामूहिक प्रतिनिधित्व का विज्ञान है।

“गिलीन और गिलीन (Gline and Gline) ‘’व्यापक अर्थो में समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो मानव समूह के सयोग से उत्पन्न होने वाली अन्तक्रियाओं का अध्ययन करता है।“

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते है
I समाजशास्त्र समाज का विज्ञान है

II समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है
III समाजशास्त्र सामाजिक जीवन तथा समाज में होने वाली घटनाओं का अध्ययन करता है।

III समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का अध्ययन करता है।

21.3.3 समाजशास्त्र की विषय-वस्तु (Subject Matter of Sociology)

समाजशास्त्र की विषय वस्तु के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है परन्तु अधिकांश समाजशास्त्री सामाजिक प्रक्रियाओं (Social Processes) सामाजिक संस्थाओं (Sociol Institution) सामाजिक नियंत्रण (Social Control) एवं सामाजिक परिवर्तन (Social Change) को इसमें सम्मिलित करते है।

के0 डेविस (k.Devis) के अनुसार समाजशास्त्र की विषय वस्तु में सामाजिक संरचना सामाजिक कार्य तथा सामाजिक अन्त:क्रिया सम्मिलित है।

मैकाइवर एंड पेज (Maciver and Page) के अनुसार- ''समाज की विषय-वस्तु सामाजिक सम्वन्ध ही है। समाजशास्त्र के अंतर्गत्त सामाजिक सम्बन्धोंअर्थात समाज का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है। प्रत्येक समाज मे कुछ रीति-रिवाज, कार्य प्रणालियों, अधिकार और पारस्परिक सहायता, अनेक समूह और उनके विभाजन, मानव व्यवहार के नियंत्रनो एव स्वाधीनता की कुछ न कुछ व्यवस्था पायी जाती है। इन्ही के द्वारा समाज बनता है। जो कि समाजशास्त्र का अध्ययन विषय है। समाजशास्त्र मानव की आधारभूत विशेषताओ का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र व्यकित के सामाजिक व्यवहारो का अध्ययन करता है और इस द्रष्टिकोण से वह समाज की संस्कृति का भी अध्ययन करता है। इसके अतिरिक्त विशेष उल्लेख्ननीय तथ्य यह है कि समाजशष्त्र मे सम्पूर्ण समाज को एक इकाई मानकर अर्थात समग्र रुप से अध्ययन किया जाता है।

अपनी प्रगति जानिए (Check your Progress)

प्र.1 समाजशास्त्र व्यक्तियो के किस व्यवहार का अध्ययन करता है ?

प्र. 2 सन 1850 मे किस विद्वान के लेखो से समाजशाष्त्र का जन्म माना जाता है

अगस्त काम्टे (ब) आगस्टीन (स) रुसो (द) आदित्य सेन

प्र.3 समाजशास्त्र समाज का विज्ञान है यह परिभाषा है
(अ) मेक्स वेबर (ब) कूले और मूरे (स) इमाईल दुर्खीम (द) ओडम

प्र.4 समाजशास्त्र मे सम्पूर्ण इकाई को क्या माना जाता है।

(अ) एक इकाई (ब) सम्पूर्ण इकाई (स) दो इकाई (द) चार इकाई

21.4 शिक्षा और समाज में संबंध (Relationship Between Education and Society)

शिक्षा तथा समाज का अटूट सम्बन्ध है। समाज में संस्कृति तथा जीवन विधि का जो रूप होता है उसी के अनुरूप उस समाज की आवश्यकतायें होती है। उन्हीं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उस समाज में शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। समाज की आवश्यकताओं परिवर्तन के साथ साथ शिक्षा का स्वरूप भी परिवर्तित करने की आवश्यकता होती है। किसी भी समाज में शिक्षा का स्वरूप क्या होगा यह इस समाज की मान्यताओं मूल्यों एवं उददेश्यों पर निर्भर करता है। शिक्षा व्यक्ति को समाज के अनुरूप कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।

21.4.1 इतिहास के उदाहरणों द्वारा शिक्षा तथा समाज का सम्बन्ध (Relationship Between Education and Society by Historical example)

I प्राचीन एवं मध्यकालीन समाज (Ancient and Medieval Society)

इस काल में शिक्षा का स्वरूप धार्मिक था क्योंकि इन समाजों में धर्म का अत्यधिक महत्व था शिक्षा के द्वारा बालको के धार्मिक तथा चारित्रिक विकास पर बल दिया जाता था और धार्मिक सिद्वान्तों का अनुसरण किया जाता था।

II आधुनिक समाज (Modern Society)

आधुनिक समाज में धर्म की अपेक्षा विज्ञान का विशेष महत्व है। अत: शिक्षा द्वारा व्यक्ति में चिन्तन तर्क तथा निर्णय आदि मानसिक शाक्तियों के विकास पर बल दिया जाता है। इसके अतिरिक्तव्यक्ति यों को यह रचतन्त्रता निर्णय करने कर अधिकार है कि वे किस प्रकार की शिक्षा ग्रहण करें। आधुनिक समाज के कई रूप है जैसे भौतिकवादी समाज साम्यवादी समाज प्रयोगवादी समाज आदर्शवादी समाज जनतन्त्रवादी समाज आदि । प्रत्येक समाज अपने अपने आदर्शो तथा आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा की व्यवस्थाओं को करता है।

III फासिस्ट समाज (Fascist Society)

जर्मनी जापान और इटली इस प्रकार के समाज के उदाहरण रहे है फसिस्ट समाज में एक ही व्यक्ति का पूर्ण अधिकार रहता है विरोध करने वाले को कठोर दण्ड दिया जाता है हिटलर और मुसोलिनी ऐसे ही शासक थे। इन समाजों में शिक्षा का स्वरूप शासक की इच्छा से निर्धीरत किया जाता था। समाज में प्रत्येक बालक को शिक्षा प्राप्ति का समान अवसर नही मिलता था केवल प्रतिभाशाली बालकों को ही शिक्षा के लिए प्रोत्साहित किया जाता है । शिक्षा बालकों में शक्ति और राज्य के प्रति भक्ति की भावना और उसके हित के लिए स्वयं को बलिदान करने की भावना उत्पन्न करती है।

IV प्रजातान्त्रिक समाज (Democratic Society)

प्रजातान्त्रिक समाज सवतन्त्रता, समानता तथा बन्धुत्व के सिद्वान्तों पर आधारित होती है। इस प्रकार के समाज में व्यकित्त्व का विशेष सम्मान किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति अपना विकास व सम्मान चाहता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास चिन्तन मनन लेखन अभिव्यक्ति तथा व्यवसाय आदि के क्षेत्र में स्वतन्त्रता होती है। अत इस समाज में शिक्षा का आधार भी प्रजातान्त्रिक होता है प्रत्येक बालक को उसकी रूचियों , योग्यताओं , रूझानों तथा क्षमताओं के अनुसार शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।

V प्रयोजनवादी समाज (Pragmatic Society)

प्रयोजनवादी क्रिया तथा बुद्दि की अपेक्षा परिस्थिति को अधिक महत्व देते ही ये कहते है कि परिवर्तित परिस्थितियों में शिक्षा का स्वरूप भी परिवर्तित किया जाना चाहिए। शिक्षा के उददेश्य ज्ञान व सत्य की खोज है। समाज की नवीन परिस्थितियों में तथा नये मूल्य के अनुसार नये सत्य या नये ज्ञान की आवश्यकता होती है। जिनको शिक्षा द्वारा खोजा जा सकता है।

VI भौतिकवादी समाज (Materialistic Society)

भौतिकवादी समाज में भैतिक सुख-सुविधाओं,धन, सम्पति आदि को महत्व दिया जाता है। अत:ऐसे समाज में शिक्षा की व्यवस्था भी इस प्रकार की जाती है। जिसके द्वारा व्यक्ति अधिक धन उपर्जित कर सके तथा भौतिक क्षेत्र में उन्नति कर सके।

VII आदर्शवादी समाज (Idealism Society)

आदर्शवादी समाज में बालक के चरित्र निर्माण तथा नैतिक विकास पर बल दिया जाता है क्योंकि इन समाजों में विचार तथा बुद्दि को महत्व दिया जाता है तथा आध्यात्मिक उन्नति को आदर्श समझा जाता है।

21.4.2 ओटावे द्वारा शिक्षा व समाज के सम्बन्ध (Relationship Between Education and Society)

I शिक्षा का संस्कृति से सम्बन्ध (Relation of Education of Culture)

बालक को शिक्षित करने का प्रथम उत्तरदायित्व मॉ बाप का होता है। इसी कारण माता पिता बालक को प्रथम शिक्षा होते है जो पग पग पर बालक को विकास की ओर उन्मुख करते है इसी

कारण सभी शिक्षा शास्त्रियों परिवार को बालक की प्रथम पाठशाला कहा है। बालक को शिक्षित करने में घर व विधालय का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है परन्तु शिक्षा के साधनों को हम दो श्रेणियों में ही सीमित नही कर सकते चूँकि शिक्षा एक व्यापक प्रकिया है जो सम्पूर्ण समुदाय में संचालित होती है। शिक्षा हमें हमारे सांस्कृतिक मूल्यों से अवगत कराते हुए उसके अनुकूल व्यवहार करने को प्रेरित करती है। इसके साथ ही समाज की संस्कृति का भी शिक्षा के उत्तर प्रभाव पडता है।

II शिक्षा संस्कृति के स्थानान्तरण के रूप में (Education as the Transmission of Culture)

शिक्षा का बहुत ही महत्तवपूर्ण कार्य होता है समाज के सांस्कृतिक मूल्यों व व्यवहार के तौर तरीकों को युवा पीढी को स्थानान्तरित करना चूँकि इससे समाज में स्थिरता आती है और इस बात की आशा करती है कि उसकी परम्परायें स्थायी रहेंगी और इस कार्य को शिक्षा के सरक्षणात्मक कार्य कहते है। आधुनिक समाज की प्रगति व विकास हेतु हमें आलोचानात्मक व रचनात्मक दृष्टि वाले व्यक्तियों की आवश्यकता है चूँकि इससे वैज्ञानिक व प्रौघोगिकी के क्षेत्र में नवीन अविष्कार खोजो को प्रोत्साहन मिलेगा।

III शिक्षा के सामाजिक निर्धारक (The Social Determinants of Education)

शिक्षा का स्वरूप उस समाज पर निर्भर करता है जिसमें उसे क्रियान्वित किया जाना है इसी कारण प्रत्येक समाज में बालको के व्यक्तितत्व में भिन्नता होती है। चूँकि प्रत्यके समाज की अपनी निजी सांस्कृतिक , सामाजिक, आर्थिक धार्मिक व राजनैतिक शक्तियाँ होती है और यही शक्तियाँ सामाजिक निर्धारिक का कार्य करती है। वास्तव में देखा जाये तो शिक्षा वह प्रविधि है जैसे व्यक्ति चैतन्य रूप से किसी उददेश्य की पूर्ति हेतु प्रयोग करता है परन्तु जैसे ही उददेश्य बदलता हैं शिक्षा में भी परिवर्तन आ जाता है।

IV सामाजिक अन्त:क्रिया (Social Interaction)

सामाजिक अन्त:क्रिया से अभिप्राय हैव्यक्ति व समूह के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्ध जिसके फलस्वरूप उन व्यक्तियों के व्यवहार में परिवर्तन आता है जो उसमें भागीदार होते है। व्यक्ति व समूह के मध्य होने वाली अन्त:क्रिया के परिणाम स्वरूप ही बालक संस्कृति के साथ आत्मीक स्थापित करता है और अपने समूह की संस्कृति व मूल्यों की जानकारी भी प्राप्त करता है कोई भी सामाजिक अन्त:क्रिया जिसके द्वारा बालक या व्यक्ति के व्यवहार मे वांछनीय परिवर्तन आता है, शिक्षा के अन्तर्गत सम्मिलित की जाती है। व्यक्ति समाज में रहता है और समाज के सदस्यों के साथ वह अपने

विचारों व भावनाओं को व्यक्त करता है। साथ ही समाज के अन्य सदस्य जब अपने विचार व भावनायें अभिव्यक्त करते हैं तो व्यक्ति उन्हें ग्रहण करता है और अपने विचारों व भावनाओं को नवीन शिक्षा प्रदान करता है। इस प्रकिया को ही सामाजिक अन्त:क्रिया कहते है।

अपनी प्रगति जानिए (Check your Progress)

प्र0 1 आधुनिक समाज के विभिन्न रूपों के नाम लिखिए।

प्र02 किस प्रकार के समाज में एक व्यक्ति का पूर्ण निरकुंश अधिकार रहा है

(अ) आधुनिक समाज (ब) फासिस्ट समाज

(स) प्रजातान्त्रिक समाज (द) अध्यक्षात्मक समाज

प्र03 बालक को शिक्षित करने का प्रथम उत्तरदायित्व है।

प्र0 4 बालक के व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन आता है।

(अ) शिक्षा द्वारा (ब) रीति रिवाज द्वारा

(स) संस्कार द्वारा (द) धन द्वारा

21.5 शैक्षिक समाजशास्त्र (Educational Sociology)

जार्ज पैने (George Payne) को शैक्षिक समाजशास्त्र को जन्मदाता कहा जाता है। 1928 में उनकी एक पुस्तक "शैक्षिक समाजशास्त्र के सिद्वान्त " (Principal of Education) प्रकाशित हुई जिसमें उन्होने कहा कि यह एक नवीन विज्ञान है जो समाजशास्त्र व शिक्षा को जोडता है।

जान डयूवी (John Dewey) ने अपनी पुस्तक स्कूल और समाज के अर्न्तगत इस विज्ञान पर महत्व दिया और कहा कि शिक्षा एक सामाजिक प्रकिया है। जिसके द्वारा व्यक्ति की सामाजिक भावनाओं (Social Feeling) को विकसित किया जाना चाहिए। साथ ही इस प्रकिया के द्वारा व्यक्ति के अर्न्तगत सामाजिक चेतना (Social Consciousness) का विकास भी किया जाना चाहिए और साथ ही साथ शिक्षा की प्रकिया व्यक्ति द्वारा सामाजिक चेतना में भाग लेने में विकसित होती है।

21.5.1 शैक्षिक समाजशास्त्र का अर्थ (Meaning and Definition of Education Sociology)

शैक्षिक समाजशास्त्र शिक्षा तथा समाजशास्त्र का समन्वित रूप है यह समाजशास्त्र का एक महत्त्वपूर्ण अंग तथा नवीन शाखा है जो अभी पिछले कुछ ही वर्षो में विकसित हुई है। शैक्षिक समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो समाजशास्त्र के उददेश्यों को शैक्षिक क्रिया द्वारा प्राप्त करने का प्रयास करता है अत: यह विज्ञान समाज की सम्पूण संस्थाओं जैसे परिवार, स्कूल, समुदाय , धर्म राज्य, समाचार पत्र एवं रेडियों आदि का अध्ययन करके व्यक्ति को श्रेष्ठ एवं सामाजिक प्राणी बनाने के लिए शिक्षा के उददेश्यो, पाठयक्रमों शिक्षण पद्वतियों तथा अन्य सभी भागों को निर्धारित करता है।

शैक्षिक समाजशास्त्र सामाजिक उन्नति एवं विकास के लिए सामाजिक प्रति क्रियाओं एवं सामाजिक अन्त:क्रियाओ का अध्ययन करता है क्योंकि इनके विषय में ज्ञान के आधार पर ही हम शिक्षा का स्वरूप निश्चित कर सकते है तथा शिक्षा की समस्याओं का समाधान कर सकते है। संक्षेप में शैक्षिक समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो शिक्षा सम्बन्धित आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली प्रक्रियाओं, जनसमूहों, संस्थाओं तथा समितियों का अध्ययन करता है। शैक्षिक समाजशास्त्र का समबन्ध व्यक्ति तथा समाज दोनों की प्रगति से है।

21.5.2 शैक्षिक समाजशास्त्र की प्रकृति (Nature of Education Sociology)

समाज,समाजशास्त्र तथा शैक्षिक समाजशास्त्र का शिक्षा से गहरा संबंध है इसलिए प्रत्येक समाज को अपनी आकांक्षाओं आवश्यकताओं तथा आदर्शो को सामने रखते हुए शिक्षा की प्रकिया को इस प्रकार से नियोजित करता है कि वह अपने आदर्शो को प्राप्त करले तथा उसके सभी व्यक्ति उपयोगी सदस्य बन जायें। यह महान कार्य उसी समय पूरा हो सकता है जब समाज के सभी व्यक्ति उसके आदर्शो के अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करते हुए उसके साथ अनुकूल कर सके शिक्षा इस सम्बन्ध में सहायता कर सकती है। समय तथा परिस्थितियों के अनुसार समाज यह निश्चित करता है किस प्रकार की शिक्षा दी जायें जिससे वह उपयोगी और श्रेष्ठ सदस्य बनकर समाज के सबल सुदृढ तथा शक्तिशाली बना सके।

शिक्षा एक ऐसी प्रकिया है जो मानव जीवन के प्रत्यके पक्ष को प्रभावित करती है मानव समाज का एक अभिन्न अंग है। समाज से परे उसके अस्तित्व एवं विकास की कल्पना नही की जा सकती है। शिक्षा भी एक ऐसी प्रकिया है जो समाज में ही चलती रहती है। शिक्षा का स्वरूप व उसकी प्रकृति समाज के स्वरूप व प्रकृति पर निर्भर करता है और इसी कारण यह कहा जा सकता है कि शिक्षा और समाज को एक दूसरे से पृथक करना कठिन ही नही वरन असम्भव है। शिक्षा और समाज के परस्पर सम्बन्धों का अध्ययन शिक्षा के सामाजिक आधार के अन्तरगत आता है।

21.5.3 शैक्षिक समाजशास्त्र का क्षेत्र (Scope of Educational Management0

शैक्षिक समाजशास्त्र एक महत्तवपूर्ण तथा विस्तृत विज्ञान है इसके अन्तर्गत शिक्षा तथा सामाजिक समबन्धों के परस्पर प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। शैक्षिक समाजशास्त्र के क्षेत्र या विषय वस्तु में निम्नलिखित को सम्मिलित किया जा सकता है।

1 शिक्षा की सम्पूर्ण प्रकिया पर वाहय सामाजिक व्यवस्था के प्रभाव का अध्ययन करता है |

2 स्कूल व अन्य आन्तरिक संगठनों का समाज के अन्य साधनों से सम्बन्ध का अध्ययन करना |

3 कक्षा के अंदर होने वाली सामाजिक अन्तक्रिया को समाजशास्त्रीय सिद्वान्तों व पद्वतियो के सनदर्भ में देखना |

4 व्यक्ति पर सामाजिक तथा सांस्कृतिक वातावरण का प्रभाव व्यक्ति और समाज की दृष्टि से पाठयक्रम में परिवर्तन |

5 समाज,उसकी मागें एवं आवश्यकताओं, सामाजिक प्रकिया, सामाजिक संगठन सामाजिक नियन्त्रण, सामाजिक परिवर्तन सामाजिक प्रगति आदि का अध्ययन।

6 शिक्षक,समाज में उसका स्थान, छात्रों से उसका सम्बन्ध उसको प्रभावित करने वाले सामाजिक तत्व |

7 समाचार पत्र,रेडियों , टेलीविजन,सिनेमा पुस्तकालय प्रेस आदि तथा इनका सामाजिक जीवन में स्थान है।

परिभाषा कार्टर Carter) के शब्दो में "शैक्षिक समाजशास्त्र में समाजशास्त्र के उन पहलुओं का अध्ययन है जो कि शैक्षिक प्रकिया में सीखनें के मूल्यवान कार्यक्रम और सीखने की प्रकिया के नियन्त्रण की ओर संकेत करते है।

ओटोवे(Otave) के अनुसार शैक्षिक समाजशास्त्र इस मान्यता से प्रारम्भ होता है कि शिक्षा एक क्रिया है जो कि समाज में होती है और समाज शिक्षा की प्रकृति को निर्धारित करता है।

21.5.4 शैक्षिक समाजशास्त्र के उददेश्य (Aims of Educational Sociology)

शैक्षिक समाजशास्त्र के उदेदश्य निम्नलिखित है

1 समाज के सन्दर्भ में शिक्षक के कार्य का ज्ञान प्राप्त करना और सामाजिक प्रगति के दृष्टिकोण से विद्यालय के कार्य का ज्ञान प्राप्त करना |

2 सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक प्रवृतियों को शिक्षा के साधन के रूप में समझते हुए शिक्षा के पाठ्यक्रम का सामाजिक दृष्टिकोण से नियोजन करना।
3 सामाजिक तत्वों का अध्ययन करना और व्यक्ति पर पडने वाले उनके प्रभावों को समझना |

4 प्रजातान्त्रिक विचारधाराओं को समझना |

5 उपर्युक्त उदेदश्यों की प्राप्ति के लिए अनुरूप अनुसन्धान की विधियों का उपयोग करना ।

अपनी प्रोगेस जानिए (Check your Progress)

प्र 1. शैक्षिक समाजशाष्त्र का जन्मदाता किसे कहा जाता है।

प्र.2 Principal of Educational Sociology नामक पुस्तक किस विद्वान की है

प्र.3 शिक्षा और समाज के परस्पर सम्बन्धों का अध्ययन का आधार है।
(अ) सामाजिक आधार (ब) राजनैतिक आधार (स) धार्मिक आधार (द) शैक्षिक आधार

प्र.4 शिक्षा और समाज एक दूसरे को प्रभावित करते है-

(अ) नही (ब) कभी नही (स) कभी कभी (द) हॉ

21.6 सारांश (Summary)

शैक्षिक समाजशास्त्र ने शिक्षा के उददेश्यों, पाठयक्रम तथा शिक्षक विधियों को प्रभावित किया है। शैक्षिक समाजशास्त्र के अनुसार वे शिक्षण विधियॉ अच्छी मानी जाती है। शैक्षिक समाजशास्त्र के अनुसार वे शिक्षण विधियॉ अच्छी मानी जाती है। जो छात्रों को ऐसा ज्ञान प्रदान करे कि वे विभिन्न सामाजिक परिस्थितयों से करने में योग दे जो शिक्षण विधि सामाजिक व्यवहार में सहायक होगी, वे सामूहिक योजनाओं तथा प्रकियाओं को समझाने में सहायक होगी । शैक्षिक समाजशास्त्र में शिक्षा को लोक तन्त्रीय दृष्टिकोण प्रदान किया है। विद्यालय में कृतिमता को दूर रखा जाता है। बालक का पाठयक्रम उसकी आवश्यकताओं के अनुसार किया जाना चाहिए ताकि वह अधिक से अधिक अपना व समाज का विकास कर सके। छात्र को विषय चयन में पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान की जाये ताकि वह अपनी योगयतानुसार अपना विकास कर समाज को एक नई शिक्षा प्रदान कर सके। छात्र को विषय चयन में पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान की जायें ताकि वह अपनी योगयतानुसार अपना विकास कर समाज को एक नई दिशा प्रदान कर सके।

21.7 शब्दावली (Glossary)

सामाजिक विरासत से हमारा अभिप्राय पीढी दर पीढी चले आ रहे रीति रिवाज, प्रथायें परम्परा में जो एक समाज अपने अपने वाले पीढियों को स्थानन्तरित करता हैं| परम्परागत रूप से अपनायी या प्राप्त होने वाले क्रियाओं को सामाजिक विरासत कहते है।

फासिस्ट समाज में एक व्यक्ति का शासन सत्ता व समाज पर पूर्ण अधिकार होता है। उसके मुख से निकलने वाले शब्द ही कानून आदेश है जिनका पालन करना आवश्यक है। आज्ञा के उल्लघंन पर कठोर दण्ड का प्रावधान था उदाहरण के रूप में जर्मनी जापान और इटली आदि देश है।

भौतिकवादी समाज - भौतिकवादी समाज से हमारा अभिप्राय उस समाज से है जो अपने लिए सुख सुविधाओं आने वाली पीढी के लिए भी इन साधनों में वृद्धि के लिए प्रयासरत रहता है।

21.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर निम्नलिखित है

खंड एक

उत्तर (1) सामाजिक व्यावहारो (2) आगस्त काम्टे

(3) ओडम (4) एक इकाई

खन्ड दो

उत्तर (1) भौतिकवादी समाज, साम्यवादी, प्रयोगवादी समाज, आर्दशवादी समाज, जनतंत्रवादी समाज आदि।

(2) फ़ासिस्ट समाज।

(3) माता-पिता

(4) शिक्षा

खन्ड तीन

उत्तर (1) जार्ज पैने (2) जार्ज पैने (3) सामाजिक आधार (5) हॉ

21.9 सन्दर्भ (Reference)

1.लाल एण्ड पलोड, *एजुकेशनल थॉट एण्ड प्रैक्टिस*, मेरठ: आर0लाल प्रकाशन ,

2.पाण्डा, अ. कु. (2011). *शिक्षा दर्शन*. कानपुर: साहित्य रत्नालय्,

3.सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप., शिखा, च. (2010). *उदीयमान भारतीय समाज मे शिक्षक,* मेरठ: आर लाल प्रकाशन.

4.एलैक्स, शी. मै. (2008). *शिक्षा दर्शन*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

5.ओड, एल. के. *शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि*. राजस्थान ग्रंथ अकादमी.

21.10 उपयोगी/ सहायक ग्रंथ

1. मिश्र, (डॉ) के.के. *आधुनिक भारत मे सामाजिक परिवर्तन.*
2. वर्मा ओ. प्र. *समाजशाष्त्रीय द्रष्टिकोण.*

3. शर्मा आर.के. *सामाजिक विज्ञान / अध्ययन शिक्षण.*
4. शर्मा. वी. एल. *सामाजिक विज्ञान शिक्षण.*

5.शर्मा रा.ना. *शैक्षिक समाजशाष्त्र*

6. सरोज स. (डॉ) *शिक्षा के दार्शनिक एव सामाजिक आधार*

7. *शोध पत्रिका*

8. *इंटंरनेट*

21.11 दीर्घ उत्तर वाले प्रश्न (Long Answer Types Question)

प्र.1 समाजशाश्त्र का अर्थ लिखिय। समाजशाष्त्र और शैक्षिक समाजशाष्त्र के आपसी सम्बन्ध का विस्त्रित वर्णन किजिय।

Write the meaning of sociology .Explain in Details Interaction relation of Sociology.

प्र. 2 समाजशाष्त्र की परिभाषा लिखिय व इसके उद्देश्यो की विस्त्रत व्याख्या किजिय।
Write the definition of Sociology .Explain in details aims of Society.

प्र3. शिक्षा और समाज के सम्बन्धो की विस्त्रत रुप मे लिखिय।

Explain in details the relationship of education and society.

प्र.4 फासिस्ट समाज व प्रजातांत्रिक समाज मे अंतर का वर्णन किजिय।

Explain the difference fasist Society and Democrative Society.

प्र 5. शैक्षिक समाजशाष्त्र से आप क्या समझते है शेक्षिक समाजशाष्त्र के क्षेत्र का वर्णन किजिय।

What do you understand the Education Sociology. Explain the scope of Education Society.

इकाई- 22 शिक्षा और समाज, शिक्षा एक सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक उन्नति और सुधार (Education and Society , Education as a Social System ,Role of social progress and modification)

22.1 प्रस्तावना (Introduction)

22.2 उद्देश्य (Objectives)

भाग-1

22.3 शिक्षा और समाज (Education& Society)

    22.3.1 शिक्षा का अर्थ (Meaning of Education)

    22.3.2 समाज का अर्थ (Meaning of Society)

        अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

भाग-2

22.4 शिक्षा एक सामाजिक व्यवस्था (Education as social system)

    22.4.1 समाज का शिक्षा पर प्रभाव (Impact of Society on Education)

    22.4.2 शिक्षा का समाज पर प्रभाव (Impact on Education on Society)

        अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

भाग-3

22.5 सामाजिक विकास की प्रक्रिया में शिक्षा की भूमिका (Role of Education in the Process of Social Development)

    22.5.1 शिक्षा के समाज के प्रति कर्तव्य (Duties of Education Towards Society)

    22.5.2 आधुनिकीकरण की प्रकृति (Nature of Modernization)

    22.5.3 सामाजिक परिवर्तन एवं आधुनिकीकरण (Social change and Modernization)

    22.5.4 आधुनिकीकरण की विशेष ताएं Elements of Characteristics of Moderization)

22.5.5 शिक्षा द्वारा आधुनिकीकरण (Modernization Through Education)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
22.6 सारांश (Summery)
22.7 शब्दावली (Glossary)
22.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Exercise Question)
22.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference)
22.10 सहायक/उपयोगी पाठ्यक्रम (Reference Book)
22.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Question)

22.1 प्रस्तावना Introduction

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती है। मानव समाज का एक अभिन्न अंग है समाज से परे उसके अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। शिक्षा भी एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज में ही चलती रहती है। शिक्षा का स्वरूप व उसकी प्रकृति समाज के स्वरूप व प्रकृति पर निर्भर करती है और इसी कारण यह कहा जाता है कि शिक्षा और समाज को एक दूसरे से पृथक करना कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है। विद्यालय एक समिति है और शिक्षा एक संस्था है। इस प्रकार स्पष्ट है कि विद्यालय समाज का महत्वपूर्ण अंग है यहां पर समाज से तात्पर्य सामान्य समाज से नहीं बल्कि विशिष्ट समाज से है। विशिष्ट समाज से तात्पर्य एक विशेष देश की सीमाओं में रहने वाले मानव समाज से होता है जिसमें कि एक विशिष्ट संस्कृति पायी जाती है, विद्यालय का इसी विशिष्ट समाज से सम्बंध होता है। इसी कारण भिन्न-भिन्न देशो में शिक्षाशास्त्रियों ने शिक्षा के भिन्न-भिन्न उद्देश्य बतलाये हैं उदाहरण के लिए प्राचीन भारत में शिक्षा का उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति था, जबकि चीन मे प्राचीन समय में विद्वता प्राप्त करना था। समय व परिस्थिति के अनुसार शिक्षा व समाज का स्वरूप बदलता रहता है। आज भारत में शिक्षा का विकास तेजी से हो रहा है, जिसके कारण हमें समाज में तेजी से परिवर्तन दिखायी दे रहे हैं। आज शिक्षा के माध्यम से कोई भी व्यक्ति किसी भी पद पर आसीन हो सकता है। सभी को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो रही है, जिसके कारण समाज में समानता का भाव बढ़ रहा है।

22.2 उद्देश्य Objectives

1. शिक्षा और समाज के सम्बंधों का ज्ञान प्राप्त कराना।

2. समाज द्वारा शिक्षा पर प्रभावशीलता का अध्ययन कराना।

3. शिक्षा द्वारा समाज पर प्रभावशीलता का अध्ययन कराना।
4. सामाजिक विकास में शिक्षा की भूमिका व महत्ता का अध्ययन कराना।
5. शिक्षा द्वारा आधुनिकीकरण के लक्षणों, विशेष ताओ का अध्ययन कराना।
6. शिक्षा द्वारा आधुनिकीकरण में योगदान।

भाग-एक

22.3 शिक्षा और समाज, शिक्षा एक सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक उन्नति और सुधार (Education and Society , Education as a Social System ,Role of social progress and modification)

समाज और पाठशाला के घनिष्ठ सम्बंध का विवेचन करते हुए शिक्षाशास्त्री टी.पी. नन ने लिखा है कि ''किसी राष्ट्र के विद्यालय उनके जीवन का एक अंग है, जिसका विषिष्ठ कार्य उसकी आध्यात्मिक शक्ति को संगठित करना, उसकी ऐतिहासिक निरन्तरता को बनाये रखना, उसे भूतकालीन कारनामों को सुरक्षित रखना है।'' विद्यालय के द्वारा राष्ट्र को अपने उन स्थायी स्रोतों से परिचित होना चाहिए जिनसे कि उनके जीवन के सर्वोत्तम क्षणों ने सदैव प्रेरणा ली है। विद्यालय को बालक राष्ट्रीय व भावात्मक एकता उत्पन्न की जानी चाहिए, जिससे उसे उचित नागरिकता का प्रशिक्षण मिल सके। साथ ही शिक्षा व्यक्ति की योग्यता का विकास इस कारण करें कि वह समाज को अपनी मौलिक देन उसके विकास के क्षेत्र में प्रदान कर सके।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि समाज के सभी सदस्यों को शिक्षित करना सामाजिक दायित्व है। व्यक्ति का विकास और शिक्षा का विकास शून्य में नहीं होता। यदि हम व्यक्ति को सही रूप में विकसित करना चाहते हैं तो हमे यह तय करना होगा कि हमारे विकास का आधार क्या होना चाहिए? इस प्रश्न के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि समाज के उद्देश्य, मूल्य मानक, मान्यताओं, रीति रिवाज व परम्पराओं से अच्छा आधार शिक्षा का कोई नहीं हो सकता। इस कारण हमारे लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा व समाज के घनिष्ठ सम्बंध को समझंने व उसे स्वीकार करें। यदि हम कोई भी उन्नति देखना चाहते हैं तो हमें उसके एक-एक सदस्य को शिक्षित करना होगा।

22.3.1 शिक्षा का अर्थ Meaning and Society

शिक्षा शब्द की व्युत्पति संस्कृत की 'शिक्ष' धातु से हुई है जिसका अर्थ है सीखना और सिखाना। इस अर्थ में हम देखें तो शिक्षा में वह सब कुछ निहित है जो हम समाज में रहकर सीखते हैं। शिक्षाशास्त्री शिक्षा शब्द का प्रयोग प्रायः तीन रूपों में करते हैं1.

1. ज्ञान knowledge
2. पाठ्यचर्या का विषय Subject of Curriculum
3. व्यवहार में परिवर्तन लाने वाली प्रक्रिया Process of Changing the Behavior

वास्तव में यदि देखा जाए तो शिक्षा का तीसरा अर्थ अधिक उचित प्रतीत होता है। समाज में रहकर व्यक्ति जो कुछ भी सीखता है उसी के परिणामस्वरूप वह स्वयं को पाशविक प्रवृतियों से ऊंचा उठाता है और सभ्य एवं सामाजिक प्राणी बनने की इच्छा रखता है। शिक्षा के द्वारा ही बालक का मार्ग दर्शन होता है, परन्तु हम शिक्षा को विद्यालय की चाहरदीवारी के अन्दर चलने वाली प्रक्रिया ही नहीं मानते वरन् इसे समाज में अनवरत चलने वाली प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करें। मानव जीवन को सजाने व संवारने में शिक्षा की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण रही है। इसके साथ ही शिक्षा के द्वारा ही समाज अपनी संस्कृति व सभ्यता की रक्षा करते हुए उसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्थानान्तरित करता है। वास्तव में शिक्षा ही वह प्रक्रिया है जो बालक को उचित प्रशिक्षण देते हुए उसका मार्गदर्शन करती है।

22.3.2 समाज का अर्थ (Meaning of Society)

सामान्य अर्थों में दो या दो से अधिक व्यक्तियों के समूह को समाज कहते हैं। परन्तु इन व्यक्तियों के मध्य अंतःक्रिया का होना आवश्यक है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री मैकाइवर तथा पैज ने अपनी पुस्तक 'समाज (Society) में समाज का अर्थ बताते हुए कहा है कि ''समाज सामाजिक सम्बंधों का जाल है।'' (Society is the Cobuleb of social) इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि समाज मनुष्यों का वह समूह है जो आपस में एक दूसरे से सम्बंधित होते हैं।

आरसी कलिगवुड (R.C Collingwood) ने समाज को परिभाषित करते हुए कहा कि ''समाज एक प्रकार का समुदाय है (अथवा समुदाय का भाग है) जिसके सदस्य अपने जीवन के तौर तरीकों के प्रति सामाजिक रूप से चैतन्य होते हैं तथा वह समान उद्देश्यो व मूल्यों के आधार पर एक दूसरे से बंधे होते हैं।''

अपनी उन्नति जानिए Check Your Progress

प्र. 1 क्या शिक्षा द्वारा सामाजिक विकास होता है?

(अ) नहीं (ब) कभी-कभी (स) हां (द) स्पष्ट नहीं।

प्र. 2 ''किसी राष्ट्र के विद्यालय उनके जीवन का अंग हैं, जिसका विशिष्ट कार्य उसकी आध्यात्मिक शक्ति को

बनाये रखना है’’ यह परिभाषा किस विद्वान की है?

प्र. 3 समाज (Society) किस विद्वान की पुस्तक है?

प्र. 4 दो व्यक्तियों के एकत्रित होने को क्या हम समाज कहेंगे?

(अ) हां (ब) नहीं (स) अंतःक्रिया होने पर (द) सभी सत्य

भाग दो

22.4 शिक्षा एक सामाजिक व्यवस्था (Education as social system)

बालक के व्यक्तित्व पर स्कूल का बड़ा प्रभाव पड़ता है। बालक के लिए उसका स्कूल ही उसका समाज है, जहां उसका समाजीकरण होता है। उसके गुणों की अभिव्यक्ति होती है और उसको अपने व्यक्तित्व का अवसर मिलता है। शिक्षक व्यक्तित्व और चरित्र उसके सामने एक आदर्श के रूप में होता है। उसका सीधा प्रभाव बच्चे पर पड़ता है, क्योंकि बच्चा माता-पिता से अधिक अपने अध्यापक की बात मानता है। वह अध्यापक को अपना रोल-मॉडल मानता है। शिक्षक के साथ-साथ सहपाठियों को भी बालक के व्यक्तित्व को प्रभावित करने का मौका मिलता है। उनके समूह में उसका जो कार्य और स्थिति होती है वह आगे चलकर सामाजिक जीवन में उसके कार्य और स्थिति को निष्चित करने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका सिद्ध होती है। अतः शिक्षा बालक के व्यक्ति पर प्रभाव डालती है। शिक्षा बालक को समाज के अनुकूल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। समाज अपने व्यक्तियों को जिस रूप में देखना चाहता है, शिक्षा उस कार्य में सकारात्मक भूमिका अदा करती है। समय के मांग के आधार पर शिक्षा में परिवर्तन होता रहता है, जिससे समाज तेजी से विकास की ओर उन्मुख होता है।

22.4.1 समाज का शिक्षा पर प्रभाव Impact of Social System

समाज द्वारा शिक्षा पर प्रभाव की स्थिति का वर्णन निम्न रूपों में किया जा रहा है ।

i आर्थिक दशाओ का प्रभाव Influence of Economic Conditions

समाज की आर्थिक दशाओ का शिक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जिन समाजों की आर्थिक स्थिति अच्छी होती है, वहां शिक्षा की व्यवस्था भी उन्नत होती है। वहां शिक्षा के प्रचार करने के लिए अधिकाधिक विद्यालय खोले जाते हैं। उनके भवन इस प्रकार के होते हैं कि उनमें धूप, प्रकाश , वायु आदि के आने के लिए खिड़कियों तथा रोशनदानों की व्यवस्था समुचित होती है। विद्यालय में

सभी प्रकार की शिक्षण सामग्री उपलब्ध होती है। ऐसे स्कूलों के पास फर्नीचर, प्रयोगशालाएँ, पुस्तकालय एवं वाचनालय तथा खुले खेल के मैदान भी होते हैं। साथ ही वहां के पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को सम्मिलित किया जाता है, जिनकी सहायता से समाज आर्थिक दृष्टि से उन्नति करता है। हमारे देश की आर्थिक स्थिति शोचनीय है। अतः हमारे यहां वैज्ञानिक, व्यवासायिक, प्राविधिक एवं कृषि, शिक्षा की व्यवस्था की जा रही है, ताकि देश आर्थिक रूप से उन्नत हो सके।

Ii राजनैतिक दशाओ का प्रभाव Influence of Political Conditions

समाज की राजनैतिक दशा का भी शिक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक समाज में राजनैतिक विचारधारा जिस प्रकार की होती है, वहां उसी के अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। आज भारत, चीन, अमेरिका आदि देशो में शिक्षा की व्यवस्था इन देशो की राजनैतिक विचारधाराओं के अनुसार की जाती है।

iii समाज की प्रकृति और आदर्शो का प्रभाव Influence of Social structure and ideals

समाज का स्वरूप, ढांचा, आदर्श तथा आवश्यकतायें जैसी होगी उसी प्रकार का स्वरूप निर्मित किया जाता है। यदि समाज की प्रकृति प्रजातान्त्रिक है तो शिक्षा में समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व, सहयोग आदि पर बल दिया जाता है। जबकि दूसरी ओर यदि समाज की प्रकृति तानाशाही है तो शिक्षा में अनुशासन आज्ञापालन आदि बातों पर अधिक बल दिया जाता है। भारत में आज प्रत्येक बच्चे के लिए अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा अधिनियम के माध्यम से सभी बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था की गयी है। शिक्षित होकर बच्चे राष्ट्र के विकास में अपनी भागीदारी करेंगे।

iv सामाजिक परिवर्तनों का प्रभाव Influence of social change

प्रत्येक समाज में समय के साथ परिवर्तन होते रहते हैं। कोई भी समाज स्थिर नहीं होता। सामाजिक परिवर्तन अनेक कारणों से होता है जैसे आर्थिक, सांस्कृतिक, प्रौद्योगिक, राजनैतिक इत्यादि। जब समाज की संरचना, स्वरूप तथा कार्य परिवर्तित हो जाते हैं तब शिक्षा में भी परिवर्तन लाने की आवश्यक्ता होती है। जैसे भारत में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार ब्राहमण जाति व उच्च वर्ग के लोगों को था लेकिन आज सभी भारतीय अपनी योग्यता के आधार पर शिक्षा प्राप्त व प्रदान कर सकते हैं।

v सामाजिक दृष्टिकोण का प्रभाव Influence of Social change

शिक्षा को प्रभावित करने से सामाजिक दृष्टिकोण भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। जिन समाजों के व्यक्तियों का दृष्टिकोण रूढ़ीवादी है तो वहां केवल परम्परागत शिक्षा पर बल दिया जाता है तथा शिक्षा में नवीन प्रवृत्तियों को लागू करना कठिन होता है। इसके विपरीत जिन समाजों का

दृष्टिकोण प्रगतिशील होता है वहां की शिक्षा में नये-नये विचारों, सिद्धांतों, प्रवृत्तियों तथा शिक्षण विधियों को स्थान दिया जाता है तथा बालक शिक्षा के क्षेत्र में चर्तुमुखी विकास करते हुए समाज का एक आदर्श व्यक्ति बनता है।

vi धार्मिक दशाओ का प्रभाव Influence of Religious Condition

समाज की धार्मिक मान्यताओं तथा विचारों का शिक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। धर्म के क्षेत्र में जिस प्रकार मान्यतायें तथा विचार होते हैं शिक्षा उसी के अनुरूप संगठित की जाती है। जैसे जिन समाजों में धर्म के प्रति कट्टरता पायी जाती है, वहां बालकों को केवल अपने धर्म की शिक्षा दी जाती है अन्य धर्मों के प्रति उनके मन में कोई सम्मान की भावना नहीं होती है। लेकिन भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष राज्य में सभी धर्मों को समान सम्मान दिया जाता है।

22.4.2. शिक्षा का समाज पर प्रभाव Impact of Education on Society

जिस प्रकार समाज द्वारा शिक्षा पर प्रभाव डाला जाता है उसी प्रकार समयानुसार शिक्षा भी समाज को प्रभावित करती है।

i बालक का समाजीकरण Socialization of the Child

समाजीकरण की प्रक्रिया वैसे तो परिवार से प्रारम्भ होती है लेकिन बालक के समाजीकरण में विद्यालय की भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। समाजीकरण के द्वारा बालक को समूह के नियमों, आदर्शो और प्रतिमानों के अनुसार चलना सिखाया जाता है तथा उसके व्यक्तिव का निर्माण और विकास किया जाता है। विद्यालय में बालक का सम्पर्क विभिन्न परिवारों से आये हुए अपने साथियों से होता है। साथ ही शिक्षक का चरित्र उसके लिए आदर्श होता है ऐसी स्थिति में वह बहुत कुछ सीखता है।

ii सामाजिक नियन्त्रण Social Control

सामाजिक नियन्त्रण के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार को मर्यादित किया जाता है तथा उसे समाज विरोधी कार्य करने से रोका जाता है। शिक्षा के द्वारा बालकों को विद्यालय में अनुशासन का महत्व सिखाया जाता है, नियमों का पालन करना सिखाया जाता है। अनुचित कार्य करने पर साधारण तथा कठोर दण्ड की व्यवस्था की जाती है। इससे बालक सामाजिक नियन्त्रण में रहना सीखता है।

iii सामाजिक विरासत का संरक्षण Preservation of Social Heritage

प्रत्येक समाज की अपनी एक सामाजिक विरासत अर्थात् सभ्यता, संस्कृति, रीति रिवाज, धर्म, परम्परायें, विश्वास कला आदि होती है। इस विरासत या धरोहर को प्रत्येक समाज सुरक्षित रखना

चाहता है। शिक्षा के द्वारा पूर्वजों की इस धरोहर को अगली पीढ़ी को हस्तांतरित किया जाता है। इस प्रकार संस्कृति का हस्तांतरण होते रहने से यह सुरक्षित रहती है तथा समाज का अस्तित्व बना रहता है।

Iv सामाजिक भावना की जागृति Awakening of Social Feeling

व्यक्ति तथा समाज का अत्यन्त गहरा सम्बंध है। व्यक्ति समाज में रहना पसन्द करता है। यदि कोई व्यक्ति समाज में नहीं रहना चाहता है तो वह कोई मानव नहीं होगा वह या तो देवता हो सकता है या कोई पशु क्योंकि व्यक्ति ही समाज का निर्माण करता है। एक स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्तियों में परोपकर, जनकल्याण, सामाजिकता की भावना तथा अन्य सामाजिक गुणों का विकास हो। शिक्षा द्वारा इन गुणों का विकास किया जाता है।

v सामाजिक परिवर्तन Social Change

ओटावे के अनुसार ''शिक्षा सामाजिक परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण कार्य करती है।'' आधुनिक विज्ञान तथा प्रविधियों, (Techniques) के क्षेत्र में विभिन्न अनुसंधानों के परिणामस्वरूप आश्चर्य परिवर्तन होते रहते हैं। शिक्षा इन अनुसंधानों का ज्ञान कराती है तथा इनके द्वारा होने वाले लाभों पर प्रकाश डालती हुई जन साधारण को इनका प्रयोग करने के लिए प्रेरित करती है। इन्हीं प्रयोगों से जनसाधारण के विचारों, आदर्शो , मूल्यों तथा लक्ष्यों में परिवर्तन हो जाता है।

vi समाज का राजनीतिक विकास Political Development of Society

शिक्षित व्यक्तियों में राजनैतिक जागरूकता आनी प्रारम्भ हो जाती है। उन्हें अपने कर्तव्यों और अधिकारों का समुचित ज्ञान रहता है। इसके अतिरिक्त शिक्षा के द्वारा व्यक्ति विभिन्न प्रकार की राजनैतिक व्यवस्थाओं और विचारधाराओं का ज्ञान प्राप्त करता है। इस ज्ञान के आधार पर वह अपने देश की राजनैतिक व्यवस्थाओं और विचारधाराओं की तुलना अन्य देशो की व्यवस्थाओं से करके उसका मूल्यांकन कर सकता है। इसके अतिरिक्त शिक्षित व्यक्ति ही देश की राजनैतिक व्यवस्था की रक्षा करते हैं और यदि उनमें कोई कमी हो तो उसे सुधारने का भी प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार शिक्षा समाज का राजनैतिक विकास करती है।

अपनी उन्नति जांचिए (Check Your Progress)

प्र.1- छात्र किसको अपना रोल मॉडल मानता है।

(अ) माता (ब) पिता (स) मित्रों (द) अध्यापक

प्र.2- अमेरिका में किस प्रकार की व्यवस्था है।

(अ) अध्यक्षात्मक (ब) लोकतन्त्रात्मक (स) फासिस्टवाद (द) प्रयोजनवादी

प्र.3- बालक के सामाजिक रण में प्रमुख भूमिका किसकी होती है।

(अ) परिवार (ब) विद्यालय (स) समाज (द) पड़ोस

प्र.4- क्या शिक्षा द्वारा समाज में परिवर्तन होता है।

(अ) नहीं (ब) हां (स) कभी नहीं (द) बहुत कम

भाग तीन

22.5 सामाजिक विकास की प्रक्रिया में शिक्षा की भूमिका (Role of Education in the Process of Social Development

सामाजिक विकास की प्रक्रिया में शिक्षा का गहरा सम्बंध है। समाज में निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग व उच्च वर्ग पाये जाते हैं। निम्न वर्ग व मध्यम वर्ग शिक्षा के माध्यम से अपना स्तर ऊंचा करना चाहता है। शिक्षा के माध्यम से वह अपनी स्थिति में सुधार करते हुए समाज में अपना एक अच्छा स्थान प्राप्त करता है, जिससे उसका अपना व्यक्तिगत विकास तो होता ही है साथ ही सामाजिक विकास भी होता है। शिक्षा व्यक्ति को इस प्रकार तैयार करती है कि उसका विकास तेजी से ऊपर की ओर हो। यदि कोई व्यक्ति धनी व सम्पन्न होने के बावजूद शिक्षा से वंचित रहता है तो समाज द्वारा उसको अधिक सम्मान नहीं दिया जाता है। अतः शिक्षा हमारे जीवन के लिए महत्वपूर्ण है। शिक्षा के द्वारा हम अपना सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, नैतिक स्तर को ऊंचा उठाकर अपना व राष्ट्र के विकास में भागीदारी करते हैं। यही विकास हमारा राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने देश को विकसित राष्ट्रों की श्रेणी के लिए तैयार करता है।

22.5.1 शिक्षा के समाज के प्रति कर्तव्य ;Duties of Education Towards Society

शिक्षा एक अमूल्य रत्न है। इसको प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि शिक्षा के द्वारा व्यक्तिगतम विकास तो होता ही है, वह समाज भी तेजी से विकास करता है। समाज के विकास हेतु शिक्षा के कुछ कर्तव्य निम्न प्रकार हैं

I समाज की सभ्यता एवं संस्कृति का विकास Development of Civilization and Culture

समाज की सभ्यता एवं संस्कृति के निरन्तर विकास किये जाने पर ही समाज प्रगति करता है। यह महत्वपूर्ण उदेश्य शिक्षा को ही पूरा करना चाहिए। जो शिक्षा सभ्यता और संस्कृति का संरक्षण करती है और व्यक्तियों को प्रगति करने के योग्य बनाती है, वहीं शिक्षा सर्वोत्तम होती है।

ii समाज की सभ्यता एवं संस्कृति का संरक्षण Preservation of Civilization and Culture

शिक्षा का सर्वप्रथम कार्य समाज की सभ्यता एवं संस्कृति का संरक्षण करना है। समाज के रीति-रिवाज, प्रथायें, मान्यतायें, भाषा और आदर्श संस्कृति के महत्वपूर्ण अंग होते हैं। अतः शिक्षा का कार्य इन सबका संरक्षण करना है।

iii सभ्यता एवं संस्कृति का पोषण Maintenance of Civilization

शिक्षा का दूसरा कार्य समाज की सभ्यता एवं संस्कृति का पोषण करना है। शिक्षा के द्वारा व्यक्तियों को उस समाज की सभ्यता एवं संस्कृति का केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही नहीं प्रदान किया जाना चाहिए बल्कि व्यक्तियों को इस प्रकार तैयार करना चाहिए कि वे उसे अपने जीवन में उतारते हुए इसी अनुसार व्यवहार करें।

Iv बालकों की रचनात्मक शक्तियों का विकास Development of Constructive Power

शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य बालकों की रचनात्मक और सृजनात्मक शक्तियों का विकास करना है। जब तक शिक्षा बालकों की इन शक्तियों को पूर्ण नहीं करेगी, तब तक वे समाज के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान नहीं दे सकते हैं। इस प्रकार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसके द्वारा बालकों की रचनात्मक शक्तियों का विकास हो सके।

V पाठ्यक्रम में सुधार Improvement of Social Needs

शिक्षा का कर्तव्य अपने पाठ्यक्रम में सुधार करना है। यदि समाज का स्वरूप तथा दशायें बदलती हैं तब शिक्षा का स्वरूप बदलना भी आवश्यक हो जाता है। शिक्षा के स्वरूप में परिवर्तन लाने के लिए पाठयक्रम मे सुधार किया जाना चाहिए।

vi समाज की आवश्यकताओं को पूरा करना Complet the Need of Society

शिक्षा का महत्वपूर्ण कर्तव्य समाज की आष्वयकताओं को पूरा करना है। प्रत्येक समाज की आवश्यकतायें देश काल तथा परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होती रहती हैं। शिक्षा का कर्तव्य

है कि वह समाज की परिवर्तित आवश्यकताओं को पहचाने और व्यक्तियों को इस प्रकार से प्रशिक्षित करें कि समाज की नवीन आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

22.5.2 आधुनिकीकरण की प्रकृति

आधुनिकीकरण का अत्यन्त सरल व संक्षिप्त अर्थ है वह प्रयास करना या ऐसा प्रभाव डालना जिससे कि एक व्यक्ति, संस्था, समुदाय या समाज आधुनिक या नए समझे जाने वाले मूल्यों, विचारों, दृष्टिकोणों, संरचनाओं व संगठनों को अपनाने का प्रयास करें। सामान्यतया जब कभी आधुनिकीकरण की चर्चा की जाती है तो पश्चिमी प्रजातंत्रीय देशो, विशेषकर अमेरिका, इग्लैण्ड, फ्रांस आदि द्वारा प्राप्त की गई महान औद्योगिक प्रगति तथा भौतिक सुविधाओं की प्रचुरता के संदर्भ को ध्यान में रखा जाता है। उन देशो में आधुनिक जीवन में सफलतापूर्वक रहकर काम कर सकने के लिए एक व्यक्ति मे कई गुणों का होना आवश्यक माना जाता है। एक आधुनिक समाज में प्रायः वैज्ञानिक आधारों वाली प्रौ्द्योगिकी (टेक्नोलोजी) तथा जटिल नौकरशाही की व्यवस्था से संचालित होने वाले कई बड़े-बड़े द्वैतियक संगठन (Secondary Organization) देखने में आते हैं। एक आधुनिक संगठन या प्रतिष्ठान में रोजगार ढूंढने वाले तथा इस प्रकार आधुनिक समाज का भाग बनने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उसको किसी विशेष धंधे या कार्य में एक उच्च स्तर की शिक्षा या प्रशिक्षण प्राप्त हो। इसके साथ ही उसमें कई आवश्यक गुणों को व स्वयं में विकसित करे। जैसे-

- समय पर आना,
- कठोर परिश्रम करना,
- वैज्ञानिक ढंग से कार्य करना,
- स्वच्छता, ईमानदारी, निरन्तरता, दक्षता
- नई वस्तुओं परिस्थितियों तथा वैज्ञानिक प्रक्रियाओं को समझने का दृष्टिकोण रखना
- नियमों के प्रति आदर भाव रखना
- आज्ञाकारिता
- समझौता करने की कुशलता होना
- मधुर मानवीय सम्बंध रखना।

उसे विपरीत तथा नई परिस्थितियों में सही प्रकार से सामंजस्य करना आना चाहिए। उसे उपयुक्त मस्तिष्क वाला, तार्किक कर्म, विषयक अथवा निष्पक्ष दकियानूसीपन से मुक्त, समाजवादी

व धर्मनिरपेक्ष प्रजातंत्र में विश्वास रखने वाला होना चाहिए। उसे वैज्ञानिक, अनुभावन्वित, सार्वभौमिक, व्यक्तिवादी तथा मानवतावादी, दृष्टिकोण रखना चाहिए। उसे अपना व्यक्तित्व गतिमान बनाना चाहिए। इसके लिए उसे उच्च स्तरीय उपलब्धियां प्राप्त करने, क्रियात्मक कल्पनाएं करने तथा दूसरों की आकाक्षांओं को समझकर व्यवहार करना चाहिए।

22.5.3 सामाजिक परिवर्तन एवं आधुनिकीकरण Social Change and Moderaziation

आधुनिकीकरण की अवधारणा भी सामाजिक परिवर्तन से सम्बंधित है। भारत में सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा को समझने के लिए आधुनिकीकरण एक महत्वपूर्ण आधार है। आधुनिकीकरण परम्परा के ठीक विपरीत प्रवृति का द्योतक है अर्थात् परम्परा में पश्चमी परिवर्तन को महत्व नहीं दिया जाता, यथास्थिति पर बल दिया जाता है। जबकि आधुनीकरण मे परिवर्तन ही प्रमुख है। आधुनिकता शब्द कोई एक निष्चित विषय वस्तु नहीं है, अपितु विचारों व्यवहारों व क्रियाओं के लिए एक दृष्टिकोण है। समाजशाष्त्रीय आधुनिकीकरण के लक्षण के रूप में औद्यौगिकीकरण, नगरीकरण, आमदनी वृद्धि, शिक्षा स्तर में वृद्धि को स्वीकार करते हैं।

लर्नर Lernar के अनुसार ''आधुनिकीकरण ऐसी व्याकुल रचनात्मक चेतना या डिस्क्वाइटिंग पोजिटिविस्ट स्पिरिट है जो व्यापक जनसमूह, सार्वजनिक संस्थाएं और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं तक व्यापक है।'' उन्होंने आधुनिकीकरण के अन्तर्गत निम्नलिखित तत्वों को सम्मिलित किया है:-

1. अर्थव्यवस्था में आत्मनिर्भरता की मात्रा का समुचित विकास
2. विभिन्न प्रकार के साधनों व विकल्पों के चुनने में प्रजातांत्रिक प्रतिनिधित्व का होना
3. संस्कृति में धर्मनिरपेक्ष तथा तार्किक मापदण्डों का होना
4. सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि।

इन्कल्स के अनुसार आधुनिकता के अन्तर्गत व्यक्तित्व में निम्न विशेष ताऐं आती हैं:-

1. नये विचारों की स्वीकृति
2. नई पद्धति का प्रयोग
3. अपना मत देने के लिए तैयार रहना
4. समय बोध के प्रति जागरूक रहना
5. भूतकाल की अपेक्षा वर्तमान पर अधिक बल देना तथा भविषय में भी रूचि रखना

6. संसार के प्रति व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाना

7. विज्ञान एवं तकनीकी में आस्था

8. सामान्य न्याय प्राप्ति मे आस्था

आधुनिकीकरण ने सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को गति भी प्रदान की है। इससे जाति व्यवस्था छुआछूत, संयुक्त परिवार तथा अनेकानेक रूढ़ियां प्रभावित हुई हैं, मूल्य बदले हैं, अन्धविश्वास दूर हुआ है, तार्किकता बढ़ी है, सामाजिक सम्बंधों के प्रतिमान बदले हैं, धर्म निरपेक्षता की भावना का क्षेत्र विस्तृत हुआ है। प्रजान्त्रिक दैनिक व्यवहार में बढ़ रही है अतः आधुनिकीरण ने सामाजिक परिवर्तन को एक नवीन एवं निष्चित दिशा दी है। पश्चिमी जगत के विकासषील देशो में तो आधुनिकीकरण के माध्यम से समझी जा सकती है। परम्परागत समाजों में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को गति देने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका आंकी गई है। यही कारण है कि शिक्षा आयोग 1964-66 ने तो परम्परागत भारतीय समाज की शिक्षा के उद्देश्यो में आधुनिकीकरण को शामिल किया है।

22.5.4 आधुनिकीकरण की विशेष ताऐं Elements of Characteristics of Modernization

आधुनिकीकरण की निम्न विशेष ताऐ हैं-

i औद्यौगिकीकरण और नगरीकरण Industrialization and Urbanization -

औद्यौगिकीकरण और नगरीकरण आधुनिकीकरण के प्रारंभिक तत्व हैं। आधुनिक समाजों को औद्योगिक समाज भी कहा जाता है। उद्योगों की स्थापना नये उत्पादन केन्द्रों को जन्म देती है, जो नगरों के रूप में विकसित हो जाते हैं। वास्तव में नगरीकरण को ही लर्नर ने आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का प्रथम चरण बताया है। ग्रामों से नगरों की ओर जनसंख्या का संक्रमण होने से नवीन परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं। ये परिस्थतियां सहगामी जीवन को प्रोत्साहित करती हैं। शिक्षा वैज्ञानिक प्रगति, गतिशीलता , जनसंचार का विकास और राजनैतिक चेतना आदि आधुनिकीकरण के अन्य तत्व हैं जो नगरीकरण के पश्चात विकसित होते हैं। कुछ लोग औद्यौगिकरण और आधुनिकीकरण को समान मानते हैं।

ii साक्षरता Literacy - आधुनिकीकरण में शिक्षा एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। नगरों में औद्यौगिक विकास यह मांग करता है कि नगरवासी शिक्षित और तकनीकी दृष्टि से कुशल हों, उत्पादन के लिए कौशल प्रशिक्षण और शिक्षा की आवश्यक्ता होती है। शिक्षित मनुष्यों में नवीन आशय और आकाक्षाएं जन्म लेती हैं। आवागमन और संचार के साधनों का प्रयोग करने के लिए

भी प्राविधिक शिक्षा की जरूरत पड़ती है। लर्नर के शब्दों में साक्षरता मानसिक गतिशीलता में वृद्धि करती है।

iii गतिशीलता Mobility - आधुनिक समाज गतिशील समाज है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में गतिशीलता के भौतिक और सामाजिक-सांस्कृतिक दोनों स्वरूपों का विकास होता है। लोग भौतिक दृष्टि से ग्रामीण जगत को छोड़कर नगरों तथा औद्योगिक केन्द्रों की ओर जाने लगते हैं। इन स्थानों में व्यक्तिगत योग्यता और कौशल का महत्व होता है। अतः व्यक्तिगत गतिशीलता और निरन्तर परिवर्तन आधुनिक समाजों की प्रमुख विशेषताएं बन गयी हैं। आधुनिकीकरण समाज के लोगों के दृष्टिकोण और मानसिक प्रकृतियों में परिवर्तन कर देता है। लर्नर ने इस परिवर्तन को मानसिक गतिशीलता कहा है।

iv विवेकशीलता Reasoning- आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में मुनष्यों की विवेकशीलता में वृद्धि हो जाती है। विवेकीकरण का तात्पर्य सावधानी और सतर्कतापूर्वक विचार करके लक्ष्यों और प्राप्ति के साधनों का निष्चय करना है। परम्परा यदि भाग्य पर भरोसा करती है तो आधुनिकता विवेक पर आधारित है। मनुष्य की वृद्धि और कर्तव्य को महत्व देना और इसके आधार पर पर्यावरण का नियंत्रण करके जीवन को अधिक सुविधाजनक और प्रगतिवान बनाने की इच्छा रखना ही विवकेषीलता है।

v जन-सहभागिता Participant of the People- आधुनिकीकरण का अत्यन्त महत्वपूर्ण मापदण्ड जन-सहभागिता है। जन संचार के साधन आधुनिक मनुष्यों को सामाजिक जीवन की गतिविधियों में सहभागी बनने की प्रेरणा देते हैं। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में उन मानवीय प्रवृतियों का विकास हो जाता है, जो व्यक्ति को राजनैतिक जीवन में सहभागी बनाती है। वह राजैनतिक मामलों में सक्रिय भाग लेता है। जन संचार के साधन इस प्रकार की सहभागिता का विकास करने में सहायता प्राप्त करते हैं। लोग एक-दूसरे के निकट सम्पर्क में आते हैं। जीवन की सामान्य समस्याओं के विषय में विचारों का विनिमय होता है।

Vi विभेदीकरण तथा प्राविधिक कुशलता Differentiation &Technical Efficiency-

सामाजिक विभेदीकरण तथा मनुष्यों में प्राविधिक कुशलता और योग्यता का विकास आधुनिकीरण का दूसरा मुख्य स्रोत है। नई-नई व्यवसायिक प्रशासनिक और प्राविधिक भूमिकाओं का विकास हो जाता है और स्कूलों, विश्वविद्यालयों, चिकित्सालयों तथा नौकरशाही संस्थाओं का उदय होता है। इस प्रकार अपनी रूचि और योग्यता के अनुसार नवीनताओं का चुनाव करने की स्वतंत्रता से उत्पन्न संरचनात्मक विभेदीकरण और औद्यौगिक क्षमता आधुनिकीकरण की आवश्यक दशाएं हैं।

Vii मानवीय सम्बंधों की कुशलता Efficiency of Human Relation- लेवी ने यह स्पष्ट किया है कि आधुनिक समाजों में मानवीय सम्बंधों की अभिव्यक्ति, विवेकशीलता, सार्वभौमिक नैतिकता, प्रकार्यात्मक विशिष्ता और रागात्मक व्यवस्था के आधार पर होती है, कारण कि आधुनिकीकरण शक्ति के निर्जीव स्रोतों और यंत्रों के प्रयोग में वृद्धि करता है। इस कार्य के लिए आवश्यक है कि मनुष्यों में वैज्ञानिकता और विवेकशीलता का विकास हो, यंत्रों और निर्जीव स्रोतों का प्रयोग जटिल संगठनों की स्थापना में सहायक होता है। अतः सदस्यों की भर्ती या चुनाव प्रकार्यात्क कुशलता के आधार पर सार्वभौमिक नियमों के आधार पर किया जाता है।

viii अधिकारी तंत्र का विकास Development of Official Formation - अधिकारी तंत्र ऐसा संगठन होता है जिसका निर्माण कई छोटे संगठनों से होता है। इसमें कार्य करने वाले लोगों के पद और भूमिकाएं स्पष्ट रूप से निष्चित और परिभाषित होती हैं। अधिकारी तंत्र में सत्ता का श्रेणीबद्ध (ऊंचा-नीचा) विभाजन होता है जहां लोग अवैयक्तिक उदेश्य से कार्य करते हैं तथा कार्य के स्थान से सम्बंधित वस्तुओं और पैसे का कार्य वाले व्यक्ति के निजी पैसे और वस्तुओं से कोई सम्बंध नहीं होता। आधुनिकीकरण में जटिल संगठनों की स्थापना होती है। केन्द्रियकरण बढ़ता है और भावात्मक तटस्थता के सम्बंधों का विकास हो जाता है।

ix एकांकी परिवार Nuclear Family - आधुनिक समाजों में विस्तृत या संयुक्त परिवार के स्थान पर ऐसे परिवार का विकास हो जाता है जिनमें पति-पत्नी और उनकी सन्तान रहती है। इनके ऊपर पैतृक परिवार का प्रभाव नहीं रहता है। ये स्वतंत्र रूप से अपने पारिवारिक जीवन की व्यवस्था करते हैं। आधुनिक समाजों में परिवार के कार्य सीमित हो जाते हैं।

x आर्थिक विकास Economic Development: संचार व्यवस्था आधुनिकीकरण के विकास में प्रमुख सहायक कारक है। समाचार पत्र, रेडियो आदि संचार के अनेक साधनों के विकास से विचारों का आदान प्रदान होता है। आधुनिकीकरण में कार्य कुशलता, क्षमता तथा मानवीय शक्ति के उपयोग का विशेष महत्व है। आर्थिक उन्नति और जीवन स्तर का विकास आधुनिकीकरण के केन्द्रीय तत्व माने जाते हैं।

xi पश्चिमीकरण Westernization लर्नर के विचार से आधुनिकता पश्चिमी जगत की देन है। उसके अनुसार पश्चिमीकरण को ही एक प्रकार से आधुनिकीकरण कहा जा सकता है। आधुनिकीकरण के पश्चिमी स्वरूप को एक सार्वभौमिक स्वरूप माना जा सकता है। आधुनिकीकरण की समाजशास्त्रीय व्यवस्था इसी प्रारूप को आदर्श मानकर की जा सकती है। आधुनिकीकरण के विकास में सहायक औद्यौगिकरण, नगरीकरण, जनसंचार और सहभागिता आदि की प्रक्रियाएं पश्चिमी जगत में ही विकसित हुई हैं।

22.5.5 शिक्षा द्वारा आधुनिकीकरण Modernization through Education

शिक्षा द्वारा आधुनिकीकरण के लक्षण निम्न प्रकार दिखायी देते हैं

i परम्परा के विकल्प Alternative of Tradition - शिक्षा उन साधनों से परिचित कराती है जिनसे परम्परागत साधनों के विकल्पस्वरूप आधुनिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। यह मानसिक परिप्रेक्ष्य को व्यापक बनाती है, नये प्रयोग की ओर उन्मुख करती है।

ii समाजीकरण Socialization. समाजीकरण के साधन के रूप में शिक्षा नई प्रतिभाएं और मूल्य उत्पन्न करती है। इसे उन अभिवृत्तियों और व्यवहार प्रतिमानों को परिवर्तित करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है, जो आधुनिकीकरण के मार्ग में बाधायें उत्पन्न करती हैं।

iii शिक्षित श्रेष्ठ वर्ग Educated Elite -शिक्षा व्यक्तियों के श्रेष्ठ स्तर पर पहुंचने में मदद करती है। शिक्षित व्यक्ति जनता के समक्ष एक सन्दर्भ आदर्श; Reference Mode उपस्थित करता है, जो परम्परा से दूर ले जाते हैं। शिक्षित श्रेष्ठ वर्ग आधुनिक विद्यालयों तथा विश्व विद्यालयों की ही उपज होते हैं।

iv समस्या निदान नेतृत्व Problem Solving Leadership - शिक्षा व्यवस्था ही वैज्ञानिक, कारीगर, प्रबन्धक और प्रशासक उत्पन्न करती है। बड़े पैमाने पर आधुनिकीकरण के लिए विशेष प्रकार की शिक्षा की आवश्यक्ता होती है। उसी से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नेतृत्व प्राप्त किया जाता है।

v गतिशीलता विस्तारक Mobility Multiplier -शिक्षा विचारों के प्रत्येक क्षेत्र में गतिशीलता उत्पन्न करती है। इससे आधुनिकीकरण को प्रोत्साहन मिलता है।

vii. राष्ट्रीय चेतना National Consciousness - वैचारिक परिवर्तन के माध्यम से शिक्षा राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न करती है। वह व्यक्तियों को अपनी आवश्यकताओं और समस्याओं को राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में देखने को तैयार करती है। इसमें व्यापक राष्ट्रीय मुद्दों के विषय में राष्ट्रीय जनमत तैयार किया जा सकता है।

अपनी उन्नति जानिए Check your Progress

प्र. 1. क्या समय के अनुसार पाठयक्रम में परिवर्तन आवश्यक होता है?

(अ) नहीं (ब) हां (स) बहुत कम

प्र. 2. किस आयोग ने परम्परागत भारतीय समाज की शिक्षा के उद्देश्यो में आधुनिकीकरण को शामिल किया है?

(अ) कोठारी आयोग (ब) सैडलर आयोग (स) मुदालियर आयोग (द) कलकत्ता आयोग

प्र. 3. ‘आधुनिकता पश्चिमीकरणकी देन है।’ यह परिभाषा किस विद्वान की है?

प्र. 4. क्या संचार व्यवस्था द्वारा आधुनिकीकरण में सहयोग मिलता है?

(अ) नहीं (ब) हां (स) कभी-कभी (द) कभी नहीं

22.6 सारांश (Summary)

भारतीय समाज प्राचीन काल से ही एक श्रेष्ठ समाज रहा है। प्राचीन काल में यह समाज कबीलों मे बंटा हुआ था। कबीले के सदस्य को कबीले के मुखिया की बात को मानना आवश्यक था। उस समय शिक्षा का विकास नहीं हुआ था। कबिलाई अपने रीति रिवाजों के अनुसार अपनी जीवन की क्रियाओं का संचालित करते थे। लेकिन वर्ष 3000 ई. पूर्व के समय यहां पर आर्यो ने भारत में प्रवेश किया और यहां के भोले-भाले लोगों पर अधिकार कर उन्हें अपना दास बना लिया। इन्होंने शिक्षा का प्रसार कर अपने को भारतीयों से श्रेष्ठ बनाया। आज यह हिन्दू जाति के नाम से जानी जाती है।

शिक्षा ने समाज का रूप ही परिवर्तित कर दिया। शिक्षित व अशिक्षित व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक क्रियाकलापों में भारी अन्तर आ गया। शिक्षा ने व्यक्ति के लिए जहां आर्थिक सम्पन्नता पैदा की, वहीं शिक्षा से वंचित वर्ग गरीबी व असहाय की परत में डूबता चला गया। बिट्रिश शासन व बौद्ध शासनकाल में शिक्षा का विकास तेजी से हुआ आज स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान मे सभी के लिए शिक्षा प्रदान की है। इसी शिक्षा से लाभ उठाकर हम आधुनिकीकरण की ओर तेजी से बढ़े हैं। हमारे पास सभी सुविधाएं हैं। हम आज अपनी संस्कृति को भूलकर पश्चिमी संस्कृति को अपनाकर स्वयं को अन्य से श्रेष्ठ समझ रहे हैं। आधुनिकीकरण एक संस्कृति बनता जा रहा है।

22.7. शब्दावली (Glossary)

समाज- दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच अन्तक्रियायें होने पर ही हम उसे समाज कहते हैं।

सामाजिक व्यवस्थाः- समय व शिक्षा के अनुसार समाज के रीति रिवाजों में परिवर्तन होने को सामाजिक व्यवस्था कहा जाता है।

समाजीकरण- बालक जन्म के समय असहाय होता है। उसे अपने माता-पिता पर निर्भर रहना होता है। समय के अनुसार वह पड़ोस, साथियों, विद्यालय व अध्यापक के द्वारा सामाजिक रीति रिवाजों को अपनाकर एक सामाजिक प्राणी बनता है। जैविक से सामाजिक होना समाजीकरण कहलाता है।

आधुनिकीकरण- शिक्षा द्वारा आज तेजी से व्यक्ति के संस्कार रीति रिवाज, रहने का तरीका तेजी से बदल रहा है। इसके पीछे नगरीकरण, पष्चिमीकरण, कम्प्यूटर, आर्थिक सम्पन्नता के माध्यम से हम आधुनिकीकरण की ओर बढ़ रहे हैं।

22.8. अभ्यास प्रश्नो के उत्तर : –

भाग-एक

उत्तर (1) हां

(2) टी.पी.नन

(3) मैकाइवर एण्ड वेज

(4) अंतक्रिया होने पर

भाग-दो

उत्तर (1) अध्यापक

(2) अध्याक्षात्मक

(3) विद्यालय

(4) हां

भाग-तीन

उत्तर (1) हां (2) कोठारी आयोग (3) लर्नर (4) हां

22.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

शर्मा, रा. ना. व शर्मा रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटंलाटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स. पृष्ठ. 280-289.

मिश्र, (डां) के.के. (1989). *आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन*. मेरठ: मीनाक्षी प्रकाशन.

कुमार, (प्रो.) आ. *सामाजिक मानवशास्त्र*. आगरा: विमल प्रकाशन मंदिर.

एलैक्स. (डां). शी. मे. *शिक्षा के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन. पृष्ठ 51-62.

22.10 सहायक/उपयोगी पाठ्यक्रम

1. मित्तल, एम.एल. (2008) *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इन्टरनेशनल पब्लिशिग हाउस.

2. सक्सेना, (डां) स. *शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार*, आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. शर्मा, रा. ना. व शर्मा रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशाश्त्र,* नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीव्यूटर्श.

4. मिश्र, (डां) के.के. *आधुनिक भारत के सामाजिक परिवर्तन*, मेरठ: मीनाक्षी प्रकाशन.

22.11 निबंधात्मक प्रश्न

प्र. 1 शिक्षा का अर्थ लिखिए। शिक्षा समाज को किस प्रकार प्रभावित करती है। विस्तृत वर्णन किजिए।

प्र. 2 समाज का शिक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ता है विस्तार से वर्णन किजिए।

प. 3 आधुनिकीकरण की प्रमुख विशेष ताओ को लिखिए।

प्र. 4 आधुनिकीकरण का अर्थ लिखते हुए बतायें कि क्या हम आधुनिकीकरण की बजाये पश्चिमीकरणकी ओर तेजी से बढ़ रहे हैं ? विस्तृत वर्णन करें।

इकाई-23: सामाजिक परिवर्तन के मुख्य प्रभावकारी कारक (Major Factor affecting the Process of Social Change)

23.1 प्रस्तावना Introduction
23.2 उद्देश्य Objectives
भाग एक-
23.3 सामाजिक परिवर्तन के मुख्य प्रभावकारी कारक Major Factor affecting the Process of Social Change
    2 3.3.1 भौतिक या प्राकृतिक कारक Physical and Natural Factor
    23.3.2 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ Meaning of Social Change
        अपनी उन्नति जानिए Check Your Progress
भाग दो-
23.4 सामाजिक व्यवस्था के अंग Part of Social System
    23.4.1 सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएं Characteristics of Social change
        अपनी उन्नति जानिए Check your Progress
भाग तीन-
23.5 संस्कृति का अर्थ Meaning of Cultural
    23.5.1 संस्कृति की परिभाषा Definition of Culture
    23.5.2 भारतीय संस्कृति की विशेषताएं Characteristics
    23.5.3 शिक्षा और संस्कृति परिवर्तन Education and Culture Change
    23.5.4 शिक्षा पर संस्कृति का प्रभाव Influence of Culture on Education
    23.5.5 शिक्षा का संस्कृति पर प्रभाव Influence of Education on Culture
        अपनी उन्नति जानिए Check your Progress
23.6 सारांश Summary
23.7 शब्दावली Glossary
23.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर Answer of Practice Question
23.9 संदर्भ Reference

23.10 उपयोगी/सहायक पुस्तके Useful Books

23.11 दीर्घ उत्तर वाले प्रश्न Long answer Types Question

23.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव स्वाभाव से ही एक गतिशील प्राणि है। अत: मानव समाज कभी भी स्थिर नहीं रह्ता। उसमे सदा परिवर्तन हुआ करता है। डासन और गेटिस ने ठीक ही लिखा है " क्रिया और परिवर्तन सदैव उपस्थित सार्वभौम तथ्य है। एक से जीवन से मानव उब जाता है। घनिष्ट से घनिष्ट प्रेममय सम्बन्धो मे भी कुछ न कुछ परिवर्तन की इच्छा मानव स्वभाव में होती हैं। प्रसिद्ध मनोविश्ळेशणवादी फ्राइड के अनुसार मनुष्य मे परस्पर विरोधी भाव मौजूद रह्ते है। जहॉ प्रेम है वहॉ घृणा भी है। किसी भी देश का इतिहास कभी एक सा नही रहा , राज्य बनते विगड्ते रहते है। नई विचार धाराऍ अपनायी जाती है पुरानी रुढिया और परम्पराए टूटती रहती है। परिवार, विवाह, जाति, सभी सन्सथाओं मे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धर्म और राज्य, शिक्षा के आर्दशो, स्त्री पुरुष के सम्बन्धों मे जीवन के सभी पक्षो मे यह परिवर्तन देखा जा सकता है। परिवर्तन की यह प्रक्रिया सार्वर्भोम है।

23.2 उद्देश्य (Objective)

I सामाजिक पारिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारको को जान सकेगे।

II. सामाजिक व्यावस्था के अर्थ तथा संरचना को जान सकेगे।

III. सामाजिक परिवर्तन का ज्ञान करा सकेगे।

IV. भारतीय संस्कृति की विशेषताओ का ज्ञान प्रदान करा सकेगे।

V. शिक्षा व संस्कृति का एक दूसरे पर प्रभाव जान सकेगे।

VI. आधुनिकीकरण के बारे मे जान सकेगे।

भाग – एक

23.3 सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारक –

भारतीय समाज को प्रभावित करने बाले दो कारक है।

I वाहय कारक - वाहय कारक पर मनुष्य का नियणत्रण पूरी तरह से नही हो सका है केवल आंशिक संसोधन इसमे सम्भव हो पाता है। जैसे प्राकृतिक अथवा जैविक कारक।

II आंतरिक कारक - आंतरिक कारक यधपि मानव नियणत्रण मे है फिर भी उनका वाध्यता मूलक प्रभाव सामाजिक सम्बन्धोंपर पड़ता है जैसे औधोगिकीय एवं सांस्कृतिक कारक।

23.3.1 सामाजिक परिवर्तनों के प्रमुख कारको की विशेषतायें –

1 **भौतिक या प्राकृतिक कारक** – जैसे जैसे सभ्यता का विकास होता जा रहा है वैसे-वैसे भौतिक तथा प्राकृतिक कारको पर मानव नियणत्रण की आशा बढ़ती जा रही है। आज मनुष्य ने नदियो पर पुलो का निर्माण, पहाडो के बीच रस्ता बनाना, पथरीली तथा रेगिस्तानी जगहो को कृषि योग्य बनाना, जंगलो को काटकर उसे कृषि योग्य बनाना आदि। फिर भी प्राकृतिक कारको का वाध्यातामूलक प्रभाव मानव जीवन और उसके अन्त:सम्बन्धों पर पडता चला आ रहा है। जैसे जलवायु मौसम परिवर्तन, बाढ, भूकम्प आदि जिसका मानव सम्बंधो पर प्रभाव पडता है , ऋतुओ के बदलने का प्रभाव हमारे सामाजिक सम्बंधो पर पडता है। गर्मियो मे शारीरीक अपराध, हत्या, लूटपाट, बलात्कार आदि की दर बढ जाती है। शरद काल (जाडो) मे आर्थिक अपराध अधिक होते है। उसी प्रकार जिस स्थान का तापक्रम अधिक घटता-बढता नही वहॅा लोगो की कार्यक्षमता अधिक होती है। बाढ तथा भूकम्प आ जाने से सामाजिक समबंध छिन्न भिन्न हो जाती है। जिसके कारण समाज मे परिवर्तन हो जाता है।

२. **जैविक कारण** (जन्सख्या मे परिवर्तन) – भारतीय समाज को प्रभावित करने का श्रेय जनसख्या मे परिवर्तन भी है। सामाजिक सम्बंध मनुष्यो पर आश्रित है अत: उनकी सख्या मे वृद्धि अथवा कमी के कारणो को सामाजिक परिवर्तन से सम्बोधित करते है। यदि किसी समाज की जनसख्यां एका-एक बढ जाती है। तो उसके परिणामस्वरुप विभिन्न सामाजिक समस्यायो जैसे भोजन, रहन-सहन, देवदारु, मकान कपडे की समस्यायों के द्वारा सामाजिक सम्बन्धो पर गहरा प्रभाव पडता है। जन्सख्या की अधिकता के कारण यहॅा लोगो उचित मात्रा मे पोष्टिक आहार नही मिल रहा है। जिसके कारण लोगो की कार्यक्षमता कम हो रही है। प्रति व्यक्ति आय नही बढ रही है अत: समाज पिछडा हुआ राष्ट्र कहलाता है। जिस समाज मे स्त्रियो की संख्या अधिक हो जाती है तब वहौ पर वहुपत्नि विवाह को प्रोत्साहन मिलेगा जिससे सामाजिक परिवर्तन होगा। व पहले एक दम्पत्ति के आठ या दस बच्चे आवश्यक माने जाते थे लेकिन आज एक या दो बच्चे ही उचित माने जाते है।

३. **प्रौधिगिकीय कारक** – भारतीय समाज पर भी प्रौधोगिकीय अविष्कारो का प्रवाभ पडता है आज बडी-बडी मशीनो का प्रयोग समाज मे होने लगा है उसी रुप मे सामाजिक सम्बंध मे भी परिवर्तित हो रहै है आज व्यक्ति अपना सम्बन्ध भी उधोगो मे कार्य करने वाले लोगो को अपना वर्ग मानकर उन्ही से ही अपना सम्बन्ध रखने लगा। आज मशीनी युग है मशीनो के प्रयोग के कारण आज कृषि के क्षेत्र मे क्रांतीकारी परिवर्तन हुए है बिजली द्वारा सिचाई ने प्रकृति पर निर्भरता को कम किया है। यातायात के साधनो ने जहॅा दूरी को कम किया है वही पर जाति भेद-भाव को कम किया है। मोबाईल के बिना व्यक्ति का जीवन अधूरा सा रहता है। आज प्रौधोगिकी के कारण रीति-

रिवाजो, सामाजिक मूल्यो ,आर्थिक, धार्मिक मे परिवर्तन चारो ओर देखा जा रहा है।

4. **सांस्कृतिक कारक**—संस्कृति का सम्बन्ध जीवन की सम्पुर्ण गतिविधि से होता है संस्कृति के अंतरगत हम भाषा, साहित्य, धर्म , सुख सुविधा की वस्तुए, यहॉ तक कि वे सभी चीजे जो मानव समाज से सम्बन्ध रखते है यदि इन तत्वॉ मे परिवर्तन हुआ तो सामाजिक सम्बन्धों मे परिवर्तन अनिवार्य हो जाता है। सामाजिक मूल्य जो व्यक्तियों के व्यवहारो को निर्देशित करते है। यदि ये परिवर्तित है तो उससे भी सामाजिक परिवर्तन होता है। भारतवर्ष मे मूल्यों का सर्घष आधुनिक सामाजिक परिवर्तन का मूल कारण कहा जाता है। फैशन के क्षेत्र मे आये दिन परिवर्तन हम देख रहै है आधुनिक भारतीय स्त्रिया जीन्स पेंट टोपस पहन रही है। जबकि बडी-बूढी स्त्रिया अब भी पुरने ढंग से ही साडी पहन रही है। अब आधुनिक व्राहमण मांस मदिरा, धूम्रपान का प्रयोग वेधडक कर रहा है जबकि उसके पिता और पितामह उसका विरोध करते आये है। पहले सवर्ण स्त्रिया मांस नही खाती थी अब मांस खाने कि बात तो दूर रही वे खुली सडक पर सिगरेट भी पीती है, तथा रेस्टोरेंट व क्लबो मे शराव का प्रयोग भी करती है। इस प्रकार संस्कृति के पहलू मे परिवर्तन के कारण ही सामाजिक परिवर्तन हो रहा है।

यौन सम्बन्ध पहले विवाह के बाद ही स्थापित हो पाता था अब तो गर्भपात को वैधानिक संरक्षण प्राप्त हो गया है। पहले विवाह को एक धार्मिक कृत्य माना जाता था स्त्री का दान (कन्यादान) होता है और दान मे दी गयी चीज फिर दुसरे को नही दी जाती है। इस आधार पर समाज मे सामाजिक परिवर्तन देखा जा रहा है।

5. **औद्योगीकरण Industrialization -** औद्योगिकरण से तात्पर्य औद्योगिक क्रांति से है जिसके परिणाम स्वरूप किसी समाज में बड़े उद्योग धंधों का विकास होता है। भारत वर्ष में प्रोद्योगिक कारक सदियों से सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करता रहा है। फिर भी उसे हम औद्योगिकरण नहीं कहेंगे। भारत वर्ष में औद्यौगिकरण का श्रीगणेश 1956 ई. में माना जाता है। बड़े-बड़े उद्योगों के विकास के कारण जहां एक ओर आर्थिक विकास में सहायता मिल रही है वहीं पर दूसरी ओर विभिन्न सामाजिक समस्याएं जैसे- बेकारी, गंदगी, शारीरिक अपराध, चोरी आदि के कारण सामाजिक सम्बंध परिवर्तित हो रहै हैं। लोग अपने गांवों को छोड़कर उन स्थानों को जाने लगे हैं जहां उद्योग स्थापित किये जा रहै हैं। औद्यौगिकरण ने भारतीय समाज को अब स्थिर समाज से गतिशील समाज में परिवर्तन कर दिया है। औद्यौगिकरण ने अब स्त्रियों को भी आर्थिक उत्पादन कार्य के योग्य बनाया है। औद्यौगिकरण ने पेशा वर्ग को जन्म दिया है। किसी एक पेशे या किसी एक मशीन पर काम करने वाले लोगों में वही भावना आ जाती है जो किसी वर्ग या जाति के सदस्यों के बीच पायी जाती है। इस पेशे वर्ग के लोग भले ही किसी जाति के हैं। बड़े उद्योग लगने के कारण अब मजदूर वर्ग बेकार हो रहै हैं। अतः इन सब कारणों से सामाजिक परिवर्तन हो रहा है।

6. पश्चिमीकरण Westernization - भारतीय समाज के ऊपर पश्चिमी समाजों का व्यापक प्रभाव पड़ा है। जिसके कारण यहां के मूलभूत सामाजिक संस्थाएं प्रभावित हो रही हैं। सन् 1600 में अंग्रेज भारतीय समाज के सम्पर्क में आये तभी से उन्होंने यहां के निवासियों को अपने चाल-ढाल,पोशाक,बोली,रहन-सहन से प्रभावित करना शुरू कर दिया था। इसका सबसे अधिक प्रभाव यहां के उच्च लोगों पर पड़ा। उनका रहन-सहन, पोशाक, बोलचाल भी अंग्रेजों की भांति होने लगा। पश्चिमीकरण ने जातिगत दूरी तथा भेद-भाव को कम करने में मदद दी है। वहीं पश्चिमीकरण ने मानवतावाद,समानता तथा धर्म निरपेक्षता की भावना को बढ़ाने में मदद दी है। प्रेस आवागमन के साधनों के द्वारा सामाजिक दूरी को कम करने का प्रयास मिल गया। पश्चिमीकरण के कारण मूल्यों में परिवर्तन हो रहै हैं। मूल्यों में परिवर्तन भी सामाजिक परिवर्तन का कारण है। पश्चिमीकरण का प्रभाव निम्न जातियों पर भी पड़ा है। जिसके कारण वो अपनी स्थिति में सुधार के लिए जागरूक रहै हैं। आज सभी जाति के लोग अपने अर्जित गुणों के ढंग को परिवर्तित कर रहै हैं। संयुक्त परिवार से एंकांकी परिवार की ओर झुकने की प्रवृति भी पश्चिमीकरण का ही परिणाम है।

7. जनतंत्रीकरण Democratization - भारत मे तीव्र सामाजिक परिवर्तन का एक कारण जनतंत्रीकरण का विकास है। यहां प्रजातांत्रिक सरकार की स्थापना के बाद समाज को बदलने का कार्यक्रम भी इसी माध्यम से पूरा किया जा रहा है। प्रजातांत्रिक नियोजन जिसे हम पंचवर्षीय नियोजन भी कहते हैं के द्वारा भारतीय सामाजिक संगठन में मूलभूत परिर्तन हुआ है। जनतंत्रीकरण अच्छे व्यक्तित्व में विकास के लिए कृत संकल्प है। यही कारण है कि आज धर्म, जाति, धन, लिंग आदि भेदों के आधार पर सामाजिक व्यवहार में कोई अंतर है। समाज में पिछड़े लोगों विशेषकर अस्पृष्यों की समस्या का समाधान बहुत अंशों में इस प्रक्रिया द्वारा सम्भव हो सका है। प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अभिव्यक्ति, विवाह, शिक्षा तथा किसी उचित कार्य को करने की स्वतंत्रता है। जिसकी स्पष्ट झलक सामाजिक परिवर्तन है। सरकार के बदलने से राष्ट्रीय नीति बदलती है जो सामाजिक सम्बंधों को भी प्रभावित करती है। शक्ति के विकेन्द्रिकरण का जो कार्य जनतंत्रीकरण के माध्यम से शुरू हुआ है उसके द्वारा ग्राम स्तर की समस्याओं के समाधान के लिए केन्द्र सरकार द्वारा कार्यक्रम बन रहै हैं। अब शैक्षिक संस्थाओं को भी जनतंत्रीकरण का अखाड़ा बनाया जा रहा है।

8. नगरीकरण Urbanization - भारत में सामाजिकरण का एक अन्य कारण ग्रामीण समुदाय पर नगरीकरण का प्रभाव है। यातायात एवं आवागमन की सुविधा के कारण अब गांव का व्यक्ति रोज छोटे-मोटे कार्यों के लिए भी नगर में आता है और वह यहां की चमक-दमक से इतना प्रभावित होता है कि वह अपने ग्रामीण जीवन में भी उन्हीं के अनुरूप व्यवहार शुरू कर देता है और कभी-कभी तो वह अपना गांव छोड़कर शहर में बस जाता है। नगरों में लोगों के बीच द्वैतीयक सम्बंध व्यक्तिवाद को बढ़ावा दे रहै है। जिसके कारण परम्परागत सामाजिक संस्थाएं जैसे परिवार तथा विवाह परिवर्तित हो रहै है जो सामाजिक परिवर्तन का मूल कारण है।

23.3.2 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ Meaning of Social Change

मानव का जीवन एवं उसकी परिस्थितियां सदैव एक सी नहीं रहती है। अपितु इसके विचार, आर्दश मूल्य एवं भावना में किसी प्रकार का परिवर्तन अवश्य होता है। जब मानव अपने को परिवर्तित करता है तो वह समाज की एक ईकाई होने के कारण समाज में भी परिवर्तन कर देता है। यद्यपि किसी समाज में परिवर्तन तीव्रता से होता है तो किसी में मंद गति से होता है।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। आज वैज्ञानिक अवष्किारों , नई-नई मशीनों के उपयोग यातायात और दूर संचार के साधनों के कारण प्राचीन एवं मध्यकालीन समाज की अपेक्षा आधुनिक समाज में प्रतिदिन क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। इन परिवर्तनों को ही सामाजिक परिवर्तन की संज्ञा दी जा रही है। आजकल सम्पूर्ण विश्व में सामाजिक परिवर्तन तीव्र गति से हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा नगरीय क्षेत्रों में अविकसित समाज की अपेक्षा विकसित समाज में दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा उत्तरी गोलार्द्ध में सामाजिक परिवर्तन अधिक विविधता एवं तीव्रता से हो रहे हैं।

यद्यपि समाज में होने वाला प्रत्येक प्रकार का परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन की श्रेणी में नहीं आता है। आधुनिक समाजशास्त्रियों की भाषा में समाज शब्द के स्थान पर सामाजिक व्यवस्था Social System पद का प्रयोग अधिक प्रचलित है। तथा सामाजिक व्यवस्था में तीन भाग या अंग गिनाए गए हैं।

अपनी उन्नति जानिए Check Your Progress

प्र.1 समाज में परिवर्तन के दो प्रमुख कारक बताइये।

प्र.2 सामाजिक परिवर्तन के दो प्रमुख कारण बताइये।

प्र.3 एन.एस.एस. राष्ट्रीय समाज सेवा कार्यक्रम किससे सम्बंधित नहीं है।

(अ) प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम (ब) स्वास्थ्य कार्यक्रम (स) बाढ़
(द) खेल

प्र.4 सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः या वसुधैव कुटुम्बकम की विशेषता विश्व में किस देश की है।

(अ) अमरिका (ब) रूस (स) श्रीलंका
(द) भारत

प्र.5 धर्म निरपेक्ष शब्द किस वर्ष में जोड़ा गया है।

भाग दो-

23.4 सामाजिक व्यवस्था के अंग (Parts of Social System)

1. सामाजिक संरचना Social Structure
2. संस्कृति Culture
3. व्यक्तित्व Personality

सामाजिक संरचना- भारतीय सामाजिक संरचना जाति, धर्म, वर्ग, समुदाय आदि महत्वपूर्ण सामाजिक संस्थाओं से मिलकर बनी है।

2. संस्कृति- संस्कृति वास्तव में मूल्यों की एक व्यवस्था हैं यहां मूल्य का अर्थ पसंद या मान्यता है। यह हमारे जीवन का ढंग है।

3. व्यक्तित्व- समाज के व्यक्तियों के व्यक्तित्व के उनकी मनोवैज्ञानिक विशेषताओं, प्रवृतियों, आकांक्षाओं सुझावों आदि अनेक जटिल,मनोवैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक कारकों से निर्मित है। जब व्यक्तित्व में परिवर्तन आये तो व्यक्तित्व परिवर्तन होता है

23.4.1 सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएं-

डब्ल्यू. मूर व समाजशास्त्री के अनुसार सामाजिक परिवर्तन की निम्नलिखित विशेषताएं हैं-

1. प्रत्येक सामाजिक परिवर्तन में गंभीरता, दीर्घकालीनता एवं स्थायित्व की प्रवृति होती है।

2. प्रत्येक सामाजिक परिवर्तन के तीन तत्व होते हैं-

    i. वस्तु

    ii . भिन्नता

    iii . समय

3. सामाजिक परिवर्तन जटिल होते हैं।

4. सामाजिक परिवर्तन अचानक नहीं होते न ही उनकी भविषय वाणी ही की जा सकती है।

5. सामाजिक परिवर्तन से व्यक्ति न केवल व्यक्ति का जीवन ही प्रभावित होता है बल्कि सम्पूर्ण सामाजिक संरचना और व्यवस्था की कार्य पद्धति में भी परिवर्तन आता है।

6. आधुनिक समाजों में परिवर्तन तीव्र गति से तथा समाजों में सामाजिक परिवर्तन धीरे-धीरे होता है।

7. सामाजिक परिवर्तन समाज के भीतर से भी और बाहर से भी संभव है।

8. सामाजिक परिवर्तन व्यक्तिगत अनुभव और समाज के विभिन्न पक्षों को विस्तृत रूप से प्रभावित करते हैं।

9. सामाजिक परिवर्तन प्रायः सांस्कृतिक विलम्बना प्रस्तुत करते हैं।

10. सामाजिक परिवर्तन के प्रारम्भ में लोगों द्वारा विरोध किया गया और बाद में वे समाजोउपयोगी सिद्ध हुए हैं।

अपनी उन्नति जानिए Check Your Progress

प्र.1- सामाजिक व्यवस्था के तीन अंगों के नाम लिखिए।

प्र.2- सामाजिक परिवर्तन की भविषय वाणी की जा सकती है।

(अ) हां (ब) नहीं (स) अनिश्चित

प्र.3- सामाजिक परिवर्तन में निम्नलिखित में किसकी भूमिका महत्वपूर्ण है।

(अ) शिक्षा (ब) धर्म (स) ईश्वर (द) इनमें से कोई नहीं

प्र.4 समाज सामाजिक सम्बंधों का जाल है। यह किसका कथन है।

(अ) मैकाइवर (ब) एम. निवासन (स) दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

भाग तीन-

23.5 संस्कृति का अर्थ (Meaning of Culture)

संस्कृति शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द से हुई है। संस्कृत का अर्थ है ‘परिष्कृत Refined। इस प्रकार संस्कृति का सम्बंध किसी भी ऐसे तत्व से है जो व्यक्ति का परिष्कार कर सके। एक दूसरी व्याख्या के अनुसार- संस्कृति शब्द संस्कार से बना है। संस्कार का अर्थ है शुद्धि की क्रिया। शुद्धि का अभिप्राय पवित्रता से न होकर सामाजिकता से है। इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्ति को एक

सामाजिक प्राणी बनाने में जितने भी तत्वों का योगदान होता है, उन सभी तत्वों की व्यवस्था को संस्कृति कहते हैं। संस्कृति ही एक जैवकीय प्राणी को सामाजिक प्राणी के रूप में परिवर्तित करती है।

हिन्दू समाज में जन्म से ही व्यक्ति को अनेक प्रकार के संस्कारों के द्वारा समाज में विभिन्न कार्य करने योग्य बनाया जाता है। उदाहरण के लिए विवाह संस्कार से उस पर संतानोत्पत्ति के कार्य का उत्तरदायित्व आ जाता है। संस्कृतिक में वह सब सम्मिलित है जिसके लिए संस्कारों की आवश्यकता पड़ती है।

23.5.1 संस्कृति की परिभाषाएं Definition of Culture

मैकाइवर और पेज के अनुसार- ''संस्कृति हमारे रहने, विचार करने, प्रतिदिन के कार्यों, कला, साहित्य , धर्म, मनोरंजन और आनन्द में संस्कृति हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है।''

टेलर के अनुसार- ''संस्कृति वह जटिल सम्मपूर्णता है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, कानून, प्रथा तथा इसी प्रकार की ऐसी क्षमताओं और आदतों का समावेश रहता है जिन्हें मनुष्य समाज का सदस्य होने के नाते प्राप्त करता है। ''

व्हाइट के अनुसार- ''संस्कृति एक प्रतीकात्मक, निरन्तर संचयी और प्रगतिशील प्रक्रिया है।''

टाइलर के अनुसार- ''संस्कृति एक जटिल सम्पूर्ण है, जिसमें ज्ञान, विश्वास, कलाएं, नीति, विधि, रीति-रिवाज और समाज के सदस्य होकर मनुष्य द्वारा अर्जित अन्य योग्यताएं और आदतें शामिल है।''

लुण्डवर्ग के अनुसार- ''संस्कृति सामाजिक रूप से प्राप्त और आगामी पीढ़ियों को संचारित कर दिये जाने वाले निर्णयों, विश्वासों, आचरणों तथा व्यवहार के परम्परागत प्रतिमानों से उत्पन्न होने वाले प्रतिकात्मक और भौतिक तत्वों को सम्मिलित करते हैं।''

23.5.2 भारतीय संस्कृति की विशेषताएं Characteristics of IndiaCulture

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। भारतीय मनिषियों ने जिन आधार-स्तम्भों पर हिन्दू समाज की रचना की वे गहन चिन्तन, विस्तृत अनुभव तथा परीक्षित प्रयोग के परिणाम है। भारतीय संस्कृति के इन मूलभूत सांस्कृतिक एवं धार्मिक आधारों का संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है।

i धर्म Religion- भारतीय संस्कृति में धर्म का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। मनुष्य के व्यक्तित्व एवं आचरण को व्यवस्थित एवं शुद्ध बनाने वाली संस्था ही धर्म है। धर्म से ही सम्पूर्ण जाति की प्रतिष्ठा है। धर्म ही पूजा के पालन की प्रेरणा देता है। धर्म ही पाप से बचाने वाले सर्वोत्कृष्ठ साधन है। मनुष्य-मनुष्य के बीच, मनुष्य तथा समूह के बीच और विभिन्न समूहों के बीच शांति और सहयोग,प्रेम और साहचार्य का प्रमुख स्रोत धर्म है।

ii पुरूषार्थः- भारतीय संस्कृति में चार पुरूषार्थों का भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य के सामने चार प्रमुख लक्ष्य रखे गये हैं। जिनकी प्राप्ती उनके जीवन की सम्पूर्ण क्रियाओं को निर्देशित करती है। इसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चार पुरूषार्थ बताये गये हैं।

(अ) धर्मः- इन पुरूषार्थो में धर्म सबसे पहले आता है। धर्मानुकूल आचरण करना मानव जीवन को उच्च बनाने के लिए प्रथम आवश्यकता के रूप में माना गया है। धर्म वह क्रिया है जो लोक में यश और परलोक में मोक्ष प्रदान करता है।

(ब) अर्थः- भौतिक आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए अर्थ की प्राप्ति जरूरी है अतः धर्म के पश्चात दूसरा पुरूषार्थ अर्थ है जिसका तात्पर्य धर्मानुकूल साधनों से धन कमाना तथा संभावित जीवन बिताते हुए धर्म के कार्यों में उस धन का उपयोग करना है।

(स) कामः- शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक जीवन को संतुलित तथा व्यवस्थित करने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य की मौलिक आवश्यकताएं सहज ही स्वाभाविक रूप से संतुष्ट होती रहै । काम भी मनुष्य की सहज प्रवृति है। काम केवल यौन तृप्ति न होकर संतोनोत्पादन के लिए तथा सामाजिक जीवन के अन्य सभी पक्षों का उत्तरदायित्व निभाने के लिए विवाह करना गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना है।

(द) मोक्षः- वास्तव में मोक्ष को मानव जीवन का चरम लक्ष्य माना गया है और उसकी प्राप्ति के प्रमुख साधनों के रूप में प्रथम तीन पुरूषार्थों का विधान किया गया है। पहले तीन पुरूषार्थ धर्म, अर्थ, और काम त्रिवर्ग कहलाते हैं। जिनकी प्राप्ती के पश्चात मोक्ष की ओर सहज और स्वाभाविक रीति से मनुष्य बढ़ जाता है।,

iii ऋणः- हिन्दू शास्त्रों के अनुसार सामान्य रूप से तीन ऋण माने जाते हैं| पितृश्रण, देव ऋण, ऋषि ऋण । शतपथ ब्राहमण में एक चौथे ऋण 'मनुष्य ऋण' का भी उल्लेख आता है। इन ऋणों को चुकाने के लिए प्रत्येक हिन्दु विभिन्न प्रकार के धर्मानुकूल प्रयत्न करता है। इन ऋणों को चुकाने के उपरांत ही वह मोक्ष का अधिकारी होता है।

(अ) देव ऋणः- देव ऋण चुकाने के लिए मनुष्य यज्ञादि के द्वारा उन सभी देवी देवताओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता है जिनकी कृपा से उसे प्रकृति की ओर से भिन्न-भिन्न जीवन दायक वस्तुएं और शक्तियां प्राप्त होती है। वे विद्वान जो जन-सेवा का व्रत लेकर अपने सदुपदेशों के द्वारा जन-जीवन को जाग्रत और पवित्र करते हैं, पूजा सत्कार के योग्य हैं। उनके प्रति भी मनुष्य कृतज्ञता प्रकट करता है।

(ब) ऋषि ऋणः- ऋषि ऋण उन विचारकों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना है जिन्होंने प्राचीन काल से ही वेदादि ग्रन्थों के माध्यम से मानव जीवन को सुखमय और पवित्र बनाने के सदुपयोग हमारे सामने रखे हैं। 25 वर्ष तक ब्रह्मचर्य आश्रम में सदविद्या ग्रहण करके ऋषि का भार चुकाया जाता है।

(स) पितृ ऋणः- माता-पिता द्वारा अपनी सन्तान का पालन पोषण उचित प्रकार से किया जाता है। वे कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए अपनी संतान के सुखमय के लिए प्रयासरत रहते हैं। अतः जीवन में माता-पिता का ऋण चुकाने का एक मात्र तरीका गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करके अपने जैसी संतान को जन्म देना। उसके बाद समाज की निरन्तरता बनाये रखने के लिए कम से कम एक संतान छोड़ जाना और कष्ट सहकर उसे हर प्रकार के योग्य बनाकर छोड़ जाना ही पितृ ऋण का उऋण है।

iv कर्म तथा पुनर्जन्मः- कर्म एक प्रक्रिया के रूप में चलता है अर्थात एक बार किया हुआ कर्म बंद नहीं होता। दूसरे शब्दों में कर्म का फल अवश्य होता है। यदि वर्तमान जन्म में कर्मो के फल पूर्ण नहीं होते तो उन्हें भोगने के लिए पुनः जन्म लेना पड़ता है। कर्म निष्फल नहीं जाता है। मनुष्यों में शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, आध्यात्मिक एवं राजनैतिक आदि विषमताओं का मूल कारण उनके द्वारा किये गये कर्मों की विभिन्नता है। मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है किन्तु फल भोगने के लिए उसे बार-बार शरीर धारण करना पड़ता है। अर्थात पुनर्जन्म की धारणा कर्म पर अधारित है।

अ. आश्रमः- आश्रम व्यवस्था हिन्दू सामाजिक संगठन का वह महत्वपूर्ण मौलिक तत्व है जो प्रत्येक मनुष्य के जीवन को सामाजिक कार्यों को पूर्ण करने की दृष्टि से चारों भागों में बांटकर व्यक्तित्व के क्रमिक विकास की प्रक्रिया के रूप में संभाला जा सकता है।

ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रत्येक मनुष्य को 25 वर्ष तक पूर्ण ब्रह्मचारी रहकर गुरूगृह में जाकर वेदादि, सत्यज्ञान का अर्जन करके शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्वस्थ बनाना |

गृहस्थ आश्रम में 25 वर्ष तक धन कमाकर समाज के हित में व्यय करना, संतानोत्पादन करना, पंच महायज्ञों को पूर्ण करते हुए भोग से सयंम और विरक्ति की ओर अग्रसर होना गृहस्थ आश्रम का सफल पालन है।

वानप्रस्थ आश्रम जीवन का विकास करना है सांसारिक कर्तव्यों को पूर्ण करके जन व्यक्ति वृद्धावस्था की ओर जाने लगे, शरीर की त्वचा ढीली पड़ जाये, पुत्र का पुत्र हो जाये, स्त्री को साथ लेकर अथवा पुत्रों के पास छोड़कर स्वयं जन सेवा का व्रत लेकर वन में चला जाये और जितेन्द्रिय होकर रहै ।

सन्यास आश्रम में लोकषणा, वितषणा तथा पुत्रेषणा का परित्याग करके अत्यंत पवित्र और तपस्वी जीवन व्यतीत करते हुए ईश्वर प्राप्ति का प्रयत्न करना ही मनुष्य का उद्देश्य है।

v संस्कार:- आश्रम व्यवस्था और संस्कार जीवन की श्रृंखला की बड़ी और छोटी कड़ियां हैं। आश्रम जहां जीवन के विशाल मोड़ है , संस्कार उन विशाल मार्गों के बीच-बीच में आने वाले सौपान हैं। संस्कार के अनुष्ठानों द्वारा मानव जीवन को पुष्ट और पवित्र बनाये रखने के लिए समय-समय पर किये जाते हैं। प्रमुख रूप से 16 संस्कार मनुष्य के जीवन में होते हैं। जिनमें नामकरण, कर्णवेध, विद्यारम्भ, उपनयन, विवाह और अंतिम संस्कार सामान्य रूप से प्रचलित हैं।

vii. वर्ण व्यवस्था:- वर्ण व्यवस्था भिन्न-भिन्न समूहों को सम्पूर्ण समाज के विकास में सहायक होती है। जिनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्ध, वर्ण का आधार जन्म न होकर कर्म है। कर्म के आधार पर व्यक्ति को सम्मान प्राप्त होता है। लेकिन कुछ रूढ़ीवादियों ने अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए इसे जन्म के आधार पर थोपा। लेकिन आज योगयता के आधार पर इस भ्रम को तोड़कर कर्म आधारित व्यवस्था को अपनाया जा रहा है।

viii जाति प्रथा:- भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग जाति व्यवस्था है। आज भी अनेक आलोचनाओं और संवैधानिक नियमों के बावजूद जाति सामाजिक जीवन पर आघात किये हुए हैं। जाति में वैवाहिक, खान-पान, ऊंच नीच की भावना आज भी भारतीय समाज में विध्यमान है। जबकि आज शिक्षा के आधार पर जाति व्यवस्था के बंधन को तोड़ा जा रहा है लेकिन जाति का सांप समाज को जकड़े हुए है।

ix संयुक्त परिवार:- संयुक्त परिवार भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। बड़े बूढ़ों की सत्ता, संयुक्त जीवन, संयुक्त सम्पत्ति इत्यादि ने संयुक्त परिवार के माध्यम से ग्रामीण समुदाय की एकता को दृढ़ किया है। अनुशासन और संयुक्त मूल्यों का संरक्षण भारतीय संयुक्त परिवार की देन हैं यद्यपि आज आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण, नगरीकरण, औद्योगिकरण तथा प्रजातांत्रिक प्रक्रियाओं के प्रभाव से भौतिकवादी प्रवतियां ने संयुक्त परिवार पर कुठारघात किया है।

23.5.3 शिक्षा और संस्कृति परिवर्तन की भूमिका Introduction of Education and Culture Change

प्राचीन भारत में माता-पिता का कर्तव्य था कि वे अपने बालकों को भारतीय संस्कृति और सभ्यता से परिचित कराएं और उन्हें जीवन उपयोगी शिक्षा प्रदान करें। चाणक्यनीति के तीसरे अध्याय में दूसरे श्लोक के भाव द्वारा संस्कृति से प्राप्त शिक्षा का सामान्य स्वरूप परिलक्षित होता है।

‘‘आचारः कुलमाख्याति देशभाख्याति भाषणम्!

सम्भ्रमः स्नेहभाख्याति वपुराख्याति भोजनम्।।’’

अर्थात आचार द्वारा कुल का परिचय मिलता है , बोली से देश का ज्ञान होता है, आदर के द्वारा प्रेम का परिचय मिलता है और शरीर तथा तेज को देखकर भोजन का पता चलता है।

उपरोक्त श्लोक में कुल, देश और भोजन को परखने की नीति स्पष्ट की है, परन्तु इस नीति में छात्र को सांस्कृतिक शिक्षा मिलती है। वह यह सीखता है कि कुल को प्रशासित करने के लिए सदाचरण करना चाहिए क्योंकि आचरण से कुल जाना जाता है। भाषा द्वारा देश जाना जाता है। अतः हमें अपनी राष्ट्रभाषा को अपने व्यवहार का योगदान देकर उसका अंग बनाना चाहिए। यदि हमें किसी को अपने प्रेम का परिचय देना है तो उसके प्रति आदर तथा स्नेह का भाव प्रदर्शित करना चाहिए। उत्तम सात्विक भोजन करके शरीर को पुष्ट और तेजवान बनाना चाहिए। जिससे हमारे भोजन का परिचय मिल सके। उपयुक्त शिक्षा पूर्णतः सांस्कृतिक शिक्षा है। संस्कृति व शिक्षा दोनों का यह कार्य है कि वह मनुष्य का चतुर्मुखी विकास करें।

23.5.4 शिक्षा पर संस्कृति का प्रभाव(Influence of Culture on Education)

संस्कृति और शिक्षा परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बंधित हैं। संस्कृति का प्रभाव शिक्षा के सभी अंगों यथा-उद्देश्य, पाठयक्रम, शिक्षण विधि आदि पर पड़ता है। इसका वर्णन निम्न प्रकार है।

i संस्कृति का शिक्षा के उद्देश्यों पर प्रभाव (Influence of Culture on aims of Education)

शिक्षा के उद्देश्य समाज में प्रचलित आचार-विचार, दार्शनिक धाराओं, धार्मिक तत्वों, विश्वासों, मान्यताओं तथा आवश्यकताओं के आधार पर निर्मित होते हैं। यह स्पष्ट है कि किसी भी समाज में शिक्षा के उद्देश्यों पर वहां की संस्कृति का पूर्ण प्रभाव परिलक्षित होता है।

ii संस्कृति का पाठयक्रम पर प्रभाव (Influence of Culture on Curriculum)

संस्कृति शिक्षा के लिए प्रचलित पाठयक्रम को भी प्रभावित करती है। इसका कारण समाज के उद्देश्यानुकूल ही पाठयक्रम का निर्धारण किया जाना है। पाठयक्रम के आधार तत्व शिक्षा के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर निर्धारित किये जाते हैं। दूसरे शब्दों में पाठयक्रम का निर्माण करते समय समाज में प्रचलित विचारों, विश्वासों, मूल्यों को ध्यान में रखना पड़ता है।

iii संस्कृति का विद्यालय पर प्रभाव (Influence of Culture on School)

विद्यालय को समाज का लघुरूप कहा जाता है। इसलिए विद्यालय पर समाज की संस्कृति का प्रभाव अवश्य पड़ता है। अर्थात विद्यालय समाज की संस्कृति के केन्द्र होते हैं। समाज के रीति-रिवाज, रहन-सहन के ढंग, फैशन, प्रवृतियां आदि यहां पर फलते-फूलते हैं। संस्कृति के अनुरूप ही विद्यालय में वातावरण का सृजन होता है।

iv. संस्कृति का शिक्षण-विधि पर प्रभाव (Influence of culture on Method of Teaching)

शिक्षण प्रक्रिया तथा शिक्षण विधि में समाज की विचारधाराओं के अनुसार परिवर्तन होता रहता है। जैसे पहले शिक्षा के अंतर्गत शिक्षक का स्थान प्रमुख था और बालक का स्थान गौण था।

उस समय शिक्षण विधि से दमनात्मक अनुशासन, अनुकरण एवं रहने की क्रिया पर अधिक बल दिया जाता था लेकिन आधुनिक समय में बालक की रूचियों पर अधिक ध्यान दिया जाता है।

v संस्कृति का अध्यापक पर प्रभाव (Influence of Culture on Teacher)

अध्यापक वस्तुतः समाज की संस्कृति का एक जीवन्त प्रतिक होता है। यह शिक्षण की युक्तियों द्वारा अपनी संस्कृति को फैलाता है। बालक उसके विचारों से प्रभावित होकर ही उसकी संस्कृति को अपनाते हैं। अध्यापक का व्यवहार उसके द्वारा दिया जाने वाला ज्ञान स्थान विशेष की संस्कृति के अनुरूप ही निर्धारित होता है।

vi संस्कृति का अनुशासन पर प्रभाव (Influence of Culture on Discipline)

अनुशासन पर समाज की संस्कृति का गहरा प्रभाव पड़ता है। समाज में प्रचलित व्यवस्था मूल्य, रहन -सहन, विचारधारायें, भौतिक सम्पन्नता आदि अनुशासन को प्रभावित करती है। अर्थात समाज में जैसी प्रवृतियां विधमान होती है अनुशासन उनसे पूर्णरूप से प्रभावित होता है।

23.5.5 शिक्षा का संस्कृति पर प्रभाव (Influence of Education on Culture)

संस्कृति पर शिक्षा के प्रभाव की विवेचना निम्न प्रकार हैः-

i संस्कृति की निरन्तरता को बनाये रखना (To Maintain Continuity of Culture)

किसी भी जाति के जीवित रहने के लिए आवश्यक है कि उसकी संस्कृति जीवित रहै । उसकी परम्परायें, प्रथायें, विश्वास और रीति-रिवाज जीवित रहै । क्योंकि यदि किसी जाति की संस्कृति नष्ट हो जाती है तब वह जाति भी समाप्त हो जाती है। शिक्षा जाति की संस्कृति या सांस्कृतिक परम्परा को बनाये रखने में महान योगदान देती है।

ii संस्कृति का विकास करना (To Develop Culture)

शिक्षा द्वारा संस्कृति का विकास निरन्तर होता रहता है। संस्कृति के विभिन्न तत्व होते हैं जैसे -भाषा, साहित्य, कला, संगीत आदि। व्यक्ति शिक्षा के माध्यम से इन तत्वों का विकास करता है।

iii संस्कृति के हस्तांतरण में सहायता करना (To Help in Transmission of Culture)

ओटावे के अनुसारः- ‘‘शिक्षा का एक कार्य समाज के सांस्कृतिक मूल्यों और व्यवहार के प्रतिमानों को उसे तरूण और समर्थ सदस्यों को हस्तांरित करना है।’’ शिक्षा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी संस्कृति, परम्पराओं को अगली पीढ़ी तक पहुंचाने में मदद करती है।

iv. संस्कृति का परिष्कार (Refinement of Culture)

समय के साथ-साथ संस्कृति के तत्व पुराने होते रहते हैं। अतः शिक्षा द्वारा उन अंधविश्वास, कुरीतियों, बुरे विचारों और बुरी प्रवृतियों को दूर किया जाता है। इससे संस्कृति परिष्कृत होती है। समय के साथ परिवर्तन लाने का कार्य विद्यालय बहुत सरलता से कर सकते हैं।

v व्यक्तित्व के विकास में सहायता करना (To Help in the Development of personality)

शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का विकास कना है। लेकिन इस उद्देश्य की प्राप्ति वह संस्कृति की सहायता से ही कर सकता है। शिक्षा बालक के व्यक्तित्व के विभिन्न अंगों जैसे- बौद्धिक, चारित्रिक, नैतिक आदि के विकास के लिए सांस्कृतिक उपकरणों में प्रयोग में लाती है। जिससे व्यक्तित्व का विकास होता है।

23.6 सारांश (Summary)

भारतीय समाज विश्व का सबसे प्राचीन समाज है। यहां भारतीय संस्कृति व परम्पराओं से समाज को गहरा लगाव है, जिसके कारण वह अपनी धार्मिक पवित्रता को बनाये हुए है। लेकिन इन सबके बावजूद आज विश्व में पर्यावरण, जनसख्यां, औद्योगिकरण, नगरीकरण आदि ने विश्व समाज को परिवर्तित करने में अपनी अहम भूमिका निभाई है। सामाजिक परिवर्तन में भी इन कारकों का प्रभाव पड़ा है। आज पुराने व कमजोर पड़े रीति रिवाजों को छोड़ हम आधुनिकीकरण व पश्चिमीकरण की संस्कृति को अपना रहै हैं। हम जातिवाद से ऊपर उठकर मानवतावाद की ओर बढ़ रहै हैं। हमारे इस पूण्य कार्य में शिक्षा व संस्कृति दोनों अमूल्य है हैं। शिक्षा ने आज समाज की व्यवस्था को सही दिशा देने में योगदान दिया है। आज शिक्षा के बल पर सामाजिक स्तर में परिवर्तन किया जा सकता है। सामाजिक परिवर्तन में अफ्रीका में डा. नेल्शन मंडेला ने 20 वर्ष तक जेल में रहने के बाद समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर समाज में समानता, भाईचारा, अन्तराष्ट्रीयता की भावना का संदेश विश्व को दिया।

अपनी उन्नति जानिए Check your Progress

प्र.1- पुरूषाथों की संख्या कितनी है?

प्र.2- शतपथ ब्राह्मण में किस ऋण का वर्णन किया गया है?

प्र.3- वानप्रस्थ आश्रम से पूर्व कौन सा आश्रम होता है?

प्र.4- वर्ण व्यवस्था को कितने भागों में बांटा गया है?

प्र.5- शिक्षा व संस्कृति एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं-

हॉ/नहीं

23.7 शब्दावलीः-

जैविक कारकः- जैविक कारक से हमारा अभिप्राय किसी समाज की जन्सख्या वृद्धि व कमी का प्रभाव सामाजिक परिवर्तन में सहायक होता है। मनुष्य का रहन सहन का स्तर आप के साधन, शिक्षा व्यवस्था व संस्कृति पर जैविक कारक प्रभाव डालते हैं।

औद्योगीकरणः- भारतवर्ष में औद्योगिकरण का श्री गणेश 1956 में हुआ। ़औद्योगिकरण ने ग्रामीण पुरूषों को शहरों की ओर पलायन, स्त्रियों की आर्थिक स्थिति में सुधार, रोजगार प्राप्ति से समाज में सामाजिक परिवर्तन तेजी से हुआ है।

सामाजिक परिवर्तनः- सामाजिक परिवर्तन से अभिप्राय समाज की संस्कृति, शिक्षा, रीतिरिवाज, व्यवहार, स्थिति परिवर्तन, समाज के मुखिया की स्थिति में परिवर्तन, परिवार का परिवर्तित रूप आदि है।

23.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

खण्ड एक

उत्तर. 1. वहिर्गामी, अन्तर्गामी, 2. भौगोलिक कारण, वातावरण कारक

3. खेल 4. भारत 5. वर्ष 1972 में 42वें संसोधन

खण्ड दो-

उत्तर- 1. सामाजिक संरचना, संस्कृति, व्यक्तित्व

2. नहीं 3. शिक्षा 4. मैकाइवर

खण्ड तीन-

उत्तर- 1. चार 2. मनुष्य ऋण 3. गृहस्थ आश्रम

4. चार 5. नहीं

23.9 सन्दर्भ (References)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

23.10 उपयोगी/ सहायक ग्रन्थ (Useful Books)

- 1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

- शोध पत्रिका, इन्टरनेट।

23.11 दीर्घ उत्तर वाले प्रश्न (Long Answer Types Questions)

प्र.1- भारत में सामाजिक संस्थाओं में समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है। इस पर टिप्पणी लिखें।

प्र.2- भारत के सामाजिक परिवर्तन में औद्योगिक बदलाव की भूमिका पर प्रकाश डालें।

प्र.3- भारत के सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करने वाले सांस्कृतिक कारक कौन-कौन से हैं? विस्तृत वर्णन किजिए।

प्र.4- शिक्षा का संस्कृति पर प्रभाव के कारणों को विस्तार से लिखिए।

प्र.5- संस्कृति का शिक्षा पर प्रभाव के कारणों को विस्तार से लिखिए।

प्र.6- शिक्षा सामाजिक परिवर्तन में किस प्रकार सहायक होती है। व्याख्या किजिए।

इकाई-24 शैक्षिक समानता के अवसर व शिक्षा में उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे, गुणात्मक, परिमाणात्मक व समता सम्बन्धी शैक्षिक पहलू (Issues of Equality of Educational Opportunity and Excellence in Education, Quality, Quantity and Equity related aspects of Education)

24.1 प्रस्तावना (Introduction)
24.2 उद्देश्य (Objectives)
भाग-एक (Part-I)
24.3 शैक्षिक समानता के अवसर व शिक्षा मे उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे, गुणवत्ता व संख्यात्तमकसम्बन्धी शैक्षिक पहलू व समता Issues of Equality of opportunity and Excellence in Education, Quality, Quantity and Equity related aspects of Education
24.3.1 शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ (Meaning of Equalization of Educational Opportunity)
24.3.2 भारत में शैक्षिक अवसरों की समानता (Equality of Educational Opportunities in India)
24.3.3 शिक्षा मं समानता व उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे (Equality in Education Opportunity and Excellence)
अपनी उन्नति जानिए (Check Your Progress)
भाग-दो (Part-II)
24.4 संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provision)
24.4.1 भारत में शिक्षा के अवसरों की विषमताएं
24.4.2 शैक्षिक अवसरों की समानता की आवश्यकता (Need of Equality of Educational Opportunities)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-तीन (Part-III)
24.5 भारत में गुणवत्ता व संख्यात्तमक सम्बन्धी शैक्षिक पहलू व समता उपाय

Quality, Quantity and Equity related aspects of Education in India
24.5.1 विश्व मानवीय अधिकार (World Human Rights)
अपनी उन्नति जानिए (Check Your Progress)
24.6 सारांश (Summary)
24.7 शब्दावली (Vocavolary)
24.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)
24.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)
24.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Books)
24.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

24.1 प्रस्तावना (Introduction)

समानता की धारणा जनतंत्रीय धारणा है। जनतंत्र स्वतंत्रता, समानता और शान्ति के तरीकों में विश्वास करता है। युद्ध और राजनैतिक अथवा अन्य प्रकार के तनावों के मध्य समाज की प्रगति नहीं हो सकती। जनतंत्र का यह विश्वास है कि पारस्परिक द्वेष, संघर्ष व तनाव की अवस्थाएं शान्तिपूर्ण ढंग से सुलझाई जा सकती हैं। युद्ध की अपेक्षा शान्ति की विजय अधिक चिरस्थायी है, इसमें जनतंत्र का पूर्ण विश्वास है। जनतंत्र सहयोग, सहिष्णुता, पारस्परिक आदान-प्रदान, न्याय और दृष्टिकोण की विशालता को सामाजिक समस्याओं के हल करने तथा अच्छे मानवीय सम्बंधों को स्थापित करने को महत्त्वपूर्ण मानता है। जनतंत्र विरोधी विचारों व दृष्टिकोणों की भिन्नताओं का अनादर नहीं आदर करता है। जनतंत्र का यह विश्वास है कि विचारों व दृष्टिकोणों के भेदों का आदर होना, यही उनके सामान्य लक्षणों और गुणों का मिलन होता है और विरोध समन्वय की ओर अग्रसर होता है।

स्वतंत्रता और समानता के सम्बंध में भ्रमपूर्ण विचार होने के कारण लोग बहुधा उनका गलत मतलब निकालते हैं और उनका दुरूपयोग करते हैं। इन दोनों का अर्थ लोग अपने स्वार्थवश गलत लगा बैठते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हम स्वयं अपने देश में ही देख रहे हैं कि स्वतंत्रता का कितना गलत अर्थ लगाया जा रहा है और उसका कितना दुरूपयोग हो रहा है। हम स्वतंत्रता को उच्छृंखलता समझ बैठे हैं। हम यही नहीं अनुभव करते कि ‘स्वतंत्र’ होना अपने ऊपर स्वयं द्वारा अधिक नियंत्रण चाहता है। परतंत्र होने में तो दूसरे का नियंत्रण हमें स्वीकार करना पड़ता है और यदि हम अपराध करते हैं तो हमें दण्ड भुगतना पड़ता है। स्वतंत्र होने पर हमें अपना नियंत्रण स्वीकार करना पड़ता है और यदि हम ऐसा नहीं करते तो उसके दुष्परिणाम हम को ही भोगने पड़ते हैं। नियंत्रण के बिना किसी भी प्रकार की व्यवस्था नहीं चल सकती,, चाहै वह नियंत्रण दूसरों का हो तो परतंत्रता की अवस्था

में होता है, और चाहै वह अपना हो तो स्वतंत्रता की अवस्था में होता है। यह मानव दृष्टिकोण की संकीर्णता और कठोरता है

वास्तविक स्वतत्रंता दोनों सिरों के मिलन बिन्दु पर है। स्वतंत्रता अनुशासनहीनता नहीं है बल्कि स्वतंत्रता दूसरों की स्वतंत्रता को खतरे में न डाल दें, यह आवश्यक है। जनतंत्रीय स्वतंत्रता इसी बीच के मिलन बिन्दु पर खड़ी है। जनतंत्रीय व्यवस्था के पैर दोनों ओर हैं और व दोनों पर चढ़कर ही चलती है, एक पर चढ़कर वह उसी प्रकार नहीं चल सकती जिस प्रकार एक पहिए पर गाड़ी नहीं चल सकती। इसी प्रकार के भ्रम समानता के सम्बंध में भी हैं और लोग इसका आशय अधिकारों और अवसरों तथा सुविधाओं के बाराबर बांटने से लगाते हैं चाहै कोई उनका लाभ उठा सके अथवा नहीं। सब मनुष्यों में एक सी शक्ति नहीं होती और सब लोग अवसरों व सुविधाओं से बराबर लाभ नहीं उठा सकते। अतः सबको बराबर बांट कर देने का परिणाम यह होगा कि कुछ उनका लाभ उठा सकेंगे और कुछ नहीं, कुछ उनका दुरूपयोग करेगे तो कुछ को अधिक अवसरों व सुविधाओं की आवश्यकता होगी। समता या समानता का आशय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को उतनी सुविधा या अवसर दिए जांए जिनका वह लाभ उठा सकें और यदि वह उनसे लाभ न उठा सके तो उसे वे उतनी मात्रा में न दिए जाएं। समानता का अर्थ सबके लिए समान नीति से है, सबको समान बनाने से नहीं।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना इस प्रकार है-

हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में ....एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मसमर्पित करते हैं। बाद में इसमें समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता भी जोड़ दिये गये।

यह प्रस्तावना हमारे राष्ट्रीय जीवन, राजनीति और शैक्षिक उद्देश्यों या मूल्यों को परिभाषित करने वाले शब्द-प्रतीक हैं।

24.2 उद्देश्य (Objectives)

(i) शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ जान सकेंगे।

(ii) शैक्षिक अवसरों की समानता व असमानता का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

(III) शैक्षिक अवसरों की प्राप्ति हेतु संवैधानिक प्रावधानों को जान सकेंगे।

(IV) विश्व मानवीय अधिकारों के बारे में समझ सकेंगे।

(V) भारत में शैक्षिक अवसरों की समानता की प्राप्ति के उपायों को समझ सकेंगे।

भाग-एक (Part-I)

24.3 शैक्षिक समानता के अवसर व शिक्षा मे उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे, गुणात्मक, परिमाणात्मक व समता सम्बन्धी शैक्षिक पहलू

शैक्षिक अवसरों की समानता का विचार लोकतंत्र की देन है। लोकतंत्र स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्तों पर आधारित है। यह सामाजिक न्याय का पक्षधर है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व का आदर करता है और प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के स्वतंत्र अवसर प्रदान करता है। लोकतंत्रीय इस भावना के आधार पर सर्वप्रथम 1870 में ब्रिटेन में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया गया और उसे सर्वसुलभ बनाया गया। भारत में इस प्रकार का विचार सर्वप्रथम ब्रिटिश शासन काल में उठा। 15 अगस्त, 1947 को हमारा देश स्वतंत्र हुआ और 26 जनवरी, 1950 को हमारे देश में हमारा अपना संविधान लागू हुआ। इस संदर्भ में हमारे संविधान में दो घोषणाऐं की गई हैं। संविधान के अनुच्छेद 45 में यह घोषणा की गई है कि राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से 10 वर्ष के अन्दर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों की अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करेगा और इसके अनुच्छेद 29 में यह घोषणा की गई है कि राज्य द्वारा पोषित अथवा आर्थिक सहायता प्राप्त किसी भी शिक्षा संस्था में किसी भी बच्चे को धर्म, मूल, वंश अथवा जाति के आधार पर प्रवेश से वंचित नहीं किया जाएगा। यह बात दूसरी है कि हम इसे अभी तक अपने सही रूप में अंजाम नहीं दे सके हैं। हमारे देश में इस समस्या पर सर्वप्रथम विचार किया कोठारी आयोग (1964-66) ने। उसने सुझाव दिया कि शैक्षिक अवसरों की समान सुविधा प्रदान करने के लिए सर्वप्रथम 6 से 14 आयुवर्ग के बच्चों की कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाए और किसी भी वर्ग के बच्चों की इस शिक्षा प्राप्त करने में आने वाली कठिनाइयों को दूर किया जाए।

24.3.1 शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ

MEANING OF EQUALIZATION OF EDUCATIONAL OPPORTUNITY)

शैक्षिक अवसरों की समानता का सामान्य अर्थ है देश के सभी बच्चों को बिना किसी भेद-भाव के शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर और समान सुविधाएं प्रदान करना। परन्तु समान अवसर और समान सुविधाओं के सम्बंध में विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत हैं। कुछ विद्वान शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर और समान सुविधाओं के अर्थ देश के सभी बच्चों के लिए एक समान शिक्षा अर्थात् समान पाठ्यक्रम से लेते हैं। आप ही विचार करें कि विविधता के इस देश भारत में ऐसा कैसे हो सकता है।

फिर सामान्य शिक्षा तो सबके लिए समान हो सकती है और होती भी है, परन्तु विशिष्ट शिक्षा तो बच्चों की रूचि, रूझान, योग्यता और क्षमता के आधार पर ही दी जा सकती है। इसके विपरीत कुछ विद्वान इसका अर्थ शिक्षा संस्थाओं के समान रूप से लेते हैं। वे सरकारी, गैरसरकारी और पब्लिक स्कूलों के भारी अन्तर को समाप्त करने के पक्ष में हैं। इनका तर्क है कि उसी स्थिति में सभी को शिक्षा के समान अवसर मिल सकते हैं। अन्यथा धनी वर्ग के बच्चे पब्लिक स्कूलों की अच्छी शिक्षा प्राप्त करते रहेंगे और निर्धन वर्ग के बच्चे सरकारी एवं गैर-सरकारी स्कूलों की निम्न स्तर की शिक्षा ही प्राप्त कर सकेंगे। शैक्षिक अवसरों की समानता से अर्थ शिक्षा की किसी भी स्तर पर सभी बच्चों को प्रवेश की सुविधा प्रदान करने से लेते हैं। इनका तर्क है कि शिक्षा मनुष्य का मौलिक अधिकार है। परंतु यह धारणा भी गलत है। अधिकार के साथ कर्तव्य जुड़ा होता है। समान अवसरों के पीछे समान योग्यता एवं समान क्षमता का भाव निहित है। जहां तक अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की बात है उसके अवसर तो सभी को सुलभ कराना आवश्यक है परन्तु उससे आगे की शिक्षा के अवसर योग्यता एवं क्षमता के आधार पर ही सुलभ कराने चाहिए।

24.3.2 शिक्षा मं समानता व उत्कृष्टता सम्बन्धी मुद्दे (Equality in Education Opportunity and Excellence)

समानता' शब्द से तात्पर्य उन समान परिस्थितियों से है, जिनमें सभी व्यक्तियों को विकास के समान अवसर प्राप्त हो सकें और सामाजिक भेदभाव का अंत हो सके तथा सामाजिक न्याय (Social Justice) के लक्ष्य की प्राप्ति भी सम्भव हो सके। प्रसिद्ध राजनीतिविद् प्रो. लास्की ने लिखा है- ''समानता का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए अथवा सभी को समान वेतन दिया जाए। यदि एक पत्थर ढोने वाले का वेतन एक प्रसिद्ध गणितज्ञ या वैज्ञानिक के समान कर दिया जाए तो इससे समाज का उद्देश्य ही नष्ट हो जायेगा। अतः समानता का अर्थ यह है कि विशेष अधिकार वाला वर्ग न रहै और सबको उन्नति के समान अवसर मिलें।''शैक्षिक अवसरों की समानता का तात्पर्य सभी के लिए समान शिक्षा नहीं है, बल्कि प्रत्येक बालक की शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक, नैतिक परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा प्रदान करना है। इसका तात्पर्य राज्य द्वारा व्यक्तियों की शिक्षा के संदर्भ जाति, रूप, रंग, प्रान्तीयता एवं भाषा, धर्म आदि के मध्य भेदभाव न करने से भी है।

शिक्षा (Education) के क्षेत्र में 'समानता' की अवधारणा को स्थापित करने के लिए निम्नलिखित प्रयास किये गये हैं –

(1) एक निश्चित अवधि तक भेदभाव रहित निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था।

(2) माध्यमिक स्तर पर विभिन्नीकृत पाठ्यक्रम व्यवस्था।

(3) उच्च स्तर पर सभी के लिए अपेक्षित शैक्षिक उन्नति की व्यवस्था ताकि वे उचित योगदान देने में सक्षम हो सकें।

24.3.3 शिक्षा में समानता के सूचक

शिक्षा के निम्नलिखित चार बातें समानता के सूचक कहै जा सकते हैं-

1. अधिगम की समानता- इसका सम्बंध प्रवेश के अवसर से सम्बद्ध है। समानता के आधार पर प्रवेश होना चाहिय। जाति, धर्म इसमें बाधक न हों। कुछ समय पहले भारतीय समाज में स्त्रियों एवं शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। यह अधिगम की विवशता थी। हिंदुओं की धूर्तता के कारण इस वर्ग के वच्चों को शिक्षा से वंचित रखा जाता था| यह हिंदु समाज के लिय सदियों तक कलंक के रूप में उनके माथे पर लगा रहेगा| इस असमानता को अब दूर करने का प्रयास किया जा रहा है। लेकिन आज भी समान शिक्षा का दिखावा हो रहा है| आज सरकारी व प्राइवेट शिक्षा के बीच गहरी खाई होती जा रही है|

2. उत्तरजीवितता की समानता- विद्यालय में प्रवेश में ही समानता न हो वरन् छात्र स्कूल में बना रहै , वह विद्यालय छोड़ न दे, इसके लिए भी समान अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। अनुसूचित जाति के बच्चे की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण वे बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं।

3.स्तर की समानता- एक निश्चित स्तर तक सभी बालक-बालिकाओं को बिना किसी भेदभाव के अनिवार्य शिक्षा मिले। निर्धन बालकों को विशेष सुंविधा दी जाए। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति वर्ग के अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक हो हो।

4. परिणाम की समानता- स्कूल छोड़ने के बाद प्रत्येक बच्चे को शिक्षा के आधार पर जीवन बिताने के समान अवसर सुलभ हों। यदि किसी वर्ग विशेष को अवसर की विषमता नजर आये तो उसे विशेष सुविधा देकर उसके लिए समान अवसर की सुलभता निश्चित की जाए। इसी सूचक के अन्तर्गत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति वर्ग के लिए नौकरियो में आरक्षण की निरन्तर व्यवस्था की जानी चाहिय। जब तक की इस समाज के निम्न स्थिति वाले व्यक्ति अपनी स्थिति में सुधार कर ले |

उपर्युक्त चारों सूचकों में किसी-किसी समाज में चारों, किसी में कुछ कम तो किसी में कुछ अधिक की उपस्थिति दृष्टिगोचर होती है। यह आवश्यक नहीं हैं कि चारों सूचक सदा समाज में विद्यमान ही रहें।

अपनी उन्नति जानिए (Cheque your Progress)

प्र. 1. शैक्षिक अवसरों की समानता पर सर्वप्रथम विचार किस आयोग ने किया था ?

(1) सैडलर आयोग (2) राधाकृष्णन आयोग

(3) मुदालियर आयोग (4) कोठारी आयोग

प्र. 2. कश्मीर प्रान्त में किस स्तर तक की शिक्षा निःशुल्क है ?

(1) प्राथमिक (2) माध्यमिक

(3) उच्च (4) सम्पूर्ण

प्र. 3. माध्यमिक स्तर पर गतिनिर्धारक विद्यालयों का प्रस्ताव किस राष्ट्रीय शिक्षा नीति में किया गया था ?

(1) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 (2) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1979

(3) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 (4) संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992

प्र. 4. आश्रम स्कूलों की व्यवस्था किन के लिए की जा रही है ?

(1) दूरदराज में रहने वाले लड़कों के लिए

(2) दूरदराज में रहने वाली लड़कियों के लिए

(3) दूरदराज में रहने वाले लड़के-लड़कियों के लिए

(4) दूरदराज में रहने वाले जनजाति के बच्चों के लिए

भाग-दो (Part-II)

24.4 संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provision)

भारतीय संविधान के निम्नलिखित अनुच्छेद महत्वपूर्ण हैं –

अनुच्छेद 15- धर्म, मूलवंश, जति, लिंग व जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव किसी भी भारतीय नागरिक के साथ नहीं बरता जायेगा।

अनुच्छेद 16- सरकारी नौकरियां सभी के लिए खुली होंगी तथा अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए विशेष सुविधाएं सुंरक्षित स्थानों के रूप में होंगी।

अनुच्छेद 19- प्रत्येक भारतीय नागरिक को व्यवसाय या धंधा करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 28- शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश के मामले में कोई भेदभाव किसी के साथ नहीं बरता जायेगा।

हिन्दुओं में अस्पृश्यता निवारण की दृष्टि से संविधान के निम्नलिखित अनुच्छेद द्रष्टव्य हैं-

अनुच्छेद 25- हिन्दुओं की सार्वजनिक, धार्मिक संस्थाओं के द्वारा समस्त हिन्दुओं के लिए खोलना।

अनुच्छेद 29- राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश कर किसी भी तरह से प्रतिबंध निषेध।

अनुच्छेद 46- इन जातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा और उनका सभी प्रकार के शोषण और सामाजिक अन्याय से बचाव।

अनुच्छेद 146- केन्द्र व राज्यों में अछूतों के कल्याण हेतु समाज कल्याण एवं अशासकीय संस्थाओं को खोलने पर बल दिया गया है।

अनुच्छेद 244- अनुसूचित जातियों के लिए प्रशासन सम्बंधी विशेष व्यवस्था की गयी है।

अनुच्छेद 330 व 335- संसद और विधान मण्डलों में अनुसूचित जातियों को विशेष प्रतिनिधित्व मिलेगा।

संविधान के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की देखभाल करने के लिए विशेष कमिश्नर की नियुंक्ति की जाए जो प्रतिवर्ष राष्ट्रपति को उनकी दशा के सम्बंध में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करे। इस महत्वपूर्ण पद पर एम0ए0 श्री कांत व सुप्रसिद्ध गांधीवाद व सामाजिक, मानव शास्त्री डा. एन. के बोस कार्य कर चुके थे। प्रतिवर्ष प्रस्तुत की जाने वाली कमिश्नर की रिपोर्ट में अनुसूचित जातियों व जनजातियों के जीवन में द्रुतगति से प्रभावपूर्ण परिवर्तन लाने के लिए कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये जाते रहै हैं। इन जातियों में परिवर्तन लाने के लिए अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की सुविधाओं को प्रदान करना हमारा पहला कर्तव्य है और स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में व्याप्त निरक्षरता को समाप्त करने के लिए अनिवार्य शिक्षा के प्रसार पर जोर दिया गया। इसके लिए संविधान में भी प्रावधान किया गया कि बालक-बालिकाओं को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाये।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 में प्रावधान है कि लोकतंत्र को सफल बनाने तथा उसकी सुरक्षा के लिए सभी नागरिक का शिक्षित होना अति आवश्यक है। लोकतंत्र वह शासन पद्धति होती है जिसमें सर्वोच्च सत्ता जनता के हाथ में होती है। अब लोकतंत्र के लिए सार्वजनिक मताधिकार होना

आवश्यक समझा जाता है और मताधिकार का समुचित प्रयोग करने के लिए मतदाता को कुंछ सामान्य शिक्षा देना परमावश्यक है।

24.4.1 भारत में शिक्षा के अवसरों की विषमताएं

शिक्षा अवसरों की विषमताओं की जटिलतओं के निन्नलिखित रूप में उल्लेख किया गया है-

1. ग्रामीण और नगरीय विभिन्नता- ''बुद्धि, नैतिक, न्याय और घनिष्ठता की दृष्टि से शिक्षा की व्यवस्था में बहुत अधिक असमानता है। यद्धपि जनसंख्या का तीन-चौथाई भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है, फिर भी उन्हें शिक्षा के लिए बहुत कम संसाधन प्राप्त हो रहै हैं। समृद्ध लोग शहरों में निजी रूप से चलायी जाने वाली अच्छी शिक्षण संस्थाओं का लाभ लेते हैं तथा ये ही व्यावसायिक शिक्षा संस्थाओं में अनारक्षित स्थानों के बहुत बड़े हिस्से पर अधिकार कर लेते हैं, जबकि ग्रामीण स्कूलों की अपेक्षाकृत दयनीय दशा के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों को बहुत बड़ी हानि उठानी पड़ती है।''

2. लिंग और जाति पर आधारित विषमता - ''लड़कियों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों ने पिछले दशक के दौरान उल्लेखनीय प्रगति की है। इसके उपरान्त भी वे शैक्षिक उपलब्धि के अंतिम सोपान पर हैं। बालिकाएं तो घर-गृहस्थी के कार्या में अपनी दत्तचिन्तता तथा सामाजिक कुरीतियों की शिकार होती हैं इनमें से अधिकांशतः पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी होने के कारण बाल्यकाल के कुपोषण, सामाजिक अकेलेपन की भावना, कार्य करने की खराब आदतें तथा बौद्धिक क्षमताओं के प्रति आत्मविश्वास अभाव के कारण समुचित विकास नहीं कर सकते। वे अपने को सामान्य धारा के छात्रों से सामंजस्य स्थापित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। इन मनोवैज्ञानिक दबावों के कुप्रभाव को समाप्त करने के लिए तथा उनकी योग्यताओं में बढोत्तरी करने हेतु एवं समाज की प्रमुख धारा में उन्हें समन्वित करने के लिए विशेष कार्यक्रम की आवश्यकता है।''

इन शैक्षिक विषमताओं का उल्लेख क्रमबद्ध ढंग से निम्नलिखित रूप में किया है -

(i) जिन स्थानों पर प्राथमिक, माध्यमिक या कॉलेज की शिक्षा देने वाली संस्थाएं नहीं हैं, वहां के बच्चों को वैसा अवसर नहीं मिल पाता, जैसा उन बच्चों को मिल पाता है, जिनकी बस्तियों में ये संस्थाएं उपलब्ध हैं।

(ii) इस देश के विभिन्न भागों में शैक्षिक विकासों में भारी असंतुलन देखने को मिलता है-एक राज्य और दूसरे राज्य के शैक्षिक विकासों में बहुत बड़ा अन्तर मौजूद है और एक जिले तथा दूसरे जिले के विकास में और भी बड़ा अन्तर देखने को मिलता है।

(iii) शिक्षा के अवसरों की विषमता का एक और कारण यह है कि जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गरीब है और बहुत थोड़ा भाग धनी। किसी शिक्षा-संस्था के समीप होते हुए भी गरीब परिवारों के बच्चों को वह अवसर नहीं मिलता, जो धनी परिवारों के बच्चों को मिल जाता है।

(iv) शिक्षा के अवसरों की विषमता का एक और बड़ा दुःसाध्य रूप विद्यालयों तथा कॉलेजों के अपने-अपने भिन्न स्तरों के कारण पैदा होता है। जब किसी विश्वविद्यालय या वृत्तिक कॉलेज जैसी संस्था में प्रवेश उन अंकों के आधार पर दिया जाता है, जो माध्यमिक स्तर की समाप्ति पर दी गयी सार्वजनिक परीक्षा में प्राप्त हुए हों और प्रवेश साधारणतया इसी आधार पर होता है, तब देहाती क्षेत्र के साधनहीन ग्रामीण विद्यालय में पढ़े छात्र के लिए यह कसौटी या मापदण्ड एक समान नहीं रहता।

(v) घरेलू पर्यावरणों के भिन्न-भिन्न होने के कारण भी भारी विषमताएं उत्पन्न होती हैं। देहात के घर या शहरी गन्दी बस्तियों में रहने वाले और अनपढ़ माता-पिता की संतान को शिक्षा पाने का वह अवसर नहीं मिलता, जो उच्चतर शिक्षा पाये हुए माता-पिता के साथ रहने वाली उनकी संतान को मिलता है।

(vi) भारतीय परिस्थितियों ने निम्नलिखित दो प्रकार की शैक्षिक विषमताओं को प्रमुख रूप से जन्म दिया है- (I) शिक्षा के सभी स्तरों पर तथा क्षेत्रों में लड़कों तथा लड़कियों की शिक्षा में भारी अंतर। (II) उन्नत वर्गों तथा पिछड़े वर्गों -अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के बीच शैक्षिक विकास का अन्तर।

24.4.2 शैक्षिक अवसरों की समानता की आवश्यकता

(Need of Equality of Educaitonal Opportunities)

आज पूरा संसार मानवाधिकार के प्रति सचेत है। संसार के सभी देशों में शिक्षा को मानव का मूल अधिकार माना है। किसी भी देश में सभी को शिक्षा प्राप्त करने की समान सुविधाएं होनी चाहिए। लोकतंत्रीय देशों में तो यह और भी अधिक आवश्यक है, बिना इसके लोकतंत्र अर्थहीन है। हमारे लोकतंत्रीय देश में तो इसकी और अधिक आावश्यकता है, कारण स्पष्ट है -

1. लोकतंत्र की रक्षा के लिए - लोकतंत्र की सफलता उसके नागरिकों पर निर्भर करती है, उसके नागरिकों की योग्यता और क्षमता पर निर्भर करती है और नागरिकों की योग्यता और क्षमता निर्भर करती है शिक्षा पर। अतः देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षित करना आवश्यक है। इस क्षेत्र में हमारे देश की स्थिति बड़ी चुनौतीपूर्ण है। पहली बात तो यह है कि इसकी जनसंख्या बहुत अधिक है और साधन अपेक्षाकृत बहुत कम हैं। दूसरी बात यह है कि देश की आधे से अधिक जनता निर्धन है, अपने बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करने में असमर्थ है। तीसरी बात यह है कि इसकी बहुसंख्यक जनता गांवों में रहती है, दूर-दराजों में रहती है। रेगिस्तान, पहाड़ी और जंगली क्षेत्रों में रहने वालों की बहुत बड़ी संख्या है। परिणाम यह है कि शिक्षा सर्वसुलभ नहीं है। अतः आवश्यक है कि हम उपेक्षित, निर्धन और दूर-दराज में रहने वालों को शिक्षा सुविधाएं प्रदान करें।

2. व्यक्ति के वैयक्तिक विकास के लिए - लोकतंत्र व्यक्ति के व्यक्तित्व का आदर करता है और प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के स्वतंत्र अवसर प्रदान करता है। और हमारे देश की स्थिति यह है कि इसकी आधे से अधिक जनसंख्या पिछड़ी है, निर्धन है, अच्छी शिक्षा से वंचित है। यदि हम सचमुच अपने देश के प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के अवसर प्रदान करना चाहते हैं तो पहली आवश्यकता यह है कि सभी को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर एवं सुविधाएं प्रदान करें।

3. वर्ग भेद की समाप्ति के लिए - स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले हमारे देश में शिक्षा उच्च वर्ग तक सीमित थी, परिणाम यह हुआ कि इस देश में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उच्च वर्ग का अधिकार बढ़ता गया और निम्न वर्ग के व्यक्ति और पिछड़ते गये और वर्ग भेद बढ़ता गया। लोकतंत्र इस प्रकार के सामाजिक और आर्थिक वर्ग भेद का विरोधी है। इस वर्ग भेद की समाप्ति के लिए सभी वर्गों के बच्चों एवं युवकों को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर एवं सुविधाएं प्राप्त कराना आवश्यक है।

4. समाज के उन्नयन के लिए - लोकतंत्र सामाजिक वर्ग भेद का विरोधी है, वह पूरे राष्ट्र को एक समाज मानता है और उसे सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज के रूप में विकसित करने में विश्वास करता है और यह तब तक संभव नहीं है जब तक देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षित नहीं किया जाता। इसके लिए हमारे देश में शैक्षिक अवसरों की समानता की बहुत आवश्यकता है।

5. राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए - किसी राष्ट्र का आर्थिक विकास दो तत्वों पर निर्भर करता है- प्राकृतिक संसाधन और मानव संसाधन। जहां तक प्राकृतिक संसाधनों की बात है यह तो प्रकृति की देन है, परन्तु मानव संसाधन का विकास शिक्षा द्वारा होता है। और जिस राष्ट्र में जितनी अधिक और उत्तम प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था होती है, वह राष्ट्र उतनी ही तेजी से आर्थिक विकास करता है। अतः आवश्यक है कि हम जिन बच्चों तक शिक्षा नहीं पहुंचा पा रहे हैं, उन तक शिक्षा पहुंचाएं, उनके मार्ग की कठिनाईयों को दूर करें। यही शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ है।

अपनी उन्नति जानिए(Cheque your Progress)

प्र. 1. सरकारी नौकरियां सभी के लिए खुली होंगी तथा अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए विशेष सुविधायें सुरक्षित स्थानों के रूप में होंगी -

(अ) अनुच्छेद 15 (ब) अनुच्छेद 16

(स) अनुच्छेद 28 (द) अनुच्छेद 29

प्र. 2. धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग व जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव किसी भी भारतीय नागरिक के साथ नहीं बरता जाएगा -

(अ) अनुच्छेद 15 (ब) अनुच्छेद 16

(स) अनुच्छेद 28 (द) अनुच्छेद 29

प्र. 3. राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी संस्था में प्रवेश कर किसी भी तरह से प्रतिबंध निषेध -

(अ) अनुच्छेद 16 (ब) अनुच्छेद 17

(स) अनुच्छेद 29 (द) अनुच्छेद 46

प्र. 4. अनुसूचित जातियों के लिए प्रशासन संबंधी विशेष व्यवस्था की गई है -

(अ) अनुच्छेद 46 (ब) अनुच्छेद 244

(स) अनुच्छेद 15 (द) अनुच्छेद 17

प्र. 5. लोकतंत्र को सफल बनाने तथा उसकी सुरक्षा के लिए सभी नागरिकों का शिक्षित होना आवश्यक है -

(अ) अनुच्छेद 44 (ब) अनुच्छेद 42

(स) अनुच्छेद 43 (द) अनुच्छेद 45

भाग-तीन (Part-III)

24.5 भारत में गुणवत्ता व संख्यात्तमक सम्बन्धी शैक्षिक पहलू व समता के उपाय Quality, Quantity and Equity related aspects of Education in India

शैक्षिक अवसरों की समानता के दो मुख्य पहलू हैं- पहला यह कि देश के सभी वर्गों और युवकों को बिना किसी भेदभाव के, किसी भी स्तर की, किसी भी शिक्षा से सुलभ कराना और दूसरा यह कि किसी भी वर्ग के बच्चों अथवा युवकों के किसी भी स्तर की, किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने में आने वाली बाधाओं का निवारण करना। हम यह भी देख रहै है कि जिस तेजी के साथ विधालय व कालेजो की संख्या मे बढोतरी हो रही है उतनी तेजी के साथ शिक्षा मे गुणात्मक वृद्धि नही हो रही। इसका कारण यह है शिक्षको द्वारा शोध कार्य व पठ्न-पाठन पर गम्भिरता पूर्वक ध्यान नही दिया जा रहा है जब तक शिक्षक व छात्र शोध कार्य तथा आज की तकनीकि के प्रति जागरुक नही होगे तब तक शिक्षा मे गुणात्तमकता की बात करना नाइंसाफी होगी।

कोठारी आयोग (1964-66) के सुझाव

(1) कक्षा 1 से कक्षा 8 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाए और इस लक्ष्य को दो पंचवर्षीय योजनाओं में प्राप्त किया जाए।

(2) प्राथमिक स्तर पर छात्रों को पाठ्यपुस्तकें, लेखन सामग्री और माध्यान्ह भोजन निःशुल्क दिया जाए।

(3) पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों की शिक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की जाए और कबीलों के बच्चों के लिए आवासीय आश्रम स्कूल खोले जाएं।

(4) मंद बुद्धि और विकलांग बालकों के लिए अलग से स्कूल खोले जाएं, इनमें विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की नियुक्ति की जाए।

(5) माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के निर्धन छात्रों को शुल्क मुक्त किया जाए।?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के प्रस्ताव

केन्द्र सरकार ने कोठारी आयोग के उपर्युक्त सुझावों के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में निम्नलिखित घोषणाएं कीं-

(1) ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में और अधिक स्कूल-कॉलेज खोले जाएंगे और इन क्षेत्रों के बच्चों और युवकों को सभी स्तरों की शिक्षा सुलभ कराई जाएगी।

(2) देश में सामान्य विद्यालय प्रणाली (Common School System) लागू की जाएगी, अर्थात् एक क्षेत्र में रहने वाले सभी वर्गो के बच्चे एक प्रकार के स्कूल में पढ़ेंगे, एक साथ पढ़ेंगे।

(3) पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और कबीलों के बच्चों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था की जाएगी और इनको आवश्यक आर्थिक सहायता दी जाएगी।

(4) मन्दबुद्धि और विकलांग बच्चों के लिए अलग से विद्यालय खोले जाऐंगे।

(6) पब्लिक स्कूलों में निम्न एवं निर्धन वर्ग के बच्चों के लिए स्थान आरक्षित किये जायेंगे और उनके लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के प्रस्ताव

(1) एक निश्चित कार्य योजना के अंतर्गत सर्वप्रथम कक्षा 1 से कक्षा 5 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाएगी और उसके बाद कक्षा 6 से 8 तक की शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क की जाएगी और यह लक्ष्य 1995 तक प्राप्त कर लिया जाएगा।

(2) पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग, अनुंसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और कबीलों आदि उपेक्षित वर्ग के बच्चों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था की जाएगी।

(3) उपेक्षित वर्ग के बच्चों को आर्थिक सहायता दी जाएगी, इनके लिए विशेष छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जाएगी।

(4) मन्द बुद्धि और विकलांग बालकों के लिए अलग से स्कूल खोले जायेंगे।

(5) माध्यमिक स्तर पर गति निर्धारक विद्यालय (Pace Making Schools) खोले जाएंगे, इनमें उपेक्षित क्षेत्रों (ग्रामीण) और उपेक्षित वर्ग (अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति) के मेधावी छात्रों के लिए आवासीय निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।

24.5.1 विश्व मानवीय अधिकार (World Human Rights)

यू.एन.ओ. (यूनाइटेड नेशन्स ऑर्गनाइजेशन) तथा उसकी प्रमुख सहयोगी शाखा यूनेस्को (UNESCO) यूनाइटेड नेशन्स एजूकेशनल, साइन्टिफिक एण्ड कल्चरल ऑर्गनाइजेशन को इस दिशा में महान कार्य करने का श्रेय अन्तर्राष्ट्रीय विश्व संगठनों को जाता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने विश्व मानवीय अधिकारों के अंतर्गत निम्नलिखित क्षेत्रों में समान अवसरों की अवधारणा को स्वीकार किया है -

(1) नागरिक अधिकार (**Civil Rights**) - मानवीय अधिकारों की घोषणा में विश्व के प्रत्येक नागरिक को निम्नलिखित अधिकार प्रदान किये गये है -

(1) सभी प्राणी जन्म से स्वतंत्र हैं तथा वे आत्म-सम्मान एवं अधिकारों के संदर्भ में एक समान हैं।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को जीवन जीने का अधिकार है। साथ ही स्वतंत्रता एवं सुरक्षा का भी हकदार है।

(3) किसी भी व्यक्ति को नौकर या गुलाम बनाकर नहीं रखा जा सकता तथा गुलामी प्रत्येक दृष्टिकोण से निन्दनीय है। अतः उसे तत्काल प्रभाव से बन्द किया जाये।

(4) किसी भी व्यक्ति को यातनापूर्ण, बर्बर दण्ड प्रदान नहीं किया जा सकता।

राजनीतिक अधिकार - संयुक्त राष्ट्र के मानवीय अधिकारों की धारा 14, 15, 21 के अंतर्गत निम्नलिखित राजनीतिक अधिकारों की मान्यता दी गई है-

(1) प्रत्येक व्यक्ति अपने राष्ट्र की सरकार में सक्रिय सहभागिता कर सकता है। वह प्रत्यक्ष रूप में भी हो सकती है अथवा चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप में भी हो सकती है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रदत्त जन-सेवाओं का लाभ प्राप्त करने के लिए समान रूप से अधिकार है।

(3) किसी भी राष्ट्र में सरकार की स्थापना वहां के निवासियों की इच्छा शक्ति पर निर्भर करेगी। इसके लए आवर्ती चुनावों तथा गुप्त मतदान का सहारा लिया जा सकता है।

आर्थिक अधिकार - धाराएं 17, 22, 23, 24 तथा 25 आर्थिक रूप से स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए मानवीय अधिकारों की घोषणा करती हैं। संक्षेप में, उनका सार निम्नलिखित है -

(1) प्रत्येक व्यक्ति को अपनी संपत्ति रखने का अधिकार प्राप्त है। वह स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति की संपत्ति का नियोजन करे। किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से उसकी संपत्ति से वंचित करने का अधिकार नहीं है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है। इसके अंतर्गत प्रत्येक राष्ट्र को अपने नागरिक को सामाजिक जीवन-निर्वाह हेतु आर्थिक भत्ते की व्यवस्था करना अनिवार्य है, जबकि वह अशक्त, रोगी या बेरोजगार है।

(3) प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अधिकार है। साथ ही राष्ट्र को उसकी बेरोजगारी से रक्षा करने का अधिकार है।

(4) प्रत्येक व्यक्ति को समान कार्य हेतु समान वेतन प्राप्त करने का अधिकार है।

(सामाजिक अधिकार Social Rights) - मानवीय अधिकारों के घोषणा-पत्र में निम्नलिखित सामाजिक अधिकारों का उल्लेख किया गया है-

(1) राष्ट्रों द्वारा निर्धारित निश्चित आयु वर्ग में प्रत्येक युवक-युवती को पारस्परिक पसन्द से विवाह करके परिवार स्थापित करने का अधिकार है।

(2) परिवार किसी राष्ट्र एवं समाज की आधारभूत इकाई है। अतः उस राष्ट्र द्वारा उसकी सुरक्षा एवं परिपोषण की व्यवस्था करना अनिवार्य है।

(3) मातृत्व एवं बाल्यावस्था की देखभाल हेतु विशेष प्रयास करना प्रत्येक राष्ट्र का दायित्व है।

(4) प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है। इसलिए प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य रूप से शुल्क-मुक्त होनी आवशयक है।

सांस्कृतिक अधिकार - मानवीय अधिकारों की घोषणा में निम्नलिखित सांस्कृतिक अधिकारों का समावेश किया गया है-(1) प्रत्येक व्यक्ति अपने सामुदायिक क्रिया-कलापों में सहभागिता हेतु स्वतंत्र है। अन्य शब्दों मे प्रत्येक व्यक्ति अपने कला-कौशलों के माध्यम से आनन्द की अनुभूति कर सकता है तथा वैज्ञानिक उन्नति में सक्षम योगदान दे सकता है।

(2) प्रत्येक राष्ट्र के व्यक्ति को अपनी सांस्कृति धरोहर के संरक्षण, सम्प्रेषण तथा सुरक्षा का अधिकार है, चाहै यह वैज्ञानिक, वस्तुगत या साहित्यिक हो।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र. 1. निम्नलिखित में से किसका संबंध समानता से नहीं है ?

(अ) अल्पसंख्यकों की शिक्षा (ब) विकलांगों की शिक्षा

(स) प्रवेश के नियम (द) अधिगम पठार

प्र. 2. निम्नलिखित में से कौन-सा आदर्श संविधान की भूमिका में बाद में जोड़ा गया ?

(अ) स्वतंत्रता (ब) धर्मनिरपेक्षता

(स) समानता (द) बन्धुत्व

प्र. 3. निम्नलिखित में कौन-सा उपाय असमानता को दूर करने के लिए प्रभावी नहीं है ?

(अ) पूरक शिक्षा (ब) नया विश्वविद्यालय खोलना

(स) माध्यमिक विद्यालयों में वृद्धि (द) शिक्षा शुल्क में वृद्धि

24.6 सारांश (Summary)

1. यह सत्य है कि स्वतंत्रता के पश्चात् शैक्षिक सुविधाओं के प्रसार के पफलस्वरूप समाज के सभी वर्ग लाभान्वित हुए हैं, लेकिन अब भी वर्गीय विषमता विद्यमान है। अतः नयी शिक्षा-नीति ‘लाभ उठाने से अब तक वंचित वर्ग’ को उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शैक्षिक अवसरों की समानता उपलब्ध कराकर विषमताओं के उन्मूलन को कम किया जा सकता है।

2. पुरूषों के समान महिलाओं को भी शिक्षा की आवश्यकता है तथा इसे अर्जित करने का उन्हें अधिकार है। अतः महिलाओं की स्थिति में मूलभूत परिवर्तन लाने के उद्देश्य से शिक्षा के अभिकरण का उपयोग किया जाना चाहिए। चिरकाल से चली आ रही इस विसंगति के समुच्च्य को निष्प्रभावी बनाने हेतु महिलाओं के पक्ष में एक सुनियोजित कार्यक्रम विचारणीय है।

3 अनुसूचित जाति का एक विशाल समुदाय सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन से ग्रस्त है। यद्यपि विगत की अपेक्षा उनके शैक्षिक स्तर में सुधार आया है फिर भी 1981 की जनगणना के अनुसार अन्य वर्गों की अपेक्षा उनकी यह उपलब्धि आधी है

4 अनुसूचित जाति के शैक्षिक विकास में प्रमुख विचारणीय बात यह है कि उन्हें सभी आयामों में तथा शिक्षा के सभी क्षेत्रों और स्तरों के समान सुविधाएं उपलब्ध कराई जायें। यह कम से कम समय में केवल केन्द्र और राज्य स्तर पर सतत् संचारेक्षण तथा प्रभावी रणनीति के माध्यम से ही संभव हो सकता है।

(5) विद्यालय भवन तथा प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र ऐसे स्थान पर स्थापित हों, जहां ऐसे छात्रों के लिए आ सकने की सुविधा हो।

24.7 कठिन शब्द (Difficult Words)

जनतंत्र- जनतंत्र स्वतंत्रता, समानता और शान्ति के तरीकों में विश्वास करता है। युद्ध और राजनैतिक अथवा अन्य प्रकार के तनावों के मध्य समाज की प्रगति नहीं हो सकती ।

स्तर में अंतर- विभिन्न स्कूलों से आये बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि में अंतर होता है सबके मापदण्ड में अंतर होता है।

सामाजिक स्तरीकरण Social Stratifications - समाज के व्यक्ति जब अपने स्तर से उत्तर या निचे की ओर उन्मुख होते है तो इसे हम सामाजिक स्तरीकरण कहते है।

24.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

भाग-1 (PART-I)

उत्तर 1. कोठारी आयोग

उत्तर 2. सम्पूर्ण शिक्षा

उत्तर 3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986

उत्तर 4 दूर-दराज में रहने वाले लड़के-लड़कियों के लिए

भाग-2 (PART-II)

उत्तर 1 (ख) अनुच्छेद 16

उत्तर 2. (अ) अनुच्छेद 15

उत्तर 3. (स) अनुच्छेद 29

उत्तर 4 (ब) अनुच्छेद 244

उत्तर 5 (द) अनुच्छेद 45

भाग-3 (PART-III)

उत्तर 1 (द) अधिगम पठार

उत्तर 2 (ब) धर्मनिरपेक्षता

उत्तर 3 (द) शिक्षा शुल्क में वृद्धि

24.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (REFERENCE Books)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

24.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL Books)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

24.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

प्र. 1. शैक्षिक अवसरों की समानता से क्या तात्पर्य है ? आपकी सम्मति में अपने देश में शैक्षिक अवसरों की समानता की प्राप्ति के लिए क्या उपाय करने चाहिए ?

प्र. 2. शैक्षिक अवसरों की समानता से आप क्या समझते हैं ? हमारे देश में शिक्षा के क्षेत्र में किस प्रकार की असमानताएं हैं ? इन असमानताओं को कैसे दूर किया जा सकता है ?

प्र. 3. 'आज हमारे देश में शैक्षिक अवसरों की समानता के नाम पर वोट की राजनीति की जा रही है' इस कथन की विवेचना कीजिए।

प्र. 4. शैक्षिक अवसरों की समानता की पृष्ठभूमि की विवेचना कीजिए।

प्र. 5. शिक्षा में समानता के सूचक क्या हैं ?

प्र. 6. शैक्षिक अवसरों की समानता पर नई शिक्षा-नीति को स्पष्ट करिए।

प्र. 7. असमानता के कारक क्या हैं ?

इकाई 25: शिक्षा और लोकतंत्र, शिक्षा के संवैधानिक प्रावधान, राष्ट्रीयता और शिक्षा, उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीकरण, व सूचना और संचार तकनीक के युग में शिक्षा (Education and Democracy, Constitutional Provisions for Education, Nationalism and Education, Education in the Era of Liberalization, Privatization and Globalization (LPG) & Information and Communication Technology)

25.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION
25.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)
भाग-एक **(PART- I)**
25.3 लोकतंत्र और शिक्षा (EDUCATION & DEMOCRACY)
    25.3.1शिक्षा के लिए संवैधानिक प्रावधान (CONSTITUTIONAL PROVISION FOR EDUCATION)
    अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-दो **(PART- II)**
25.4 राष्ट्रीयता और शिक्षा (NATIONALISM & EDUCATION)
    25.4.1 शिक्षा और उदारीकरण (EDUCATION AND LIBERATIZATION)
    25.4.2 शिक्षा और निजीकरण (EDUCATION AND PRIVATIZATION)
    25.4.3 शिक्षा और भूमण्डलीकरण (EDUCATION AND GLOBLIZATION)
    अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)
भाग-तीन **(PART- III)**
25.5 सूचना और संचार तकनीक (COMMUNICATION TECHNOLOGY)

शैक्षिक तकनीकी में अद्यतन विकास (LATEST DEVELOPMENT OF EDUCATIONAL TECHNOLOGY)
अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)
25.6 सारांश (SUMMARY)
25.7 शब्दावली (GLOSSARY)
25.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)
25.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (REFERENCES)
2510 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL BOOKS)
25.11 निबन्धात्मक प्रश्न (ESSAY TYPE QUESTIONS)

25.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION)

भारत के संविधान का निर्माण संविधान सभा द्वारा बनाया गया, जिसमें एक प्रारूप समिति थी। जिनके अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी थे। जिन्होंने भारत को एक लिखित एवं विस्तृत संविधान प्रदान किया। संविधान सभा की प्रथम बैठक 9 दिसंबर, 1946 को हुई थी। सभा ने 26 नवम्बर, 1949 को संविधान को अंगीकार कर लिया। संविधान में प्रस्तावना के अलावा 1 से 10 अनुसूचियां, 1 से 395 धाराएं और एक परिशिष्ट है। संविधान के द्वारा भारत के सभी बालकों को शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार प्रदान किये गये। साथ ही शिक्षा ने वैश्वीकरण, निजिकरण व भूमण्डलीकरण के क्षेत्र में भी तेजी से विकास किया। आज हम शिक्षा को अपने ही देश में प्राप्त न कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी प्राप्त कर रहै हैं। शिक्षा ने सभी के लिए चतुर्मुखी द्वार खोल दिये हैं।

25.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

1. शिक्षा के संवैधानिक प्रावधानों का अध्ययन कर सकेंगे
2. शिक्षा और लोकतंत्र की व्यवस्था का अध्ययन कर सकेंगे
3. शिक्षा और उदारीकरण का अध्ययन कर सकेंगे
4. शिक्षा और निजीकरण का अध्ययन कर सकेंगे
5. शिक्षा और भूमण्डलीकरण का अध्ययन कर सकेंगे
6. सूचना और संचार तकनीक का अध्ययन कर सकेंगे

भाग-एक (PART- I)

25.3 शिक्षा व जनतंत्र (EDUCATION AND DEMOCRACY)

डी. वी. के विचारों का शिक्षा पर बड़ा प्रभाव पड़ा। शिक्षा-क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्ति धीरे-धीरे शिक्षा को जनतांत्रिक सिद्धान्तों पर आधारित करने लगे। शिक्षा में जनतांत्रिक विचारधारा निम्नलिखित रूपों में हमारे सामने आती है:-

1. शिक्षा में जाति, सम्प्रदाय और वर्ग के बंधन टूट रहै हैं।

2. शिक्षा की ज्योति सभी व्यक्तियों तक पहुंच रही है। शिक्षा मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।

3. उपर्युक्त सिद्धान्त के आधार पर एक निश्चित अवधि तक निःशुल्क, अनिवार्य एवं सार्वभौमिक शिक्षा की व्यवस्था हो रही है।

4. शैक्षिक अवसरों की समानता का सिद्धान्त बल पकड़ रहा है।

5. जनतंत्रीय शिक्षा में बालक को अधिकाधिक स्वतंत्रता प्रदान की जाती है।

6. पाठ्यक्रम को विस्तृत, लचीला एवं समाज की आवश्यकताओं के अनुकूल बनाने का प्रयत्न हो रहा है। पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार हो रहा है कि बालक उद्देश्य सहित क्रिया की ओर मुड़ सके।

7. पाठ्यक्रम के निर्माण में अध्यापक का हाथ होना चाहिए। अध्यापक के व्यक्तित्व का जनतंत्र में महत्व है।

8. प्रधानाध्यापक का अध्यापकों के साथ, अध्यापकों का छात्रों के साथ एवं इन सबका पारस्परिक संबंध समानता के आधार पर हो और विश्वविद्यालय की नीति के निर्माण में सभी का योगदान हो।

9. कक्षा-शिक्षण में भी जनतंत्र के सिद्धान्तों का पालन हो। छात्रों पर कम से कम नियंत्रण हो। अध्यापक छात्रों का इस प्रकार मार्गदर्शन करें कि वे स्वयं ज्ञान की खोज में अग्रसर हो सकें।

10. सीखने में सामाजिक तत्वों का विशेष महत्व है। अतः कक्षा में सामाजिक अनुभव अवश्य प्रदान किये जायें।

25.3.1 शिक्षा के संवैधानिक प्रावधान (CONSTITUTIONAL PROVISIONS FOR EDUCATION)

हमारे संविधान में शिक्षा संबंधी निम्न प्रावधान निहित हैं:-

1. अनिवार्य तथा निःशुल्क शिक्षा- संविधान की 45वीं धारा के अनुसार राज्य 14 वर्ष की आयु पूरी करने तक सभी बच्चों के लिए संविधान लागू होने से दस वर्ष के अंदर स्वतंत्र व अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने का प्रयत्न करेगा।

2. धार्मिक शिक्षा- संविद्यान की इक्कीसवीं धारा के अनुसार किसी धर्म विशेष के प्रचार के लिए कर या दान देने के लिए किसी व्यक्ति को बाध्य नहीं किया जा सकता है। धारा-28 (1) में कहा गया है कि पूरी तरह राज्य के धन से चलने वाली किसी शिक्षण संस्था में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी। धारा-22 (2) में कहा गया है कि सहायता प्राप्त या राज्य से मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं के किसी सदस्य को उस संस्था द्वारा चलाए जा रहै किसी धार्मिक अनुष्ठान में भाग लेने के लिए विवश नहीं किया जा सकता है। धारा-28 के अनुसार अन्य धर्मो के अनुयायियों को उनकी सहमति के बिना धार्मिक अनुदेशन नहीं देना चाहिए।

3. दृश्य सामग्री- धारा-49 में कहा गया है कि राज्य प्रत्येक स्मारक या संसद द्वारा राष्ट्रीय महत्व के घोषित स्थान व वस्तुओं का संरक्षण करे।

4. अल्पसंख्यकों की शिक्षा- धारा-30 के अनुसार अल्पसंख्यक समुदाय को मनपसंद शैक्षिक संस्थाएं स्थापित करने व उनका प्रशासन करने का अधिकार प्राप्त है व अनुदान देते समय इन विद्यालयों के साथ इस कारण भेदभाव नहीं किया जा सकता है कि वे धार्मिक समुदाय द्वारा संचालित हैं।

5. पिछड़े वर्ग की शिक्षा-पिछड़ों वर्गो की शिक्षा संबंधी संवैधानिक धाराएं व उनमें कही गई बातें निम्न हैं:

i. धारा-17- अस्पृश्यता निवारण व किसी भी रूप में अस्पृश्यता का प्रयोग वर्जित है।
ii. धारा-24- 14 वर्ष से कम आयु वाले किसी बच्चे को किसी फैक्ट्री,, खान या अन्य खतरनाक रोजगार में कार्य करने के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता है।
iii. धारा-23- मनुष्यों के क्रय-विक्रय व बेगार पर रोक लगी रहै गी।
iv. धारा-15- हिन्दुओं के सभी सार्वजनिक धार्मिक संस्थानों के द्वार पिछड़े वर्गो के लिए खुले रहेंगे।
v. धारा-16 व 335- राज्यों को सार्वजनिक सेवाओं में स्थान आरक्षित करने की छूट रहेगी।

vi. धारा-46- पिछड़ों वर्गो के शैक्षिक व आर्थिक हितों के उन्नयन तथा उन्हें सामाजिक अन्याय व सभी प्रकार के शोषण से सुरक्षा मिलेगी।

6. केन्द्र व राज्य के शैक्षिक दायित्व- भारतीय संविधान में केन्द्र व राज्य सरकार के शैक्षिक दायित्व का वर्णन किया गया है। केन्द्र सरकार शिक्षा सुविधाओं के समन्वय, उच्च वैज्ञानिक व तकनीकी शिक्षा के स्तरों के निर्धारण तथा हिन्दी व अन्य सभी भारतीय भाषाओं में शोध कार्य व उनकी अभिवृद्धि के लिए उत्तरदायी है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 1 प्रारूप समिति के अध्यक्ष कौन थे ?

प्र. 2 संविधान में कितनी अनुसूचियां हैं ?

प्र. 3 संविधान की धारा-45 का संबंध किससे है ?

प्र. 4 शिक्षा को संविधान की समवर्ती सूची में कब रखा गया ?

(A) 1949 (B) 1950 (C) 1971 (D) 1976

भाग-दो (PART- II)

25.4 राष्ट्रवाद और शिक्षा (NATIONALISM AND EDUCATION)

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार-''राष्ट्रीय एकता उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य देश-प्रेम के भाव जागृत करना हो।'' आयोग ने देश-प्रेम के संबंध में चार बातें बताई हैं:-

1. राष्ट्रीय हित के लिए व्यक्तिगत हित का त्याग।
2. देश की निर्बलताओं को स्वीकार करने की तत्परता।
3. व्यक्ति की योग्यतानुसार देश की सर्वोत्तम सेवा।
4. देश की सामाजिक और सांस्कृतिक उपलब्धियों का उचित मूल्यांकन।

25.4.1 शिक्षा और उदारीकरण (EDUCATION AND LIBERATIZATION)

शिक्षा को गुणात्मक और संघात्मक विकास के नाम पर समाज दो भागों में विभाजित सा हो गया है। आज शिक्षा, मेडिकल, इंजीनियरिंग, तकनीकि, व्यावसायिक शिक्षा में उदारीकरण तेजी से पनप रहा है। जहां शिक्षा कुछ वर्गो तक ही सीमित थी, वहां संविधान ने शिक्षा के द्वार सभी के लिए खोल दिए हैं। सरकारी व गैर सरकारी संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करना आसान हो गया है। यह सरकार की उदारीकरण की नीति का ही परिणाम है। सरकार व जनता यह समझ गयी है कि हमें आज शिक्षा पर धन खर्च करने की अधिक आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा पर खर्च किया गया धन कभी भी व्यर्थ नहीं जाता है। इसलिए अभिभावक अपनी कमाई का अधिकतर हिस्सा शिक्षा पर खर्च करते हैं, जिसको पूंजीपतियों ने इसे भांप लिया है। वे सरकार से लोन लेकर बड़े-बड़े संस्थान बना रहै हैं और छात्रों को उन संस्थानों में प्रवेश देकर उनसे मोटी रकम प्राप्त कर रहै हैं।

उदारीकरण से हमारा अभिप्राय शिक्षा के द्वार सभी लिए खोलना व सभी के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना है। अर्थात् सरकार द्वारा शिक्षा की उचित व मान्य व्यवस्था करना तथा इन संस्थानों को खोलने में ज्यादा आनाकानी न करना। भारत में सन् 1960 में इंजीनियरिंग संस्थानों के मामलों में निजी क्षेत्रों को 7 प्रतिशत सीटें प्राप्त होती थीं। आज उनको 86.40 प्रतिशत सीटें प्राप्त हैं। मेडिकल में 6.8 प्रतिशत से बढ़ाकर 40.9 प्रतिशत हो गया है। यही हाल माध्यमिक शिक्षा के लिए तैयार हो रहै बी.एड शिक्षण संस्थानों का है, जहां इनकी बाढ़ सी आ गयी है। सरकार द्वारा इन निजी संस्थानों को 50 प्रतिशत सीटें स्वयं भरने का अधिकार दिया गया है जो कि यह सरकार की उदारीकरण की नीति का ही परिणाम है।

25.4.2 शिक्षा और निजीकरण (EDUCATION AND PRIVATIZATION)

शिक्षा के गुणात्मक और संघात्मक विकास के लिए हम निजीकरण शिक्षा की ओर बढ़ रहै हैं। यदि निजीकरण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखें तो मैकाले मिनिट के माध्यम से ही भारत में शिक्षा में निजीकरण की व्यवस्था थी। यद्यपि उस समय निजीकरण के कारण कुछ अन्य थे। उस समय छनाई सिद्धान्त (Filture Theory) के माध्यम से शिक्षा को समृद्ध परिवारों तक सीमित किया गया तथा समृद्ध परिवारों को शिक्षित वर्ग से छानकर शिक्षा भारत के जन-साधारण तक पहुंचाने की कल्पना की गई जो न तो पूरी होने की संभावना थी न ही पूरी हुई। इसके विपरीत छनाई सिद्धान्त पूरे देश को दो भागों में विभक्त कर गया, एक समृद्ध शिक्षित वर्ग तथा दूसरा आरक्षित कमजोर वर्ग, जिसके परिणाम दूरगामी थे।

आज भारत सहित दुनिया के अधिकतर देश निजीकरण की शिक्षा को प्रोत्साहित कर रहै हैं। देश में आज सरकारी संस्थाओं या कालेजों के बजाय निजी संस्थान तेजी से अपने पांव पसार रहै हैं। चाहै वे प्राथमिक शिक्षण संस्थान हों अथवा उच्च शिक्षण संस्थान। ये संस्थान बिना मापदण्ड पूरा किये गली-मुहल्लों में खुल रहै हैं। जहां अग्रेजी माध्यम का बोर्ड लगाने भर मात्र से अभिभावकों को लूटा जा रहा है। अभिभावक भी लुटना चाहता है। आज अभिभावकों के मन में यह बात घर कर गई है कि

जिस विद्यालय, कॉलेज, संस्थान की जितनी ज्यादा फीस होगी वह उतना ही अच्छा होगा। पूंजीपति आज इस बात को भांप गये हैं और शिक्षा को ऊंचे दामों में बेच रहै हैं। आज लोगों के पास धन की कोई कमी नहीं है। धनी व्यक्ति धन के बदले निजी संस्थानों से डिग्रियां बटोरकर अच्छी खासी नौकरी भी प्राप्त कर रहै हैं। अतः शिक्षा के निजीकरण को रोका जाना अति आवश्यक है।

25.4.3 शिक्षा और भूमण्डलीकरण (EDUCATION AND GLOBALIZATION)

शिक्षा मानव का अमूल्य उपहार है, जिसको प्रत्येक मानव को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। शिक्षा आज अपने गांव या शहर की सीमाओं तक सीमित न रहकर वह राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रदान की जा रही है। पहले साधनों के अभाव के कारण लोग अपने आसपास के क्षेत्रों तक शिक्षा प्राप्त करते थे, लेकिन आज साधनों ने इस दूरी को कम कर दिया है। आज हम अपने ही राष्ट्र में न केवल शिक्षा प्राप्त करतें हैं बल्कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए अन्य देशों में भी जाते हैं। अनेक विदेशी छात्र भारत में शिक्षा प्राप्त कर रहै हैं। यह भूमण्डलीकरण का ही नतीजा है।

भूमण्डलीकरण से हमारा अभिप्राय इस सम्पूर्ण संसार को एक सीमा में बांधना हैं। जिसके कारण हमारी संस्कृति का प्रभाव अन्य देशों को प्रभावित कर भारत की ओर आकर्षित करता है। भूमण्डलीकरण आज विशाल क्षेत्र न होकर सीमाओं में बंध गया है। आज न केवल धनी लोगों के ही बच्चे विदेशों में शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाते हैं, बल्कि आज जागरूक नागरिक का बच्चा भी छात्रवृत्तियाँ व बैंक से कर्ज लेकर विदेशी डिग्री प्राप्त कर रहा है।

इस शिक्षा के विकास में मुक्त विश्वविद्यालयों ने भी अपना अमूल्य योगदान दिया है। आज हम बैठे शिक्षा प्राप्त कर रहै हैं। भारत में इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय जो सन् 1985 में स्थापित हुआ था, आज विश्व में इसके अनेकों केन्द्र बन गए हैं, जो भूमण्डलीकरण का एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत कर रहा है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 1 ‘‘राज्य प्रत्येक स्मारक या संसद द्वारा राष्ट्रीय महत्व के घोषित स्थान व वस्तुओं का संरक्षण करे।’’ यह किस अनुच्छेद में कहा गया है ?

प्र. 2 किस अनुच्छेद में 14 वर्ष से कम बच्चे को काम पर रखने पर दण्ड का प्रावधान है ?

प्र. 3 राज्यों को सार्वजनिक सेवाओं में स्थान आरक्षित करने की छूट किस अनुच्छेद के अंतर्गत रहै गी ?

प्र. 4 भारत में जनतंत्रीय नागरिकता के विकास का शैक्षिक उद्देश्य किसने कहा-

(A) हन्टर कमीशन (B) सैडलर कमीशन

(C) मुदालियर कमीशन (D) संस्कृत कमीशन

25.5 सूचना और संचार तकनीक (INFORMATION AND COMMUNICATION TECHNIQUES)

शैक्षिक तकनीक में अद्यतन विकास (LATEST DEVELOPEMENT IN EDUCATION TECHNOLOGY)

शैक्षिक तकनीक के घटक निम्नलिखित हैं:-

1. डायल पहुंच (Dial Access)

2. शैक्षिक टेलीविजन (Educational Television)

3. विडियो (Video)

4. अन्तःक्रियात्मक विडियो (Interactive Video)

5. विडियोटेक्स्ट (Videotext)

6. ई-मेल (E-mail)

7. कम्प्यूटर (Computer)

8. कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन (Computer Assisted Instruction)

1. डायल पहुंच (Dial Access) - डायल पहुंच का तात्पर्य शिक्षा में टेलीफोन नेटवर्किंग से है। डॉयल पहुंच के माध्यम से विद्यार्थी ऑडियो डिलीवर व्यवस्था एवं अपनी पसंद का निवेदन करते हैं। टेलीफोन करने वालों को वृहद पुस्तकालय एवं शिक्षा संबंधित ऑडियो कैसेट कार्यक्रमों की सुविधा मिल जाती है।

2. शैक्षिक टेलीविजन (Educational Television)- भारत में शैक्षिक टेलीविजन शिक्षा की लोकप्रिय पद्धति है। आप विभिनन स्तरों पर विशिष्ट शैक्षिक टेलीविजन कार्यक्रमों के संपर्क में आओगे। जैसे-केन्द्रीय शैक्षिक तकनीकी संस्था (CIET) एवं राज्य शैक्षिक तकनीकि संस्थान (SIET) द्वारा विकसित विद्यालय स्तरीय शैक्षिक टेलीविजन, विश्वविद्यालय अनुदान आयोगा (UGC) द्वारा महाविद्यालय स्तरीय देशव्यापक कक्षा-कक्ष कार्यक्रम, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (IGNOU) द्वारा विकसित दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम आदि। आपने निश्चित रूप से

दूरदर्शन राष्ट्रीय नेटवर्क द्वारा प्रसारित प्रौढ़ शिक्षा, कृषि विस्तार शिक्षा कार्यक्रम आदि से संबंधित विशिष्ट शैक्षिक टेलीविजन कार्यक्रम देखे होंगे। भारत में सेटलाइटों के सफल प्रक्षेपणों के माध्यम से प्रसारण के वैकल्पिक चैनल खोलने में सुविधा हो गयी है। शैक्षिक टेलीविजन द्वारा इन सुविधाओं का भरपूर उपयोग किया जाता है।

3. वीडियो (Video) - शिक्षा एवं प्रशिक्षण गतिविधियों में विडियो कार्यक्रमों का काफी प्रयोग बढ़ गया है। विशिष्ट विडियो कार्यक्रम अध्यापन कौशल के विकास, गतिविधियों के प्रदर्शन, विचारों के चित्रण में हमारी सहायता करते हैं। विद्यार्थी अपनी आवश्यकता एवं सुविधायुक्त विडियो कैसेटों का प्रयोग कर सकता है। विडियो कैसेट रिकार्डरों पर विडियो कार्यक्रमों को रिकार्ड करना एवं उनको देखना काफी लोकप्रिय है।

4. अन्तःक्रियात्मक विडियो (Interactive Video) - अन्तःक्रियात्मक विडियो के माध्यम द्वारा समीक्षक को प्रस्तुतकर्ता से अन्तःक्रिया करने की सुविधा प्राप्त होती है। टेलीविजन पटल पर विडियो लेखन के दौरान समीक्षक प्रश्न पूछ सकते हैं। उन्नत संचार तकनीक प्रस्तुतकर्ता एवं समीक्षक के मध्य दोनों ओर से अन्तःक्रिया को बढ़ावा देती है। प्रश्नों के उत्तर विडियो शिक्षक के द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। विद्यार्थी को टेलीविजन पटल, जो कि विडियो डिस्क से जुड़ा होता है, से स्वरूपित अन्तःक्रिया होती है।

5. विडियोटेक्स्ट (Videotext)- विडियोटेक्स्ट के अंतर्गत टेलीफोन लाईनों द्वारा जुड़े टेलीविजन रूटों के माध्यम से पाठ एवं रेखाचित्र ग्राफिक्स प्रस्तुत किये जाते हैं। दर्शक विडियोटेक्स्ट के माध्यम द्वारा प्रश्न पूछ सकता है। इन प्रश्नों का उत्तर पहले से ही कम्प्यूटर के पास संग्रहित होता है। विद्यार्थी के प्रश्नों के अनुसार उत्तर टीवी पटल पर आ जाता है। उदाहरण के लिए-एक दूरस्थ शिक्षा का विद्यार्थी खुले विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रमों, काउन्सलिंग समय, परिक्षाएं आदि के बारे में विशिष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहता है तो उसे इस तरह की सूचनाएं विडियोटेक्स्ट के माध्यम से प्राप्त हो सकती हैं।

6. ई-मेल (E-mail) - इलेक्ट्रानिक मेल को ईमेल के नाम से जाना जाता है। दूरसंचार संपर्क के प्रयोग द्वारा ई-मेल के माध्यम से आंकड़े, बिम्ब तथा जुबानी सूचनाएं भेजी जा सकती हैं। भेजने वाले के कम्प्यूटर से सूचना प्रारम्भ होकर एक या बहुत से प्राप्तकर्ताओं के कम्प्यूटर पर प्राप्त होती है। वे इन सूचनाओं को भू-मण्डल के किसी भी दूर-दराज के क्षेत्र में अपने कम्प्यूटर पर प्राप्त कर सकते हैं। ई-मेल के माध्यम से शिक्षकों, शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों तथा शैक्षणिक प्रशासकों को तीव्र सूचनाएं भेजी जा सकती हैं।

7. कम्प्यूटर (Computer) - यह इस युग की उन्नत तकनीकि की बहुत ही महत्वपूर्ण देन है। आप कम्प्यूटर का प्रयोग आंकड़ों को एकत्र करने, एक जगह से दूसरी जगह संदेश भिजवाने, विभिन्न

स्थितियों में आंकड़ों के परीक्षण आदि में कर सकते हैं। कम्प्यूटर में तीव्र स्मरण शक्ति, गणना क्षमता, बहुत सारे आंकड़ों के संग्रहण तथा समस्या समाधान की क्षमता होती है। शैक्षणिक स्थितियों में पाठ्यक्रम के विभिन्न चरणों में कम्प्यूटर आधारित निर्देशों का प्रयोग काफी लोकप्रिय हो गया है।

8. कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन (Computer Assisted Instruction)- कम्प्यूटर सहायतित निर्देश स्व-निर्देशन का लोकप्रिय तरीका है। स्व-निर्देशित पैकेजों को कम्प्यूटर में संग्रहित किया जाता है। विद्यार्थी कम्प्यूटर सहायतित निर्देशन के माध्यम द्वारा चरणगत रूप से अधिगम गतिविधियों के साथ आगे बढ़ता है। विद्यार्थियों को प्रतिक्रिया हेतु फीडबैक दिया जाता है, विद्यार्थी अपनी सुविधानुसार प्रगति कर सकता है। सामग्री प्राप्त कर सकता है तथा उसका चयन कर सकता है। वह स्वतंत्र रूप से निर्देशन स्तर का क्रम तय कर सकता है। प्रत्येक विद्यार्थी की प्रगति का मूल्यांकन किया जा सकता है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 1 यूजीसी (UGC) को पूर्ण रूप में लिखिए।

प्र. 2 इग्नू (IGNOU) को पूर्ण रूप में लिखिए।

प्र. 3 ई-मेल (E-Mail) को पूर्ण रूप में लिखिए।

प्र. 4 कम्प्यूटर का एक मुख्य कार्य बताईये।

25.6 सारांश (SUMMARY)

भारत एक लोकतांत्रिक देश है। यहां प्रत्येक व्यक्ति को अपना चतुर्मुखी विकास करने का मौका दिया गया है। संविधान द्वारा भारत के नागरिकों को शिक्षा संबंधी अनेक अधिकार प्रदान किये गये हैं। समय-समय पर अनेक शैक्षिक कार्यक्रम चलाकर समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास किया जाता है। आज शिक्षा सरकारी संस्थानों तक ही सीमित न रहकर वैश्वीकरण व निजीकरण की ओर बढ़ रही है और भूमण्डलीकरण के कारण एक देश के व्यक्ति अन्य देशों में शिक्षा प्राप्त करने हेतु जा रहे हैं। आज शिक्षा को धनी व सम्पन्न व्यक्ति धन के बल पर खरीद रहे हैं व उसको प्राप्त कर महंगे दामों में भी बेच रहे हैं, जिससे गरीब वर्ग पुनः पिछड़ रहा है। आज आवश्यकता है सरकारी कॉलेजों व संस्थानों पर ध्यान देने की, जिससे उनमें गुणात्मक वृद्धि कर योग्य नागरिकों का निर्माण किया जा सके।

25.7 शब्दावली (Glossary)

डायल पहुंच **(Dial Access)** - डायल पहुंच का तात्पर्य शिक्षा में टेलीफोन नेटवर्किंग से है। डॉयल पहुंच के माध्यम से विद्यार्थी ऑडियो डिलीवर व्यवस्था एवं अपनी पसंद का निवेदन करते हैं। टेलीफोन करने वालों को वृहद पुस्तकालय एवं शिक्षा संबंधित ऑडियो कैसेट कार्यक्रमों की सुविधा मिल जाती है।

ई-मेल **(E-mail)** - इलेक्ट्रानिक मेल को ईमेल के नाम से जाना जाता है। दूरसंचार संपर्क के प्रयोग द्वारा ई-मेल के माध्यम से आंकड़े, बिम्ब तथा जुबानी सूचनाएं भेजी जा सकती हैं।

25.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)

भाग-एक (PART- I)

उ. 1 डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी थे|

उ. 2 संविधान में 1 से 10 अनुसूचियां हैं|

उ. 3 अनिवार्य निःशुल्क सार्वभौम शिक्षा से|

उ. 4 1976

भाग-दो (PART-II)

उ. 1 अनुच्छेद-49

उ. 2 अनुच्छेद-24

उ. 3 अनुच्छेद-16 व 335

उ. 4 (C) मुदालियर कमीशन

भाग-तीन (PART-III)

उ. 1 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग |

उ. 2 इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय|

उ. 3 इलेक्ट्रानिक मेल |

उ. 4 तीव्र स्मरण शक्ति, गणना क्षमता, आंकड़ों का संग्रहण, समस्या समाधान की क्षमता आदि कम्प्यूटर के कार्य हैं।

25.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (References)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

25.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL BOOKS)

1. पाण्डे, (डॉ) रा. श. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. आगरा: अग्रवाल प्रकाशन.

2. सक्सेना, (डॉ) सरोज. *शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार*. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

3. मित्तल, एम.एल. (2008). *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक*. मेरठ: इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

4. शर्मा, रा. ना. व शर्मा, रा. कु. (2006). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.

5. सलैक्स, (डॉ) शी. मै. (2008). *शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय*. नई दिल्ली: रजत प्रकाशन.

6. गुप्त, रा. बा. (1996). *भारतीय शिक्षा शास्त्र*. आगरा: रतन प्रकाशन मंदिर.

सिंह (डॉ.), वीरकेश्वर प्रसाद (1999) प्रतिनिधिए राजनीतिक विचारकए दिल्ली नवप्रभात प्रिंटिंग प्रेस।

25.11 निबन्धात्मक प्रश्न (ESSAY TYPE QUESTIONS)

प्र. 1. जनतंत्र से आप क्या समझते हैं ? भारत में इसका उदय कैसे हुआ ?

प्र. 2. जनतंत्रीय समाज में शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिए ?

प्र. 3. भारतीय संवैधानिक व्यवस्था का विस्तार से वर्णन कीजिए।

प्र. 4. निजीकरण से आप क्या समझते हैं ? इसके बढ़ते विकास पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

प्र. 5. संविधान में प्राथमिक शिक्षा के लिए क्या प्रावधान किये गये हैं ? वर्णन कीजिए।

प्र. 6. कम्प्यूटर हमारे लिए कैसे उपयोगी सिद्ध हो रहा है ? विस्तृत वर्णन कीजिए।

इकाई 26: राष्ट्रीय ज्ञान आयोग एवं उच्च और मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा हेतु सुझाव

26.1 प्रस्तावना (Introduction)
26.2 उद्देश्य (Objectives)
26.3 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (National Knowledge Commission)
26.3.1 एनकेसी परामर्श
26.3.2 विचाराणीय विषय
26.3.3 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के उद्देश्य
26.4 उच्च शिक्षा (Higher Education)
26.4.1 उच्च शिक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की सिफारिशें
26.5 मुक्त और दूरस्थ शिक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की सिफारिशें
24.6 सारांश (Summary)
24.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)
24.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)
24.9 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

26.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के स्वरुपए आधारए उद्देश्यए उच्च शिक्षा मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली हेतु सलाहें दी गयी हेंए इनके बारे में चर्चा की गयी हैद्य राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने उच्च शिक्षा और मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में सुधार किस प्रकार आवश्यक है इन्हें किस प्रकार उत्कृष्ट बनाया जाये इस हेतु परामर्श और सिफारिशें की गयी हैंद्य इस इकाई के अध्ययन के बाद आप राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के विषय मेंए उसके कार्यए उच्च शिक्षा और मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में सुधार के विषय में बता सकेंगे|

26.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप-

.राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के स्वरुप, आधार, व उद्देश्य के बारे में बता पायेंगे|

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग द्वारा उच्च शिक्षा और मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली हेतु दी गयी सिफारिशों के बारे में जान जायेंगे||

. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के कार्यों और भूमिका से अवगत हो पायेंगे

26.3 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग

कोई भी राष्ट्र अपनी ज्ञान की पूंजी कैसे बनाता है और उसका कैसे उपयोग करता है उसके आधार पर यह तय होता है कि वह मानवीय क्षमताओं को बढ़ाने में अपने नागरिकों को सशक्त और समर्थ बनाने में कितना सक्षम है। अगले कुछ दशकों में दुनिया में युवाओं की सबसे बड़ी आबादी भारत में होगी। विकास की ज्ञान आधारित रणनीति अपनाने से इस युवा ऊर्जा का लाभ उठाने में मदद मिलेगी। भारत के प्रधानमंत्री डॉक्टर मनमोहन सिंह के शब्दों में अब समय आ गया है कि संस्थाओं के निर्माण का दूसरा दौर शुरू किया जाए और शिक्षा अनुसंधान और क्षमता निर्माण के क्षेत्र में उत्कृष्टता हासिल की जाए ताकि हम 21वीं शताब्दी के लिए अधिक ढंग से तैयार हो सके।श्

इसी विशाल कार्य को ध्यान में रखते हुए 13 जून 2005 को 2 अक्तूबर 2005 से 2 अक्तूबर 2008 तक तीन वर्ष के कार्यकाल के लिए राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन किया गया। भारत के प्रधानमंत्री की उच्चस्तरीय सलाहकार संस्था के रूप में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग को नीतिगत मार्गदर्शन तथा सुधारों के निर्देशन का अधिकार सौंपा गया है। उसे शिक्षा विज्ञान और टैक्नॉलॉजीए कृषि उद्योग ई.प्रशासन जैसे प्रमुख क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित करना है। ज्ञान की सहज सुलभता ज्ञान प्रणालियों की रचना और संरक्षण ज्ञान का प्रसार और बेहतर ज्ञान सेवाओं का विकास आयोग के मुख्य सरोकार है।

26.3.1एनकेसी परामर्श

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग जो भी सिफारिशें दे रहा है उनके लिए अधिक से अधिक लोगों की राय शामिल करने के लिए आयोग विविध विद्धानों और हितधारकों से व्यापक विचार.विमर्श करता है। उसके लिए आयोग ने कार्यदल और समितियों का गठन किया है अनेक कार्यशालाएँ और गोष्ठियाँ आयोजित की हैं और सर्वेक्षण कराए हैं। कार्यदल ऐसे क्षेत्रों में गठित किए गए है जिनमें उच्च स्तर पर विशेषज्ञों की लम्बे समय तक भागीदारी अपेक्षित है। गोष्ठियों कार्यशालाओं और चर्चाओं में व्यापक स्तर पर विचार.विमर्श करने में मदद मिलती है। सर्वेक्षणों के माध्यम से आयोग देश भर में अपना दायरा बढ़ाना चाहता है।

26.3.2 विचाराणीय विषय

13 जून को जारी सरकारी अधिसूचना के अनुसार राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के विचारणीय विषय इस प्रकार हैं|

- शिक्षा व्यवस्था में उत्कृष्टता लाना ताकि वह 21वीं शताब्दी में ज्ञान की चुनौतियों का सामना कर सके और ज्ञान के क्षेत्रों में भारत की स्पर्धा लेने की क्षमता बढ़ा सके।
- विज्ञान और टैक्नॉलॉजी प्रयोगशालाओं में ज्ञान की रचना को बढ़ावा देना।
- बौद्धिक संपदा अधिकारों से जुड़े संस्थाओं का प्रबंधन सुधारना।
- खेती और उद्योग में ज्ञान के उपयोग को बढ़ावा देना।
- सरकार को नागरिकों के लिए असरदार पारदर्शी और जवाबदेह सेवा प्रदान करने वाली संस्था का रूप देने में ज्ञान क्षमताओं के उपयोग को बढ़ावा देना और लोगों को अधिक.से.अधिक लाभ पहुँचाने के लिए ज्ञान के व्यापक प्रचार.प्रसार को बढ़ावा देना।

26.3.3 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के उद्देश्य

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का पहला उद्देश्य भारत को एक जोशीला ज्ञान आधारित समाज बनाना है। इसके लिए ज्ञान की मौजूदा प्रणालियों में बड़े पैमाने पर सुधार करने के साथ.साथ नए प्रकार के ज्ञान की रचना के लिए रास्ते तैयार करने होंगे। ज्ञान की रचना में समाज के सभी वर्गों की भागीदारी बढ़ाना और ज्ञान को सबके लिए समान रूप से सुलभ बनाना भी इन लक्ष्यों को हासिल करने के लिए महत्वपूर्ण है।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय ज्ञान आयोग उपयुक्त संस्थागत ढाँचा विकसित करना चाहता है जिससे

- शिक्षा व्यवस्था को मज़बूती मिले देश के भीतर अनुसंधान और अभिनव प्रयासों को बढ़ावा मिले तथा स्वास्थ्यए खेती और उद्योग जैसे क्षेत्रों में इस ज्ञान का आसानी से उपयोग किया जा सके।
- प्रशासन और संपर्क यानि कनेक्टिविटी को बढ़ाने के लिए सूचना और संचार तकनीकों का इस्तेमाल किया जाए।
- दुनिया भर में ज्ञान प्रणालियों के बीच सम्पर्क और आदान.प्रदान का तंत्र स्थापित हो सके।

अभ्यास प्रश्न

रिक्त स्थान भरिये.

1. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन .... को किया गया था।
2. सर्वेक्षणों के माध्यम से आयोग देश भर में अपना दायरा .... चाहता है।
3. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का पहला उद्देश्य भारत को एक जोशीला .... समाज बनाना है।

26.4 उच्च शिक्षा

भारत में उच्च शिक्षा का मतलब सेकेंडरी स्कूल से आगे की पढ़ाई है। उच्च शिक्षा के बारे में मध्यकालिक व्यापक उद्देश्य सकल भर्ती अनुपात को 2015 तक कम से कम 15 प्रतिशत तक बढ़ाना होगा। इसका अर्थ यह है कि अगले पाँच वर्ष के भीतर उच्च शिक्षा का दायरा दुगुने से भी अधिक फैलाना होगा। क्वालिटी को कमजोर किए बिना यह दायरा बढ़ाना होगा और शिक्षा का स्तर उठाना होगा तथा उच्च शिक्षा को ज्ञानवान समाज के आवश्यकताओं और अवसरों के लिए अधिक उपयोगी बनाना होगा। इस बात को भी व्यापक मान्यता मिल रही है कि उच्च शिक्षा को समाज के सभी वर्गों के लिए अधिक सुलभ बनाना ज़रूरी है।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग निम्नलिखित विषयों पर विचार कर रहा है|

- उच्च शिक्षा की मात्रा और क्वालिटी से जुड़े व्यवस्था संबंधी मुद्दे
- नियामक ढाँचाय
- उच्चा शिक्षा की सुलभता
- उच्च शिक्षा के लिए धन की व्यवस्था
- विश्वविद्यालयों का संस्थागत ढाँचा
- संचालन और प्रशासन
- पाठयक्रम और परीक्षा आदि का तंत्रय

26.4.1 उच्च शिक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की सिफारिशें

उच्च शिक्षा ने स्वतंत्र भारत के आर्थिक विकास, सामाजिक प्रगति और राजनीति लोकतंत्र को आगे बढ़ाने में उल्लेखनीय योगदान किया है। लेकिन इस समय चिंता का एक गंभीर कारण है। उच्च शिक्षा में प्रवेश करने वाले आयु वर्ग का हमारी जनसंख्या में अनुपात लगभग 7 प्रतिशत है। हमारे आबादी के बहुत बड़े हिस्से को उच्च शिक्षा की कोई सुविधा सुलभ नहीं है। इतना ही नहीं हमारे अधिकतर विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा का स्तर अपेक्षा से बहुत कम है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने

इस बारे में उच्च शिक्षा से जुड़े विभिन्न व्यक्तियों के साथ औपचारिक और अनौपचारिक विचार-विमर्श किया है। इसके अलावा इसने संसद, सरकार, समाज और उद्योग में संबद्ध व्यक्तियों के साथ भी परामर्श किया है। उच्च शिक्षा व्यवस्था को लेकर सब चिंतित हैं। सबका एक मत से यह स्पष्ट मानना है कि उच्च शिक्षा में आमूलचूल बदलाव की ज़रूरत है ताकि हम शिक्षा का स्तर गिराए बिना कहीं अधिक संख्या में विद्यार्थियों को शिक्षा दे सकें। ऐसा करना विशेष रूप से आवश्यक है, क्योंकि 21वीं शताब्दी में अर्थव्यवस्था और समाज का बदलाव काफी हद तक हमारे लोगों में शिक्षा के क्षेत्र में उसकी क्वालिटी, खासकर उच्च शिक्षा के प्रसार और उसकी क्वालिटी पर निर्भर करता है। सबको समाहित करने वाला समाज ही एक ज्ञानवान समाज की बुनियाद की व्यवस्था कर सकता है।

क. विस्तार-

अधिक विश्वविद्यालयों की स्थापना करनाः- उच्च शिक्षा व्यवस्था में अवसरों को बड़े पैमाने पर बढ़ाना ज़रूरी है। देश भर में करीब 1500 विश्वविद्यालय होने चाहिए, तभी भारत सन् 2015 तक कम-से-कम 15 प्रतिशत का सकल भर्ती अनुपात हासिल कर सकेगा। उच्च शिक्षा के लिए विनियमन का ढाँचा बदलनाः- उच्च शिक्षा के बारे में वर्तमान विनियमन व्यवस्था में कुछ महत्वपूर्ण कमियाँ हैं। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग समझता है कि उच्च शिक्षा के लिए एक स्वतंत्र विनियमन प्राधिकरण (आईआरएएचई) की स्थापना बेहद आवश्यक है। यह प्राधिकरण सरकार से एकदम अलग होना चाहिए और सरकार के संबंधित मंत्रालयों सहित सभी हितधारकों के प्रभाव से मुक्त होना चाहिएः

सार्वजनिक खर्च बढ़ाना और वित्त के स्रोतों में विविधता लानाः- उच्च शिक्षा की हमारी व्यवस्था का विस्तार तब तक संभव नहीं है, जब तक उसके लिए धन की व्यवस्था का स्तर न बढ़ाया जाए। धन की व्यवस्था सार्वजनिक और निजी दोनों स्रोतों से होने चाहिए। शिक्षा के अवसर बढ़ाने के साधन के रूप में शिक्षा में निजी निवेश बढ़ाना बहुत आवश्यक है।

50 राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना करनाः- राष्ट्रीय ज्ञान आयोग उच्चतम स्तर की शिक्षा दे सकने वाले 50 राष्ट्रीय विश्वविद्यालय स्थापित करने की सिफारिश करता है। इन विश्वविद्यालयों को बाकी देश के लिए मिसाल बनना चाहिए। इनमें विद्यार्थियों को मानविकी, समाज विज्ञान, मूल विज्ञानों, वाणिज्य और पेशेवर विषयों सहित विभिन्न विषयों में स्नातक और स्नातकोत्तर दोनों स्तरों पर प्रशिक्षण देना चाहिए। 50 का यह आँकड़ा दीर्घकालिक लक्ष्य है। अगले तीन वर्ष में कम-से-कम दस ऐसे विश्वविद्यालय स्थापित करना महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय विश्वविद्यालय दो तरीके से स्थापित किए जा सकते हैं। उन्हें या तो सरकार स्थापित करे या फिर कोई निजी प्रायोजक संस्था कोई सोसाइटी, परोपकारी ट्रस्ट या धारा-25 के अंतर्गत कंपनी बनाकर यह काम कर सकती है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का प्रस्ताव है कि राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों की भर्ती अखिल भारतीय स्तर पर की जाए।

वे आवश्यकता से बँधे दाखिले का सिद्धांत अपनाएँगे। इसके लिए ज़रूरतमंद बच्चों की मदद के लिए छात्रवृत्तियों की व्यापक व्यवस्था की ज़रूरत होगी। राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में तीन वर्ष के कार्यक्रम के अंतर्गत अवर स्नातक डिग्री विभिन्न पाठ्यक्रमों में अपेक्षित संख्या में प्राप्त अंकों के बाद दी जानी चाहिए। अतः शिक्षा वर्ष में सेमिस्टर की व्यवस्था होगी और हर कोर्स के अंत में शिक्षक ही अपने विद्यार्थियों का मूल्याँकन करेंगे। एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय से दूसरे राष्ट्रीय विश्वविद्यालय को अंकों का हस्तांतरण करना संभव हो सकेगा। इन राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में शिक्षकों की क्षमता को अधिकतम स्तर पर लाने के लिए नियुक्ति और प्रोत्साहनों की उपयुक्त व्यवस्था की आवश्यकता है। शिक्षण और अनुसंधान, विश्वविद्यालयों और उद्योग तथा विश्वविद्यालयों और अनुसंधान प्रयोगशालाओं के बीच मज़बूत संबंध स्थापित किये जाने चाहिए। राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में अलग-अलग विभाग होंगे, लेकिन वे किसी कॉलेज को मान्यता नहीं देंगे।

ख. उत्कृष्टता

मौजूदा विश्वविद्यालयों में सुधारः- उच्च शिक्षा में बदलाव लाने के प्रयासों के अंतर्गत मौजूदा संस्थानों में सुधार करना ज़रूरी है। कुछ आवश्यक कदम हैं-

-विश्वविद्यालयों को कम-से-कम 3 वर्ष में एक बार अपने पाठ्यक्रम में संशोधन और फेर-बदल करना ज़रूरी होना चाहिए।

-विश्वविद्यालयों में एक बार फिर अनुसंधान को बढ़ावा दिया जाना चाहिए ताकि एक-दूसरे की पूर्ति करने वाले शिक्षण और अनुसंधान प्रयासों के बीच सामंजस्य हो सके। इसके लिए नीतिगत उपायों के साथ-साथ संसाधनों के आवंटन, पुरस्कार प्रणाली और सोच में भी बदलाव आवश्यक है।

- सीखने-सिखाने की प्रक्रिया के लिए आवश्यक सुविधाओं, जैसे, पुस्तकालय, प्रयोगशाला और कनेक्टिविटी की लगातार निगरानी करना और उसमें सुधार करना आवश्यक है।

- विश्वविद्यालयों के प्रबंध के मौजूदा ढाँचे में सुधार की बहुत अधिक आवश्यकता है, क्योंकि यह ढाँचा न तो स्वायत्ता की रक्षा करता है और न ही जवाबदेही को बढ़ावा देता है। बहुत कुछ किया जाना बाकी है, लेकिन दो महत्वपूर्ण बातों का जिक्र करना उचित होगा। सरकार को कुलपतियों की नियुक्तियों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दखल देना बंदकर देना चाहिए। यह काम तलाश की प्रक्रियाओं और उच्च कोटि के निर्णय पर आधारित होना चाहिए। यूनिवर्सिटी कोर्ट्स, विद्वत् परिषदों और कार्यकारी परिषदों के आकार और संरचना पर सबसे पहले फिर से ग़ौर किया जाना चाहिए, क्योंकि इनके कारण निर्णय लेने की प्रक्रिया धीमी होती है और कभी-कभी यह बदलाव में रूकावट बन जाते हैं।

क्वालिटी सुधारने को बढ़ावा देनाः- उच्च शिक्षा व्यवस्था को समाज के प्रति और स्वयं अपने प्रति जवाबदेह होना चाहिए। जवाबदेही बढ़ाने में ऐसी उच्च शिक्षा व्यवस्था के विस्तार की मुख्य भूमिका होगी, जो विद्यार्थियों को विकल्प दे और संस्थाओं के बीच स्पर्धा पैदा करे।

- सभी शिक्षा संस्थाओं के लिए यह अनिवार्य किया जाना चाहिए कि वे अपनी वित्तीय स्थिति, भौतिक संपत्तियों, प्रवेश के नियमों, शिक्षकों के पदों, शैक्षिक पाठ्यक्रम की सूचना के अलावा अपने प्रमाणीकरण के स्रोत और स्तर के बारे में पूरी जानकारी दें।

- विद्यार्थियों द्वारा पाठ्यक्रमों और शिक्षकों के मूल्याँकन के साथ-साथ शिक्षकों द्वारा शिक्षकों के मूल्याँकन को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

- उच्च शिक्षा व्यवस्था में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि उच्च शिक्षा की किसी भी व्यवस्था में विविधता और बहुलता तो होती ही है, इसलिए सब पर एक समान नीति लागू करने से बचना चाहिए। इस तरह की विविधता और अंतर की उपेक्षा करने या उससे बचने की बजाय बहुलता की भावना को समझना चाहिए।

ग. सबको शामिल करना

सभी योग्य विद्यार्थियों को शिक्षा सुलभ करानाः- अधिक अवसरों की रचना के माध्यम से शिक्षा समाज में सबको शामिल करने के लिए एक बुनियादी तंत्र है। अतः यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि किसी भी विद्यार्थी को वित्तीय कठिनाई के कारण उच्च शिक्षा पाने के अवसरों से वंचित न रहना पड़े। इसके लिए राष्ट्रीय ज्ञान आयोग निम्नलिखित उपायों का प्रस्ताव करता हैः-

- उच्च शिक्षा संस्थानों को आवश्यकता से बँधी प्रवेश नीति अपनाने के लिए बढ़ावा देना चाहिए। ऐसी नीति के अंतर्गत किसी भी विद्यार्थी को प्रवेश देने या न देने का निर्णय लेते समय उसकी वित्तीयस्थिति को ध्यान में रखना शिक्षा संस्थान के लिए गैर-कानूनी होगा। आर्थिक रूप से कम साधन संपन्न विद्यार्थियों और ऐतिहासिक तथा सामाजिक दृष्टि से वंचित समूहों के विद्यार्थियों के लिए विस्तारित राष्ट्रीय छात्रवृत्ति योजना होनी चाहिए और उसके लिए धन की कमी नहीं रहनी चाहिए।

ठोस कार्रवाईः- उच्च शिक्षा व्यवस्था का एक मुख्य लक्ष्य यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से कम साधन संपन्न विद्यार्थियों के लिए शिक्षा की सुलभता और अधिक कारगर ढंग से बहुत ज़्यादा बढ़ाई जाए।

शिक्षा की उपलब्धियों में विसंगतियाँ जाति और सामाजिक समूहों से तो संबद्ध हैं ही, लेकिन वे आमदनी, लिंग, क्षेत्र और निवास स्थान जैसे अन्य संकेतकों से भी गहराई से जुड़ी हुई हैं। ऐसा सार्थक और व्यापक ढाँचा विकसित करना जरूरी है जो मौजूदा भिन्नताओं के विविध आयामों का

समाधान करे। उदाहरण के लिए विद्यार्थियों को अधिक अंक देने के लिए वंचना सूचकांक का इस्तेमाल किया जा सकता है और स्कूल परीक्षा में किसी विद्यार्थी के अंकों के पूरक के रूप में संचित अंकों का उपयोग किया जा सकता है।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की सिफारिशों पर अमल के लिए तीन विभिन्न स्तरों पर कार्रवाई करनी होगीः मौजूदा व्यवस्थाओं के भीतर सुधार, नीतियों में बदलाव और मौजूदा कानूनों या विधानों में संशोधन या नए कानून बनाना। प्रस्तावित परिवर्तनों को भी तीन अलग-अलग स्तरों पर लागू करना होगाः विश्वविद्यालय, राज्य सरकारे और केन्द्र सरकार।

अभ्यास प्रश्न

रिक्त स्थान भरिये.

1. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का उद्देश्य सकल भर्ती अनुपात को कम से कम .... तक बढ़ाना है।
2. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग उच्चतम स्तर की शिक्षा दे सकने वाले .... स्थापित करने की सिफारिश करता है।
3. उच्च शिक्षा व्यवस्था को समाज के प्रति और स्वयं अपने प्रति .... होना चाहिए।

26.5 मुक्त और दूरस्थ शिक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की सिफारिशें

दूरस्थ शिक्षा को साधारणतया, शिक्षा की उस प्रणाली के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें शिक्षार्थी को दूर स्थान से शिक्षा प्रदान की जाती है। इसमें दो मूल तत्व निहित हैं- शिक्षक और शिक्षार्थी की शारीरिक रूप से दूरी और शिक्षक की परिवर्तित भूमिका।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (एनकेसी) ऐसा मानता है कि उच्चतर शिक्षा में विस्तार, समावेशन और उत्कृष्टता के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए मुक्त और दूरस्थ शिक्षा (ओडीई) की प्रणाली में जबरदस्त बदलाव लाए जाने जरूरी हैं। ओडीई केवल उन्हीं लोगों को शैक्षिक अवसर उपलब्ध नहीं कराती, जिन्होंने आर्थिक अथवा सामाजिक दबावों के कारण औपचारिक शिक्षा आधी कर बीच में छोड़ दी थी बल्कि स्कूली शिक्षा छोड़ने वाले ऐसे युवकों को भी शैक्षिक अवसर प्रदान करती है जोकि विश्वविद्यालयों की औपचारिक धारा में दाखिला पाने में असमर्थ हैं। ओडीई के स्तर में सुधार लाने तथा इसे समाज की जरूरतों के लिए और अधिक उपयुक्त बनाए जाने की सुस्पष्ट आवश्यकता मौजूद है। ओडीई में प्रौद्योगिकी के प्रयोग के माध्यम से उच्चतर शिक्षा में अवसरों का विस्तार करना समान रूप से महत्वपूर्ण है। ओडीई के विशाल स्तर पर विस्तार के बिना 2015 तक 15 प्रतिशत का सकल नामांकन अनुपात प्राप्त करना संभव नहीं होगा। इस प्रयास में हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ओडीई को परंपरागत क्लासरूम अधिगम की तुलना में घटिया माना जाता है। इस तरह की मान्यता और वस्तुस्थिति-दोनों में बदलाव लाए जाने की जरूरत है। हमें यह जरूर महसूस करना होगा कि

ओडीई केवल शैक्षिक आपूर्ति का एक माध्यम नहीं है, बल्कि ज्ञान के सृजन में प्रवृत्त एक एकीकृत विषयक्षेत्र है।

उपर्युक्त स्थिति के प्रकाश में आयोग ने इग्नू के पूर्व उप-कुलपति प्रोफेसर राम तकवले की अध्यक्षता में इस क्षेत्र में लब्धप्रतिष्ठ विशेषज्ञों से युक्त एक कार्यदल का गठन किया। इस कार्यदल द्वारा प्रदत्त इन्पुटों और हितधारकों के साथ परामर्श के आधार पर आयोग ने निम्नानुसार सिफारिशें की-

1. ओडीई संस्थानों के नेटवर्क निर्माण के लिए राष्ट्रीय आईसीटी आधारिक-तंत्र का सृजन करे-सभी ओडीई संस्थानों के नेटवर्क निर्माण के लिए सरकारी सहायता के माध्यम से एक राष्ट्रीय सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) आधारिक-तंत्र अवश्य स्थापित किया जाना चाहिए। इस संबंध में हम यह सिफारिश करते हैं कि एनकेसी द्वारा प्रस्तावित डिजिटल ब्राडबैंड ज्ञान नेटवर्क में प्रमुख ओडीई संस्थानों को तथा पहले चरण में ही उनके अध्ययन केन्द्रों को परस्पर जोड़ने के लिए प्रावधान होना चाहिए। अंततः 2 एमबीपीएस की न्यूनतम संयोज्यता का विस्तार सभी ओडीई संस्थानों के अध्ययन केन्द्रों तक किया जाना जरूरी है। एक राष्ट्रीय आईसीटी अवलंब, ओडीई में सुलभता और ई-अभिशासन का संवर्द्धन करेगा और सभी विधियों के बीच अर्थात मुद्रित, श्रृव्य-दृश्य और इंटरनेट-आधारित मल्टीमीडिया में ज्ञान का प्रसार करा सकेगा।

2. वेब-आधारित सामान्य मुक्त संसाधन विकसित करने के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा प्रतिष्ठान की स्थापना करें-उच्च स्तरीय शैक्षिक संसाधनों का एक वेब-आधारित कोष विकसित करने के लिए समुचित निधियों की एकबारगी उपलब्धता सहित एक राष्ट्रीय शैक्षिक प्रतिष्ठान अवश्य स्थापित किया जाना चाहिए। यह जरूरी है कि एक सहयोगात्मक प्रक्रिया, उच्चतर शिक्षा के सभी प्रमुख संस्थानों के प्रयासों और विशेषज्ञता को संचित करने के माध्यम से मुक्त शैक्षिक संसाधन (आईईआर) का आनलाइन सृजन अवश्य किया जाना चाहिए। ओईआर कोष ओडीई के माध्यम से चलाए जा रहै विभिन्न कार्यक्रमों के लिए शिक्षाशास्त्रीय साटवेयर की आपूर्ति करेगा और वह सभी ओडीई संस्थानों द्वारा प्रयोग के लिए उपलब्ध रहै गा। इस प्रयोजन के लिए एक ऐसा समर्थनकारी विधिक तंत्र, जोकि बौद्धिक कर्तव्य के साथ कोई समझौता किए बिना निर्बाध सुलभता उपलब्ध कराएगा, अवश्य स्थापित किया जाना चाहिए।

3. पाठ्यक्रम क्रेडिट प्रणाली में अंतरण प्रभावित करने के लिए एक क्रेडिट कोष स्थापित करें-

छात्रों को सभी ओडीई संस्थानों और विषय क्षेत्रों में भाग लेने योग्य बनाने के लिए एक पाठ्यक्रम क्रेडिट प्रणाली में अंतरण जरूरी है। इस प्रक्रिया के एक अंग के रूप में प्रत्येक छात्र द्वारा अर्जित क्रेडिटों के भंडारण और पूर्ति के वास्ते एक स्वायत्त क्रेडिट बैंक अवश्य स्थापित किया जाना चाहिए।

4. ओडीई छात्रों का आकलन करने के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा परीक्षण सेवा स्थापित करें-

कानून के माध्यम से एक स्वायत्त राष्ट्रीय शिक्षा परीक्षण सेवा (एनईटीएस) अवश्य स्थापित की जानी चाहिए और उसे ओडीई में सभी संभावित स्नातकों का आकलन करने के लिए कार्यात्मक अधिकार तथा जिम्मेदारी सौंपी जानी चाहिए।यह एकीकृत परीक्षा प्रणाली बौद्धिक और प्रायोगिक कार्य करने में छात्रों की योग्यता जांच सकेगी। ओडीई के माध्यम से चलाए जा रहै सभी पाठ्यक्रम, डिग्रियां और क्रियाकलाप इस प्रणाली के माध्यम से प्रमाणित किए जाने चाहिए।

5. परंपरागत विश्वविद्यालयों के साथ अभिसरण को सुविधापूर्ण बनाएं-

मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा संचालित कार्यक्रमों तथा परंपरागत शैक्षिक संस्थानों के दूरस्थ शिक्षा स्कंधों द्वारा आयोजित पत्राचार पाठ्यक्रमों के बीच अभिसरण की कमी एक बड़ी चिंता का कारण है। मुक्त विश्वविद्यालयों को एक-दूसरे के प्रतिकूल समानांतर प्रणालियों के रूप में काम करने की बजाय एकसमान लक्ष्यों और कार्यनीतियों के प्रति लक्षित परंपरागत विश्वविद्यालयों के साथ संगठनात्मक तालमेल स्थापित करना चाहिए। परंपरागत विश्वविद्यालयों के भीतर कार्यरत दूरस्थ शिक्षा विभागों को आकलन के प्रयोजन के लिए, पत्राचार पाठ्यक्रमों को नेट्स के माध्यम से प्रस्तुत करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसके साथ-साथ विश्वविद्यालयों को भी यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके दूरस्थ कार्यक्रम अलग-थलग नहीं हैं बल्कि उन्हें संबंधित विषयक्षेत्रों में विश्वविद्यालय विभागों के साथ वैचारिक आदान-प्रदान से लाभान्वित होना चाहिए। इस तरह के अभिसरण का लक्ष्य अंततः यह होना चाहिए कि छात्रों को मुक्त रूप से एक प्रणाली से दूसरी प्रणाली में जाने के योग्य बनाया जा सके।

6. ओडीई में अनुसंधान क्रियाकलापों के समर्थन के लिए एक अनुसंधान प्रतिष्ठान की स्थापना करें-

ओडीई में एक बहु आयामी और बहुविषयक्षेत्रीय अनसुन्धान शुरू करे और उसे सुविधापूर्ण बनाने के लिए एक स्वायत्त तथा सुसमृद्ध अनसुन्धान प्रतिष्ठान स्थापित किया जाना चाहिए। इसके अलावा पुस्तकालय, डिजिटल डाटाबेसों और आनलाइन पत्रिकाओ जैसे आधारिक-तत्रं स्थापित करके, नियमित कार्यशालाएं और संगोष्ठियां आयोजित करके अनसुन्धान के लिए विश्राम छुटटी मजूंर करके, शोधकर्ताओ के लिए प्रकाशन के लिये मंच उपलब्ध कराने के प्रयोजन से एक समकक्ष समीक्षित पत्रिका स्थापित करके तथा अन्य ऐसे उपायो के माध्यम से अनसुन्धान के लिए एक अनुकूल वातावरण का सृजन अवश्य किया जाना चाहिए।

7. प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का कायाकल्प करें-

प्रशिक्षण और दिशा-अनुकूलन कार्यक्रमों की अवधारणा ऐसे बनाई जानी चाहिए कि प्रशिक्षक और प्रशासक, छात्रों की बहुविध रुचियों की पूर्ति करने के लिए प्रौद्योगिकी का प्रभावी प्रयोग करने की स्थिति में हो सकें। प्रशिक्षण माड्यूलों की अंतर्वस्तु को, स्व-अधिगम के सिद्धांतों और परिपाटियों से साथ घनिष्ठता को प्रोत्साहित करना चाहिए। उनकी आपूर्ति वेब-समर्थित, श्रृव्य-दृश्य और विशेषज्ञों,

व्यावसायिकों तथा समकक्षों के साथ नियमित आधार पर आमने-सामने के वैचारिक आदान-प्रदान सहित विभिन्न माध्यमों से की जानी चाहिए।

8. विशेष जरूरतों वाले छात्रों के लिए सुलभता बढ़ाएं-

विकलांग छात्रों और वरिष्ठ नागरिकों की जरूरतों की ओर ध्यान देने के लिए सभी ओडीई संस्थानों में विशेष शिक्षा समितियां गठित की जानी चाहिए। इन समितियों को ऐसे तंत्र तैयार करने चाहिए जिनसे उनकी सहभागिता सुनिश्चित हो सके और मानीटरन, नीतियों के मूल्यांकन तथा फीडबैक के संग्रह के लिए प्रभावी तंत्र उपलब्ध कराए जा सकें। दाखिला मानदंड और समय तालिकाएं अनिवार्यतः इतनी नमनशील होनी चाहिए कि विभिन्न प्रकार की विकलांगताओं वाले छात्रों और वरिष्ठ नागरिकों की कार्यक्रम अपेक्षाओं की पूर्ति करने के लिए बहुविध विकल्प उपलब्ध रहें। मुक्त शैक्षिक संसाधनों से प्राप्त शिक्षाशास्त्रीय साधन और घटक विशेष अधिगम जरूरतों के लिए वैकल्पिक फोरमेटों के अनुकूलन योग्य होने जरूरी हैं। उदाहरण के लिए इसमें दृष्टि विकलांग छात्रों के लिए ब्रेल, वर्ण वैषम्य पाठ्य सामग्री और ध्वनि रिकार्डिंग उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

9. ओडीई के विनियमन के लिए स्थायी समिति का सृजन करें

संप्रति, इग्नू के अधीन दूरस्थ शिक्षा परिषद (डीईसी) समूचे देश के भीतर ओडीई संस्थानों के लिए मानक निर्धारित करती है और निधियों का संवितरण करती है। एनकेसी का ऐसा मानना है कि यह व्यवस्था उपयुक्त और समुचित विनियमन उपलब्ध नहीं करा सकती। आयोग द्वारा प्रस्तावित उच्चतर शिक्षा के लिए स्वतंत्र विनियामक प्राधिकरण (आईआरएएचई) के तहत मुक्त और दूरस्थ शिक्षा पर एक स्थायी समिति का गठन करके एक नया विनियामक तंत्र अवश्य स्थापित किया जाना चाहिए। यह सांविधिक निकाय प्रत्यायन के लिए स्थूल मानदंड विकसित करने और साथ ही गुणवत्ता आश्वासन के लिए मानक निर्धारित करने के लिए जिम्मेदार होगा। यह निकाय सभी स्तरों पर पणधारियों और आईआरएएचई के प्रति जवाबदेह होगा और इसमें शिक्षा और विकास क्षेत्रों के साथ जुड़े हुए सरकारी, निजी और सामाजिक संस्थानों के प्रतिनिधि शामिल होंगे। इनमें ये शामिल हैं केन्द्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, निजी मुक्त विश्वविद्यालय, परंपरागत शिक्षा संस्थान और साथ ही ओडीई की आधारिक जरूरतों का अध्ययन करने के लिए स्थापित विशेषज्ञतापूर्ण निकायों केअध्यक्ष।

इसके अलावा स्थायी समिति के तत्वावधान के अधीन दो विशेषज्ञतापूर्ण निकाय स्थापित किए जाने चाहिएः-

i. दिशा-निर्देश देने, नमनशीलता सुनिश्चित करने तथा अनुप्रयोग में अद्यतन घटनाक्रम की खोज लेने के लिए आईटी क्षेत्र, दूरसंचार, अंतरिक्ष तथा उद्योग के प्रतिनिधियों से युक्त एक

तकनीकी सलाहकार समूह स्थापित किया जाना चाहिए। सबसे अधिक महत्वपूर्ण काम विभिन्न एजेसिंयों द्वारा विकसित अधिगम सामग्री का वर्गीकरण करने के लिए सामान्य मानक तैयार करना होगा जिससे कि सूचक बनाने, भंडारण, खोज तथा बहुविध कोषों के बीच बहुविध साधनों के माध्यम से सामग्री की पुन:प्राप्ति को समर्थन मिल सके।

ii. पाठ्यक्रम सामग्री पर मार्गनिर्देश उपलब्ध कराने और कोषों के विकास, सामग्री के आदान-प्रदान, छात्रों के लिए सुलभता तथा ऐसे ही अन्य मुद्दों के बारे में एक शिक्षाशास्त्रीय अंतर्वस्तु प्रबंध पर एक सलाहकार समूह का गठन किया जाना चाहिए। साथ ही मुक्त और दूरस्थ शिक्षा संबंधी स्थायी समिति मुक्त शैक्षिक संसाधनों पर राष्ट्रीय शैक्षिक प्रतिष्ठान, राष्ट्रीय शिक्षा परीक्षण सेवा (नेट्स) तथा क्रेडिट बैंक के लिए एक नोडल एजेन्सी के रूप में भी काम करेगी।

10. गुणवत्ता आकलन के लिए एक प्रणाली विकसित करें-

बाजारचालित अर्थव्यवस्था की स्थिति में नियोक्ताओं, छात्रों तथा अन्य पणधारियों द्वारा विश्वसनीय बाह्य मूल्यांकन को महत्व दिया जाता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए ओडीई प्रदान करने वाले सभी संस्थानों के स्तर का आकलन करने के लिए एक क्रम-निर्धारण प्रणाली अवश्य तैयार की जानी चाहिए और वह सार्वजनिक रूप से उपलब्ध होनी चाहिए। स्थायी समिति क्रम-निर्धारण मानदंड निर्धारित करेगी तथा यह कार्य करने के लिए आईआरएएचई द्वारा स्वतंत्र क्रम-निर्धारण एजेंसियों को लाइसेंस प्रदान किया जाएगा। इसके अलावा यह सिफारिश की जाती है कि प्रत्येक ओडीई संस्थान को यह सुनिश्चित करने के लिए कि सांविधिक गुणवत्ताअनुपालन की नियमित पूर्ति की जा रही है, एक आंतरिक गुणवत्ता आश्वासन सेल रखना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

रिक्त स्थान भरिये.

1. ओडीई केवल शैक्षिक आपूर्ति का एक माध्यम नहीं है, बल्कि ज्ञान के .... एक एकीकृत विषयक्षेत्र है।
2. एनकेसी द्वारा प्रस्तावित .... में प्रमुख ओडीई संस्थानों को तथा पहले चरण में ही उनके अध्ययन केन्द्रों को परस्पर जोड़ने के लिए प्रावधान होना चाहिए।
3. दूरस्थ शिक्षा परिषद (डीईसी) समूचे देश के भीतर ओडीई संस्थानों के लिए .... निर्धारित करती है।

26.6 सारांश

1. इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के स्वरुप आधार उद्देश्य और कार्यों के बारे में जान चुके होंगे उच्च शिक्षा मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में इसकी भूमिकाए अनुशंसाएए परामर्श के बारे में समझ गये होगें शिक्षण संस्थानों में सुधारए गुणवत्तापूर्ण शिक्षण उत्कृष्ट अध्यापन तकनीकियों का अभिनव प्रयोग भवन निर्माण नए विश्विद्यालयों का निर्माण विशेष छात्रों के लिए शिक्षण की उपलब्धता शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण इत्यादि आवश्कताओं से परिचित हो गए होगें।

26.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

भाग -1 (1) 13 जून 2005 (2) बढ़ाना (3) ज्ञान आधारित

भाग-2 (1) 2015 तक (2) 50 राष्ट्रीय विश्वविद्यालय (3) जवाबदेह

भाग -3 (1) सृजन में प्रवृत्त (2) डिजिटल ब्राडबैंड ज्ञान नेटवर्क (3) मानक

26.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- राष्ट्रीय ज्ञान आयोग पोर्टल

26.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के स्वरुप, उद्देश्य और कार्यों के बारे में आप क्या जानते हैं? समझाइये।
2. उच्च शिक्षा को उत्तम बनाने हेतु आयोग ने क्या परामर्श दिए हैं? बताईये।
3. मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा को प्रभावी बनाने के लिए आयोग ने क्या सुझाव दिए हैं? बताईये।